श्री राम जय राम जय जय राम

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति

स्मारिका

वर्ष - 31

विक्रमी संवत् 2081 (सन् 2024-2025)

卐 ॐ गं गणपतये नमः 卐

!! श्रीराम !!
श्रीराम जय राम जय जय राम

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुख मूल।।

सम्पादक मण्डल
पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा
डॉ0 भगवान दास पटैरया
श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'
श्री राजेश बैरागी, 'पत्रकार'

स्मारिका

विक्रमी संवत् 2081 सन् 2024–2025

वार्षिक अंक – 31

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

पंजीकृत कार्यालय : 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली –110061
स्थानीय कार्यालय : ए–447, सैक्टर –47, नोएडा –201 303
वेबसाइट –www.shriramcharit.com ई–मेल -contactus@shriramcharit.com
दूरभाष – 0120–3274619
चल – 9811056467

मुद्रक : **AAR PACK**
प्रिंटिंग एण्ड पैकेजिंग सोलूसन्स
G-24, सैक्टर 11, नोएडा–201301
फोन : 0120–4347256
ईमेल : **aarpacknoida@gmail.com**

पाठकों से निवेदन

स्मारिका का यह वार्षिक अंक–31 आपके हाथ में है। हमारा प्रयास रहा है कि इसमें भगवान श्रीरामजी के आदर्शों को प्रतिपादित करते हुए ऐसे लेख प्रकाशित किए जाएँ, जिनसे समाज में नैतिक मूल्यों का उत्थान हो। इस दिशा में हम कहाँ तक सफल हुए, यह आप ही बता सकते हैं। आशा करते हैं कि आप पत्रिका पढ़कर हमें अपना लेख / अपनी प्रतिक्रिया अवश्य भेजेंगे, ताकि हम अगले अंक में उसे समाहित कर सकें। लेख के संदर्भ में निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय हैं–

1. **लेख श्रीरामचरितमानस में वर्णित प्रसंगों पर तथा उसका शीर्षक यथासंभव चौपाई, दोहा आदि पर आधरित हो।**
2. लेख में उद्धरित दोहा–चौपाई आदि गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'श्रीरामचरितमानस' के अनुसार हों। कृपया संदर्भ निम्नांकित प्रकार से अंकित करें।

   जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।। (5/1/1)

   5/1/1 का आशय है, पाँचवें काण्ड (सुंदरकाण्ड) के पहले दोहे की पहली चौपाई। सातों काण्डों को क्रमशः इस प्रकार से इंगित करें :– 1. बालकाण्ड, 2. अयोध्याकाण्ड, 3. अरण्यकाण्ड, 4. किष्किंधाकाण्ड, 5. सुंदरकाण्ड, 6. लंकाकाण्ड एवं 7. उत्तरकाण्ड।
3. लेख bpateria@gmail.com पर अथवा 9899004263 पर whatsapp या A 447 सैक्टर–47, नोएडा–201303 पर डाक से भी भेज सकते हैं।

स्मारिका के प्रकाशन में विज्ञापन से प्राप्त धन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। अनुरोध है कि आप भी अपने संस्थान का विज्ञापन भेजकर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

विज्ञापन दरें इस प्रकार से हैं–

क्रमांक	विवरण	राशि (रुपयों में)
1.	प्रथम पृष्ठ के पीछे (दूसरा कवर पेज)	35,000
2.	अंतिम पृष्ठ (चौथा कवर पेज)	30,000
3.	अंतिम पृष्ठ के पीछे (तीसरा कवर पेज)	25,000
4.	पत्रिका के अन्दर पूर्ण पृष्ठ	15,000
5.	पत्रिका के अन्दर आधा पृष्ठ	10,000

पाठकों से प्राप्त सहयोग राशि का योगदान भी इसके प्रकाशन में सराहनीय है। इसे भेजने हेतु विवरण निम्नांकित है। ''श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति'' के नाम 'भारतीय स्टेट बैंक, सैक्टर 31, नोएडा की शाखा में चालू खाता सं0 35299035590, ब्रांच कोड : 15971, IFS Code : SBIN0015971 विज्ञापन–प्रकाशन राशि भी इसी खाते में जमा करा सकते हैं।

कृपया सहयोग राशि अथवा विज्ञापन–प्रकाशन राशि भेजकर हमें उपर्युक्त ईमेल या 09899004263 पर फोन या SMS करके सूचित करने का अनुग्रह करें, ताकि तदनुसार प्राप्ति रसीद जारी की जा सके।

अध्यक्ष की ओर से

प्रिय श्रीरामचरितमानस प्रेमियो!

आजकल हमारे देश में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में पाश्चात्य संस्कृति का तेजी से प्रभाव बढ़ रहा है। हम अपनी शिक्षा, व्यवहार, समाज के प्रति कर्तव्य, धर्म तथा सेवा भावना से विमुख होकर मानव–जाति का अहित कर रहे हैं। आज प्रेम और भाईचारे का स्थान हिंसा एवं वैमनस्य ने ले लिया है, जिसका प्रमुख कारण यह है कि अत्यधिक सांसारिक वैभवों को प्राप्त करने की होड़ लगी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में भी आपसी सद्भाव बढ़े, जन–जन में ईश्वरीय आस्था तथा भावी पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत हों, इसी उद्देश्य से 'श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति, नोएडा' की सन् 1990 में स्थापना हुई, जिसका अगस्त 2015 को श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति में विलय हो गया है। हमारा उद्देश्य श्रीरामचरितमानस पाठ एवं प्रवचनों के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामचन्द्रजी के पावन चरित्रों का प्रचार–प्रसार कर समाज एवं धर्म की सेवा करना है। इसके द्वारा हम सभी का कल्याण होगा।

यहां पाठकों के मन में यह शंका उठनी स्वाभाविक है कि भगवान श्रीकृष्ण का अवतार भी तो धर्मोत्थान के लिए हुआ था, फिर धर्म की सेवा करने के लिए भगवान श्रीराम के चरित्रों का प्रचार–प्रसार ही क्यों? भगवान श्रीकृष्ण की लीलायें अलौकिक हैं और रासलीला आदि कुछ लीलायें तो इतनी गूढ़ हैं कि आम आदमी की समझ से परे होने के कारण अनुकरण करने योग्य नहीं हैं, परन्तु भगवान श्रीराम की लीलायें अलौकिक होते हुए भी लौकिक हैं। साथ ही बहुत ही सहज, सरल और अनुकरणीय हैं। इसलिए वे सब साधारण के लिए ग्राह्य हैं। इस भाव को ध्यान में रखकर हम श्रीराम के चरित्रों का प्रचार–प्रसार करते आ रहे हैं।

यह समिति अपने स्थापना काल से दिसम्बर 2023 तक 542 मानस पाठ, प्रवचनों आदि के कार्यक्रम आयोजित करा चुकी है। इसी कड़ी में अब तक अनेक विख्यात कथाकारों जैसे– संत प्रवर श्री विजय कौशलजी महाराज, रामभक्त पं0 मधुकरजी, श्री लक्ष्मीनारायण शर्माजी, डॉ0 पं0 रामगोपाल तिवारी, पं0 बलराम मिश्रजी, आचार्य पं0 बैजनाथ शुक्ला, श्री श्री 1008 श्री प्रेमाचार्यजी, श्री बैजूनाथजी महाराज, आचार्य श्यामसुंदर शरणजी, गोस्वामी रमाकांत चतुर्वेदीजी, मानस माधुरी श्रीमती अखिलेश्वरी देवी, आचार्य अखिलेश्वरानन्द (अंगदजी) महाराज, स्वामी श्री राजेश्वरानन्द सरस्वतीजी, पं0 सुरेन्द्र शास्त्री 'मानसकुसुम', पं. रामेश्वरानन्दजी महाराज (राष्ट्रीय मानस प्रवक्ता), मानस एवं भागवताचार्य पं. ओमप्रकाश त्रिपाठी (मानस कोकिल) आदि के प्रवचनों का आयोजन किया जा चुका है। ऐसे ही कार्यक्रम भविष्य में भी होते रहें, ऐसी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है।

कलियुग में मनुष्य के कल्याण का श्रीभगवन्नाम के अतिरिक्त कोई अन्य सुगम साधन नहीं है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–**'नहिं कलि करम न धरम बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू'**। इस परिप्रेक्ष्य में इस समिति और गीता रामायण समिति (नोएडा) के संयुक्त तत्वावधान में माह के प्रथम रविवार को सायंकाल वेला में श्रीराम मंदिर, सी ब्लॉक, सैक्टर–36, नोएडा में **'श्रीराम जय राम जय जय राम'** संकीर्तन प्रारम्भ किया गया है। प्रथम आयोजन रविवार 4 सितम्बर 2022 को सानंद सम्पन्न हुआ। परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वे इस पुनीत कार्य की निरंतरता बनाए रखने की हमें शक्ति एवं प्रेरणा प्रदान करें।

श्रद्धालुओं से निवेदन है कि समारोह में उपस्थित होकर धर्म–लाभ प्राप्त करें।

समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ एवं प्रवचन

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत) द्वारा समय–समय पर श्रीरामचरितमानस अखण्ड पाठ/सुन्दरकाण्ड पाठ, प्रवचन (सत्संग) आदि का आयोजन किया जाता रहा है। इस क्रम में दिसम्बर 2023 तक 542 मानस पाठ, प्रवचन आदि कार्यक्रम आयोजित किये गये, इसका विवरण समिति की विगत वर्षों की स्मारिका में प्रकाशित किया गया है। पिछले वर्ष 20 कार्यक्रम आयोजित हुए, जिनका विवरण निम्नांकित है–

क्र.सं.	दिनांक	नाम व पता जिनके निवास पर कार्यक्रम आयोजित हुए
1.	01–01–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
2.	29–01–2023	श्रीसंत प्रसाद राय, सी–973 आई, एवन्यू, गोड सिटी, नोएडा
3.	05–02–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
4.	25–02–2023	डॉ0 अंकित अवाना, ग्राम निठारी, सैक्टर–31, नोएडा
5.	05–03–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
6.	02–04–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
7.	17–04–2023	श्री संजय शर्मा, बालाजी इन्क्लेव, मुदगिल–5, साईबेरी, नोएडा
8.	07–05–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
09.	02–06–2023	श्री ओमबीर सिंह राणा, बी–28, सैक्टर–44, नोएडा
10.	04–06–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
11.	02–07–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
12.	06–08–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
13.	03–09–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
14	01–10–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
15.	24–10–2023	श्री तुलाराम शर्मा, डी–30, सैक्टर–108, नोएडा।
16.	05–11–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
17.	03–12–2023	श्रीराम मंदिर, सैक्टर–36, नोएडा
18.	10–12–2023	श्री लीलू राम वर्मा, डी–144, सैक्टर–108, नोएडा

श्रीरामकथा ज्ञान यज्ञ कार्यक्रम

क्र.सं.	दिनांक	कार्यक्रम	स्थान	कथा व्यास
1.	30.03.2023	श्रीराम जन्ममहोत्सव	अग्रसेन भवन, सै0–33, नोएडा	मानस किंकर
2.	23.08.2023	तुलसी जयंती समारोह	श्रीराम मंदिर सी ब्लॉक सैक्टर–36, नोएडा	पं. रघुवंशभूषण पाण्डे मानस एवं भागवताचार्य पं. ओमप्रकाश त्रिपाठी (मानस कोकिल)

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
01.	अध्यक्ष की ओर से		03
02.	समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ...		04
03.	श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति ...		07
04.	पाठकों के विचार		09
05	श्रीराम जन्ममहोत्सव की झलकियाँ	कथा व्यासः मानस किंकर पं. रघुवंशभूषण पाण्डे	11
06.	तुलसी जयंती समारोह	कथा व्यासः मानस एवं भागवताचार्य पं. ओमप्रकाश त्रिपाठी (मानस कोकिल)	14
07.	गुरु वसिष्ठ का निषादराज से भाव विभोरित मिलन	पं. दिनेश्वर मिश्र	17
08.	एक रचइ जग गुन बस जाकें	डॉ. शंकर शरण तिवारी	20
09.	मानस में जीवन–मूल्यों की प्रासंगिकता	आचार्य डॉ रामेश्वर प्रसाद गुप्त	23
10.	भरत सरिस को राम सनेही	पं. राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	31
11	शिव–महिमा	सरल शास्त्री	35
12.	दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन	परम पूज्यपाद श्री रामकिंकरजी महाराज	37
13.	गुरु पद पंकज सेवा ...	श्री कैलाश त्रिपाठी	42
14.	उपासना स्वरूपा माता सुमित्रा	डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय	46
15.	ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी	डॉ. भगवान दास पटैरया	50
16.	मानस में कर्तव्य–पालन के कीर्तिमान	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	53
17.	मानस में नारी का कल्याण रूप	पं. दिनेश चन्द्र शर्मा	58
18.	भारतीय संस्कृति में नारी सम्मान	श्री देवेन्द्र शर्मा	63
19.	मानस में मर्यादा	श्री सचिन शर्मा	67
20.	मानस के लोकोपयोगी सूत्र	श्री अवध किशोर दूबे	71
21.	अंगद की दृढ़ भक्ति निष्ठा	श्री राम जन्म सिंह	73
22	राम का स्मरण	श्री रामकिंकर सिंह	77
23.	कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें	पं. राम नरेश तिवारी 'पिण्डीवासा'	78
24.	अति प्रचंड रघुपति कै माया	पं. राजेश तिवारी 'मक्खन'	81

25.	राम ही सब कुछ (कविता)	श्री कुमार विश्वास	86
26.	विश्व में 'राम' नाम से जुड़े नगर	राष्ट्र जागरण के स्वर	87
27.	पर पीड़ा सम नहिं अधमाई	श्रीमती कुसुम पटैरया	88
28.	अंतर प्रेम तासु पहिचाना	संत मैथिलीशरण	91
29.	ईश्वरीय किराने की दुकान	'मक्खन'	93
30.	लाभप्रद है आलोचना सुनना	स्वामी विवेकानंद के विचार	94
31.	एक प्रेरक कहानी	एक भगवद्भक्त	95
32.	श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति का वर्ष 2022–23 का आय–व्यय विवरण		96
33.	श्रीरामचरितमानस की प्रेरणाप्रद चौपाइयाँ		97
34.	श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र		102
35.	श्रीरामशलाका प्रश्नावली		108
36.	विक्रमी संवत् 2081 के व्रत, पर्व, त्योहारों की सूची		112
37.	आरती एवं वंदना		127
38.	श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री		136

सूचना

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति एवं गीता रामायण समिति, नोएडा के संयुक्त तत्वावधान में श्रीराम मंदिर, सी ब्लॉक, सैक्टर–36, नोएडा में प्रत्येक माह के प्रथम रविवार को सायंकाल वेला में (ग्रीष्म ऋतु में सायं 6 से 7 बजे तथा शरद/शिशिर ऋतु में सायं 5 से 6 बजे तक) श्रीरामचरितमानस की भक्ति पूर्ण प्रेरणाप्रद चौपाइयों का गायन एवं 'श्रीराम जय राम जय जय राम' संकीर्तन होता है। निवेदन है कि सभी सुधीजन इष्ट मित्रों सहित सम्मिलित होकर धर्म लाभ प्राप्त करें।

शोक संदेश

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि इस समिति के आजीवन सदस्य श्री देवेन्द्र सिंह तोमर की धर्मपत्नी श्रीमती पुष्पा देवी तोमर पोष शुक्ल पक्ष चतुर्थी सम्वत् 2080 तदनुसार 15 जनवरी 2024 दिन सोमवार को चिर निद्रा में लीन हो गईं। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

विशेषः स्मारिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति पंजीकृत

सदस्यों की सूची

क्र.सं.	नाम सदस्य	पता	दूरभाष	पद
1.	पं0 दिनेशचन्द्र शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा–201303	9811056467	अध्यक्ष
2.	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	216, जी0जी0 हॉस्टलवालीगली होशियारपुर, सै0–51, नोएडा	9311384212	उपाध्यक्ष
3.	पं0 डॉ0 लक्ष्मी नारायण	60, मातेश्वरीवार्ड नं0 11, नौगाँव, (छतरपुर) म0प्र0	9893772149	उपाध्यक्ष
4.	डॉ0 भगवानदास पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9899004263	महासचिव
5.	डॉ0 रविन्द्रकुमार शर्मा	593, ग्रामबिजवासन, नई दिल्ली–110061	9911307799	सचिव
6.	श्री लीलूराम वर्मा	सी–49, सै0–23, नोएडा	9312280743	संयुक्तसचिव
7.	श्री जे0के0 गुप्ता	ए–87, सै0–49, नोएडा	9810997834	कोषाध्यक्ष
8.	श्री भिक्कीलाल शर्मा	ए–105, सै0–20, नोएडा	9810836348	कार्यकारीसदस्य
9.	श्री हुकमचन्द्र शर्मा	मकान नं0 ए–136, एल्फा–1, ब्लॉक–ए, ग्रेटर नोएडा–201310	9213999744	"
10.	श्री सुभाषचन्द्र मित्तल	865, जोशीरोड, करोलबाग, दिल्ली	9210364442	'
11.	श्रीमती नीलम श्रीवास्तव	एम–126, सै0–25, नोएडा	8800439949	"
12.	श्री सी0एस0 भोगल	सी–2/103, सै0–36, नोएडा	9811026745	"
13.	श्री कृष्ण कुमार मिश्रा	12/250, कोटेश्वरनगर, पो0 रविशंकर यूनिवर्सिटी, **(R.S.U.)** जिला–रायपुर–492010	9406379229	"
14.	श्री मांगेराम भारद्वाज	ग्रामनिठारी, सै0–31, नोएडा	9999232019	"
15.	डॉ0 अंकित अवाना	ग्रामनिठारी, सै0–31, नोएडा	9871775563	"
16.	श्री अजय कुमार शर्मा	ए–447, सै0–47, नोएडा	9911220088	"
17.	डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद चतुर्वेदी	1इ, लक्ष्मी रोड, डालनवाला, देहरादून	09411714660	आजीवनसदस्य
18.	श्री देवेन्द्र सिंह अवाना	B 5/6,सामनेC-4/106, सै0–31, नोएडा	9811602397	"
19.	श्री सूरजभान शर्मा	ए–141, सै0–20, नोएडा	8527132634	"
20.	श्री विनोद शर्मा	ए–19, सै0–22, नोएडा	9891117721	"
21.	श्री अश्विनी कुमार भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	"
22.	डॉ0 मनोज कुमार पटैरया	D–59 भूमितल(G.F.), साकेत, नईदिल्ली 110077	9868114548	"
23.	श्री देवेन्द्र कुमार रावत,	266,वार्ड नं0 7, स्नेहलनगर, वर्धा (महाराष्ट्र)	9423645351	"
24.	श्री भगवानदास पाठक	फ्लैट नं0 302,तीसरी माला बी–बिल्डिंग, सुमन सूरज सोसाइटी, मोटा बराछा, सूरत (गुजरात)–394001	6352673969	"
25.	श्री रविशंकर चतुर्वेदी -	904, D 13, AWHO Sandeep Vihar, SeegehalliKadugodi, बंगलौर–560067	9945169080	"
26.	श्री राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता	सी–154, सै0–100, नोएडा	9810464009	"
27.	श्री राधेश्याम शर्मा	ए–55, सै0–27, नोएडा	9999930102	"
28.	श्री रामेश्वरदत्त शर्मा	ग्रामनिठारी, सै0–31, नोएडा	9953508132	"

क्र.सं.	नाम सदस्य	पता	दूरभाष	पद
29.	श्री रणजीत सिंह विष्ट	एफ–110, सै–20, नोएडा	9650324529	
30.	श्री भीम सिंह	मोतीमैमोरियल, दुर्गापार्क, पो0–वसुन्धराग्राम–दल्लूपुरा, दिल्ली–110096	9810181724	
31.	श्रीमती कुसुम पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9811201847	
32.	श्री ए.के. सक्सेना	मकान नं0 329, ब्लाक–एच सैक्टर–बीटा–2, ग्रेटर नोएडा	9540274589	
33.	श्री देवीचरन शर्मा	बी–109, सै0–22, नोएडा	9350859122	
34.	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी	एच 129, सै0–41, नोएडा	9868943638	
35.	श्री वेदप्रकाश बंसल	ए 33, सै0–19, नोएडा	9350732724	
36.	श्री रघुनाथ प्रसाद शर्मा	जी–63, सै0–27, नोएडा	9899797090	
37.	श्री सुरेन्द्र कुमार ठक्कर	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891445905	
38.	श्री लालमोहन चौधरी	ए–390, सै0–47, नोएडा	9868851639	
39.	श्री अमर सिंह सेंगर	ए–162, सै0–20, नोएडा	9971885030	
40.	श्री भूनिधि शर्मा	डी–185, सै0–49, नोएडा	9871199809	
41.	श्री श्रीपाल अवाना	ए–286, सै0–47, नोएडा	9210638386	
42.	श्री यशपाल सिंह	बी–19, सै0–49, नोएडा	9810339398	
43.	श्रीमती मधुमालती	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891707373	
44.	श्री विद्याराम अवाना	एच–7, सै0–27, नोएडा	9891960087	
45.	श्रीमती भारती चतुर्वेदी	बी–2 / 721, कैलाश धाम, ब्लाक नं0–14, सै0–50, नोएडा	9650990257	
46.	श्री शिवकुमार शर्मा	ए–100, सै0–33, नोएडा	9871636341	
47.	आचार्य योगेन्द्र पाण्डे	श्रीराममन्दिर, सै0–36, नोएडा	9810479542	
48.	श्रीमती अर्चना शर्मा	कैलाश धाम अपार्टमेंट, ब्लॉक नं.–14 बी–1 / 520, सैक्टर–50, नोएडा	9968422229	
49.	श्री परमात्माशरण बंसल	ए–83, सै0–49, नोएडा	9810169329	
50.	श्रीमती सीमा चौबे	एफ–13, सै0–20, नोएडा	9811323076	
51.	श्री विपन कुमार	सी–3 / 149, सै0–36, नोएडा	9868139393	
52.	श्री नरेश चौहान	एफ–18, सै0–39, नोएडा	9555955599	
53.	श्री वी0जे0 चौधरी	बालीभगतरोड, बक्सीबाजार, कटक (उड़ीसा) 753001	9090438678	
54.	श्री नरेन्द्र कुमार चाचान	65–ए, लखीमीपाथ, गुवाहाटी–781028	9435553023	
55.	श्री मामचंद	ए–406, सै0–47, नोएडा	8368890732	
56.	श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता	बी–16, सै0–49, नोएडा	9911609460	
57.	श्री प्रेम सिंह नागर	बी–0002, अजनारा (ग्रैंड हैरीटेज) सै0–74, नोएडा	9266666052	
58.	श्रीमती बबीता भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	
59.	श्री वेदप्रकाश शर्मा	ए–36, सै0–47, नोएडा	9821213055	
60.	श्री देवेन्द्र सिंह तोमर	ए–67, सै0–48, नोएडा	9891944556	
61.	श्री रणवीर सिंह	ग्राम–हजरतपुर वाजिदपुर, सै0–63, नोएडा	9810634772	
62.	श्री ओमबीर सिंह राणा	बी–28, सैक्टर 44, नोएडा	8178413463	
63.	श्री सतीश कुमार त्रिपाठी	5 / 40, कृष्णा इन्क्लेव, नंदनपुरा झाँसी – 284001	9450311243	
64.	श्री जगतसिंह अम्बावत	ए–279 सै. 31, नोएडा,	9810260171	

पाठकों के विचार

मानव–जीवन मूल्यों की संरक्षिका है

आचार्य डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म.प्र.), फोनः 9826249448

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति, स्मारिका अंक वर्ष 30 (सन् 2023–24) का अवलोकन किया। साहित्यिक दृष्टि से कला के सौन्दर्य को अपने अन्तस् में सँजोये हुए यह अंक मानव समाज के प्राण स्वरूप जीवन–मूल्यों एवं सद्गुणों को अवगत कराने में अपनी अहम् भूमिका का निर्वहन करता है। कवर सहित 180 पृष्ठीय यह पत्रिका श्रीरामचरितमानस में वर्णित धर्म के चारों स्तम्भों सत्य, परोपकार, दया और अहिंसा पर सहज दृष्टि प्रक्षेपण कर इन्हें व्यवहार में अपनाने की उत्प्रेरणा प्रदान करती है। एक अच्छे समाज की औदार्य पूर्ण स्थापना में इस अंक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह अंक अवश्यमेव पठनीय है एवं इसके सुविचार जीवन में आचरणीय हैं। प्रस्तुत अंक को सुव्यवस्थित एवं सुचारु रूप प्रदान करने में सम्पादक मण्डल पूर्णतः सफल सिद्ध हुआ है। एतदर्थ सम्पादक मण्डल को हार्दिक बधाइयाँ एवं अनन्त शुभकामनायें।

लोक–परलोक सुधारक सामग्री

श्री हरप्रसाद चतुर्वेदी, कानपुर, फोनः 9984804196

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका का वार्षिक अंक 30 प्राप्त हुआ। इससे पूर्व भी कई अंक मुझे मिले, जिनके अवलोकन से अनुभव हुआ कि इनमें स्तरीय पठनीय सामग्री है और उत्तरोत्तर इसमें वृद्धि हो रही है। अंक 30 के सभी लेख प्रेरणाप्रद हैं और इनमें वर्णित सिद्धांतों के आचरण से इहलोक और परलोक दोनों को सुधार सकते हैं।

स्मारिका से आनंद–अनुभूति हुई

श्री प्रेम चन्दर, हैदराबाद, फोनः 9618085306

स्मारिका का वार्षिक अंक 30 प्राप्त हुआ। इसे पढ़कर ऐसा लगा कि जैसे संक्षिप्त रूप में पूरी रामायण ही मैंने पढ़ ली हो। सभी लेख एक से एक बढ़कर हैं, जिन्हें पढ़कर मुझे आनंद की अनुभूति हुई तथा ऐसा महसूस हुआ कि मैं कहीं सत्संग (राम कथा) में बैठा हुआ हूँ। कुछ लेखों को छोड़कर अधिकांश लेख सरल भाषा शैली में हैं, जिन्हें मैंने आसानी से समझ लिया। विगत 30 वर्षों से अनवरत प्रकाशित श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका के सम्पादक मंडल को हार्दिक साधुवाद देते हुए ईश्वर से प्रार्थना है कि उन्हें ऐसी शक्ति प्रदान करें कि इसका प्रकाशन इसी तरह अनवरत चलता रहे।

आनंददायक लेखों का संग्रह

डॉ0 महेशचन्द्र गुप्त, नई दिल्ली, फोनः 9289686427

मुझे श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति के वार्षिक अंक 30 को पढ़कर आनंद की अनुभूति हुई। सभी लेख सारगर्भित सामग्री से परिपूर्ण हैं। मैंने अपने मित्रों को भी इसके पूर्व के अंक की प्रति दी और उन्होंने इसका आध्यात्मिक लाभ उठाया है। भविष्य में इसी तरह स्मारिका का प्रकाशन चलता रहे, ऐसी ईश्वर से प्रार्थना है।

स्मारिका भगवान श्रीराम का वांग्मय–श्रीविग्रह

पं0 दिनेश्वर मिश्र, कानपुर, फोनः 7881102951

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका का 30वाँ वार्षिक अंक प्राप्त हुआ, इसमें मुद्रित लेखों को पढ़कर ऐसा अनुभव हुआ कि यह पत्रिका समस्त दृष्टिकोणों से भगवान श्रीराम का वांग्मय–श्रीविग्रह है। धन्य है आपका प्रयास। साधुवाद। कलियुग में इसे दिव्य ज्ञान–गंगा का अविरल प्रयास कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। श्रीहनुमानजी से सतत् प्रार्थना है कि इस संप्रवाह को निरंतर अनाहत रूप से अनुप्राणित, पल्लवित, पुष्पित कर फलीभूत करते रहें।

मानस को सही परिप्रेक्ष्य में समझने की आवश्यकता

श्री राम जन्म सिंह, ग्राम/पोस्ट–दामा, जिला–आजमगढ़ (उ.प्र.), फोनः 9839453851

विगत कुछ समय से कुछ लोग मानस की कुछ चौपाइयों पर विवादित बयान दे रहे हैं, जैसे–**ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।** यहाँ पर 'ताड़ना' शब्द का प्रयोग समुद्र स्वयं अपने लिए करता है, वह कहता है–प्रभु! आपने मुझे समय पर सीख दी, परन्तु सोचने/समझने की क्षमता की कमी के कारण कुछ लोग अर्थ का अनर्थ कर रहे हैं तथा गोस्वामीजी पर अमर्यादित भाषा का प्रयोग करके रामायण के पन्ने जला रहे हैं। जिस प्रकार हनुमानजी की पूँछ जलाने से उनका कुछ नहीं बिगड़ा, पर जलाने वालों का सत्यानाश हो गया। इस परिप्रेक्ष्य में वैसे ही जो लोग यह अनर्थ कर रहे हैं उनका हिसाब तो भगवान ही करेंगे। अनेकार्थी शब्द, पर्यायवाची शब्द के अन्तर को समझना होगा, तभी हम सही परिप्रेक्ष्य में श्रीरामचरितमानस को समझ सकेंगे। उदाहरणार्थ–कोलकाता में एक 'राइटर्स बिल्डिंग' है, जिसमें मंत्री–अधिकारी बैठते हैं न कि लेखक, शाब्दिक अर्थ से इसका तालमेल नहीं बैठता है। देश, काल, परस्थिति के अनुसार शब्दों के अर्थ भी बदलते रहते हैं।

स्मारिका के आगामी अंकों में इस प्रकार की चौपाइयों पर लेख आना चाहिए ताकि लोगों का भ्रम दूर हो सके।

सहयोग राशि भेजने वालों को साधुवाद

स्मारिका प्रकाशनार्थ हमें इस समिति के सदस्यों के साथ–साथ आसाम (गुवाहाटी) से श्री नरेन्द्र कुमार चाचान, छत्तीसगढ़ (बिलासपुर) से श्री के.पी. गुप्ता, दिल्ली से डॉ. मनोज कुमार पटैरया, श्री अशोक कुमार वर्मा एवं श्री राम बाबू शर्मा, मध्य प्रदेश (भोपाल) से श्री सुरेशचन्द्र त्रिपाठी, राजस्थान से डॉ. वी.एस. बंसल तथा उत्तर प्रदेश से श्री हर प्रसाद चतुर्वेदी (कानपुर), श्रीराम जन्म सिंह (आजमगढ़), श्रीमती माया उपाध्याय (झाँसी) एवं M/s J.M. Constuction Company (झाँसी) से सहयोग राशि प्राप्त हुई है। कुछ पाठकों से सहयोग राशि प्राप्त हुई है, किंतु उनसे सूचना प्राप्त न होने के कारण 'गुप्त दान' लिखकर रसीद जारी की गई है। हम सहयोग राशि भेजने वाले पाठकों को साधुवाद ज्ञापित करते हैं तथा आशान्वित हैं कि भविष्य में भी वे स्मारिका प्रकाशनार्थ आर्थिक सहयोग करके हमारा उत्साहवर्धन करते रहेंगे।

कड़वी बातें बोलने का साहस तो बहुतों को हो सकता है,
पर उन्हें सुनने की क्षमता बहुत कम लोगों में होती है।

एक तरफ धागे हैं जो उलझकर और भी पास आ जाते हैं
तो दूसरी तरफ रिश्ते हैं जो जरा–सा उलझते ही टूट जाते हैं।

श्रीराम जन्ममहोत्सव की झलकियाँ

कथा व्यासः मानस किंकर पं. रघुवंशभूषण पाण्डे, फोनः 8827657799

'श्रीरामचरितमानस' महाकाव्य आध्यात्मिक ग्रन्थ के साथ–साथ एक ऐसी सामाजिक रचना है, जिससे समाज के विभिन्न वर्गों तथा परिवार के सदस्यों का एक–दूसरे के प्रति क्या कर्तव्य है, इसका बोध होता है। इसमें अखिल ब्रह्माण्डनायक मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम की कथा के साथ–साथ भक्ति–ज्ञान–वैराग्य एवं नीतिशास्त्र का सजीव चित्रण है, जिसके अनुसरण से इहलोक और परलोक दोनों सुधर सकते हैं। भावी पीढ़ी में इसके प्रति अभिरुचि उत्पन्न करने तथा सुसंस्कार जाग्रत करने के उद्देश्य से यह समिति प्रति वर्ष श्रीराम जन्ममहोत्सव का आयोजन करती है, जिसमें श्रीरामचरितमानस पर आधारित श्रीराम कथा का श्रवण कराया जाता है। इसी शृंखला में गुरुवार चैत्र शुक्ल नवमी संवत् 2080 तदनुसार 30 मार्च 2023 को 31वाँ श्रीराम जन्ममहोत्सव महाराजा अग्रसेन भवन, सैक्टर–33, नोएडा में आयोजित हुआ। इस पावन वेला में चित्रकूट धाम से पधारे 'मानस किंकर' पं. रघुवंशभूषण पाण्डेजी ने श्रोताओं को श्रीराम कथामृत पान कराके मंत्रमुग्ध कर दिया। उनके प्रवचन के कुछ अंश पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं –

ईश्वरीय प्रेरणा से गोस्वामी तुलसीदासजी ने आज से 449 वर्ष पूर्व इसी दिन श्रीरामचरितमानस की रचना प्रारंभ की थी। राम नवमी के दिन जब यह रचना प्रारंभ की गई, तब वही ग्रह–नक्षत्र एवं योग थे, जो त्रेतायुग में श्रीराम जन्म के समय थे, इसीलिए इसे कुछ विद्वान भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार मानते हैं। इसका प्रमाण श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में इस प्रकार से मिलता है –

संबत सोरह सै एकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा।। (1/34/4)
नौमी भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा।। (1/34/5)
जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं। तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं।।(1/34/6)

कण–कण में व्याप्त अखिल ब्रह्माण्डनायक निर्गुण ब्रह्म के अवतार का उद्देश्य केवल आसुरी शक्तियों का विनाश करना ही नहीं है, बल्कि उनका मुख्य उद्देश्य अपने भक्तों को आनंद प्रदान करना भी है। राक्षसों का संहार तो ईश्वर के संकल्प मात्र से संभव है। उनकी भ्रकुटि–विलास (भौं के इशारे) मात्र से सारी सृष्टि का प्रलय हो सकता है, **''भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई''**, गोस्वामीजी मानस के प्रारंभ में ही इस सिद्धांत का उल्लेख करते हैं –

सो केवल भगतन हित लागी। परम कृपाल प्रनत अनुरागी।। (1/13/5)

शास्त्रों के अनुसार पाँच प्रकार की वीरताएँ होती हैं– रणवीरता, दीनवीरता, दयावीरता, प्रणवीरता और दानवीरता। ये सभी गुण किसी एक मनुष्य में मिलना अति दुष्कर हैं, किंतु मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम में ये पाँचों वीरताएँ हैं, इसका प्रमाण श्रीरामचरितमानस में देखिए–

रणवीरता :–सेना सहित लंका जाने के लिए श्रीरामजी समुद्र से मार्ग माँगने के लिए तीन दिन तक उसके तट पर बैठकर प्रार्थना करते हैं, किंतु उस विनय को अनसुनी करने के कारण श्रीरामजी ने धनुष पर बाण चढ़ा दिया। समुद्र विप्रवेश में आकर क्षमा प्रार्थना करता है और समुद्र पर नल–नील के सहयोग से तैरता हुआ पुल बनाने का सुझाव देता है। तब श्रीरामजी उससे कहते हैं कि अब बताओ यह बाण किस दिशा की ओर छोड़ू। समुद्र कहता है कि इसे उत्तर दिशा की ओर छोड़कर वहाँ के उपद्रवी राक्षसों का संहार कर दीजिए। श्रीरामजी ने वही किया। इस पर गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं –

सुनि कृपाल सागर मन पीरा। तुरतहिं हरी राम रनधीरा।। (5/60/6)

दीनवीरता :– सुग्रीव से मित्रता स्थापित करने के पश्चात् श्रीरामजी ने उनके दुख का कारण जानना चाहा, तब उन्हें बालि द्वारा त्रसित करने का वृत्तांत सुनाया गया। मित्र की इस दीनता को सुनकर 'दीनदयाल' प्रभु की भुजाएँ अपने दीन मित्र का दुख दूर करने के लिए फड़कने लगीं, यथा –

सुनि सेवक दुख दीनदयाला। फरकि उठीं द्वै भुजा बिसाला।। (4/6/14)

दयावीरता तथा प्रणवीरता :–दण्डक वन में राक्षसों द्वारा मुनियों का भक्षण करके जो हड्डियाँ बची थीं, उसका एक पहाड़ सा बन गया था। दयासिंधु भगवान श्रीराम इसे देखकर द्रवित हो गए और तब उन्होंने पृथ्वी को राक्षसविहीन करने का प्रण ले लिया, श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

अस्थि समूह देखि रघुराया। पूछी मुनिन्ह लागि अति दाया।।

निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।

सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह।। (3/9/6 तथा 3/9)

दानवीरता :– प्रभु श्रीराम की दानवीरता उस समय दृष्टिगोचर होती है, जब वे अपने शत्रु रावण को भी अपना परमधाम दे देते हैं। श्रीरामजी की इस दानवीरता को देखकर स्वयं रावण की पत्नी मंदोदरी यह कहती है –

आजन्म ते परद्रोह रत पापौघमय तव तनु अयं।

तुम्हहू दियो निज धाम राम नमामि ब्रह्म निरामयं।। (6/104/छंद)

देवता भी यही कहते हैं कि रावण को वह गति प्राप्त हुई जो मुनि श्रेष्ठ भी नहीं पाते हैं, यथा–

खल मल धाम काम रत रावन। गति पाई जो मुनिबर पाव न।। (6/114/10)

इन पाँचों प्रकार की वीरताओं से सम्पन्न मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के अवध में प्रकट होने (जन्म या अवतार लेने) की कथा इस प्रकार से है। अवधपुरी में महाराज दशरथ का चौथापन आ गया, पर उनके कोई पुत्र नहीं हुआ। इस कारण उनके मन में ग्लानि उत्पन्न हुई और उन्होंने तुरंत अपने गुरु वसिष्ठजी से निवेदन किया, यथा –

एक बार भूपति मन माहीं। भै गलानि मोरें सुत नाहीं।। (1/189/1)

गुर गृह गयउ तुरत महिपाला। चरन लागि करि बिनय बिसाला।। (1/189/2)

निज दुख सुख सब गुरहि सुनायउ। कहि बसिष्ठ बहुबिधि समुझायउ।।(1/189/3)

धरहु धीर होइहहिं सुत चारी। त्रिभुवन बिदित भगत भय हारी।।(1/189/4)

शृंगी ऋषि को बुलाकर गुरु वसिष्ठजी ने पुत्रेष्टि यज्ञ करवाया। अग्निदेव ने प्रकट होकर खीर का प्रसाद देकर कहा कि इसे यथायोग्य अपनी रानियों में बाँट दें। इससे आपकी मनोकामना पूर्ण होगी। महाराज दशरथ ने वह प्रसाद तीनों रानियों–कौसल्या, कैकेयी और सुमित्रा में वितरित कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप तीनों रानियाँ गर्भवती हो गईं।

एहि बिधि गर्भसहित सब नारी। भईं हृदयँ हरषित सुख भारी।।

जा दिन तें हरि गर्भहिं आए। सकल लोक सुख संपति छाए।। (190/5–6)

कुछ भक्त ऐसा मानते हैं कि भगवान गर्भ में नहीं आ सकते, पर ईश्वर के लिए कुछ भी असंभव नहीं है। इसका प्रमाण महाभारत के उस प्रसंग में मिलता है, जब अश्वत्थामा ब्रह्मास्त्र से उत्तरा के गर्भ को नष्ट करना चाहता था, तब भगवान श्रीकृष्ण ने उत्तरा के गर्भ में उनके कान से प्रवेश करके गर्भस्थ शिशु परीक्षित की जान बचाई। कुछ भक्त मानते हैं कि भगवान अपनी योगमाया से ऐसी रचना करते हैं कि लगता है कि वे गर्भ में आए हैं, यथार्थ यह है कि वे प्रकट होते हैं। माता कौसल्या के कक्ष में चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नौवीं तिथि को मध्य दिवस में भगवान प्रकट हुए, यथा –

नौमी तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।। (1/191/1)

मध्यदिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोक बिश्रामा।। (1/191/2)

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।

हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।। (1/192/छंद)

भगवान के जन्ममहोत्सव पर बधाई गीत गाए गए, जिससे श्रोतागण भाव विभोर होकर नृत्य करने लगे। बाल स्वरूप भगवान के दर्शनार्थ अयोध्यावासी, मुनिगण और भक्तों की भीड़ उमड़ पड़ी। इसी अवसर पर भगवान शिवजी काकभुशुंडिजी के साथ दर्शनार्थ आए और अयोध्या की गलियों में आनंद विभोर होकर विचरण करने लगे। श्रीराम कथा सुनाते हुए वे पार्वतीजी से कहते हैं –

औरउ एक कहउँ निज चोरी। सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी।। (1/196/3)

काकभुसुंडि संग हम दोऊ। मनुजरूप जानइ नहिं कोऊ।। (1/196/4)

परमानंद प्रेम सुख फूले। बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले।। (1/196/5)

इस महोत्सव में पं. दिनेश चंद्र शर्मा के पौत्र मा0 आर्यन शर्मा ने सस्वर नवग्रह स्तोत्र सुनाया और उनके छोटे भाई मा. आरव शर्मा ने बड़े ही मधुर स्वर में **''नमामीशमीशान निर्वाणरूपं ...'' स्तोत्र (7/108/श्लोक)** सुनाया। इस पावन वेला में समिति की स्मारिका का वार्षिक अंक 30 पूर्व आई.ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर

त्रिपाठीजी द्वारा विमोचित हुआ। समिति के महासचिव डॉ. भगवान दास पटैरया ने स्मारिका के संदर्भ में संक्षिप्त विवरण देते हुए श्रोताओं से इसकी प्रतियाँ लेने का अनुरोध किया। स्मारिका में प्रकाशित लेखों के संदर्भ में श्री गणेश शंकर त्रिपाठीजी ने बताया कि इसमें प्रकाशित साहित्य स्तरीय है। लोग इसे रुचिपूर्वक पढ़ते हैं। इसमें प्रकाशित पाठकों की प्रतिक्रिया से भी यह तथ्य स्पष्ट होता है। उन्होंने कहा कि श्रीरामचरितमानस एक ऐसा धार्मिक–सामाजिक ग्रन्थ है, जो कि मानव को जीवन के हर मोड़ पर शिक्षा प्रदान करके उसका मार्गदर्शन करता है। यह ग्रन्थ हर घर में होना चाहिए।

इस अवसर पर **नोएडा एंटर प्रिन्योर एसोसिएशन** के अध्यक्ष श्री विपिन मल्हन मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। समिति के अध्यक्ष पं. दिनेश चंद्र शर्माजी ने उनका स्वागत किया। श्री विपिन मल्हन ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति द्वारा इस जनकल्याणकारी आयोजन की जितनी प्रशंसा की जाए उतनी कम है। ईश्वर से प्रार्थना है कि यह समिति भविष्य में भी ऐसे ही भव्य आयोजन करती रहे। इसके सफल आयोजन हेतु हम हर संभव सहयोग करते रहेंगे।

श्रीराम जन्ममहोत्सव के कार्यक्रम का मंच संचालन पत्रकार श्री राजेश बैरागी ने किया। समिति उन्हें हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करते हुए आशान्वित है कि वे भविष्य में भी इसी प्रकार हमारा सहयोग करते रहेंगे। इस कार्यक्रम के सफल आयोजन में अग्रवाल मित्र मंडल (पंजीकृत), नोएडा से हमें भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ। समिति उन्हें साधुवाद ज्ञापित करती है। विगत कई वर्षों से वे हमारा सहयोग करते रहे हैं और भविष्य में भी इसी प्रकार समिति का सहयोग करते रहेंगे, ऐसा हमें विश्वास है। श्रीरामायणजी तथा भगवत् विग्रह की आरती के पश्चात् भोजन प्रसाद के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

तुलसी जयन्ती समारोह

कथा व्यास मानस एवं भागवताचार्य पं. ओमप्रकाश त्रिपाठी (मानस कोकिल) फोनः 9451266172

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति एवं गीता रामायण समिति के संयुक्त तत्वावधान में पूर्व वर्षों की भाँति शुद्ध श्रावण शुक्ल सप्तमी विक्रमी संवत् 2080 तदनुसार बुधवार दिनांक 23 अगस्त 2023 को श्रीराम मंदिर, सी–ब्लॉक, सैक्टर–36, नोएडा में **'तुलसी जयंती समारोह'** आयोजित हुआ। यह इस समिति द्वारा आयोजित सातवाँ कार्यक्रम था। 'श्रीगणेश पूजन' तथा **'श्रीराम जय राम जय जय राम'** संकीर्तन के पश्चात् कथा व्यास पं. ओमप्रकाश त्रिपाठी ने गोस्वामी तुलसीदासजी के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डालते हुए भाई भरतलाल के प्रेम, समर्पण एवं त्याग की कथा सुनाई। उनके प्रवचन के कुछ अंश सारांश में पाठकों को लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं।

गोस्वामी तुलसीदासजी का जन्म बुंदेलखण्ड क्षेत्र के बाँदा जिले में स्थित ग्राम राजापुर में विक्रमी संवत् 1554 में श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन हुआ था। जन्मते समय वे सामान्य शिशुओं की तरह रोए नहीं, बल्कि उनके मुख से **'राम'** शब्द निकला। उस समय उनके मुख में बत्तीस दाँत मौजूद थे। वे अभुक्त मूल नक्षत्र में पैदा हुए थे। यह सुनकर उनकी माता हुलसी चिंतित हुईं और बालक को अनिष्ट की आशंका से तीन दिन बाद ही अर्थात् दशमी की रात्रि को अपनी दासी 'चुनियाँ' के साथ उसकी ससुराल भेज दिया और इसके दूसरे ही दिन स्वयं इस संसार से चल बसीं। इनके पिता आत्माराम दूबे का भी देहान्त हो गया। चुनियाँ ने बड़े प्रेम से बालक का पालन–पोषण किया, किन्तु लगभग साढ़े पाँच वर्ष बाद चुनियाँ का भी सर्पदंश से देहान्त हो गया। अब बालक **'रामबोला'** अनाथ हो गया, पर ऐसी मान्यता है कि स्वयं जगज्जननी माँ पार्वतीजी ने रामबोला का पालन–पोषण किया। ईश्वरीय प्रेरणा से श्री नरहर्यानन्दजी ने इस बालक को ढूँढ़ लिया और **'रामबोला'** नाम रखा, पर बाद में **'तुलसीदास'** के रूप में इनका नामकरण हुआ। वेद–वेदान्त तथा श्रीरामकथा का अध्ययन–श्रवण करके गुरु आज्ञा से वे अपने ग्राम राजापुर लौट आए और पितरों का श्राद्ध करके वहीं रहकर लोगों को **'श्रीरामकथा'** सुनाने लगे। भारद्वाज गोत्र की 'रत्नावली' नाम की कन्या से उनका विवाह हो गया और वे सुखपूर्वक गृहस्थाश्रम में रहकर लोगों को 'श्रीरामकथा' सुनाने लगे। एक दिन रत्नावली अपने भाई के साथ मायके चली गई, तो तुलसीदासजी रात्रि में ही यमुना पार करके उनके पास पहुँच गए, तब रत्नावली ने उनसे कहा, **''मेरे इस हाड़–मांस के शरीर में तुम्हारी जितनी आसक्ति है, उससे आधी भी यदि भगवान में होती तो तुम्हारा बेड़ा पार हो गया होता।''** तुलसीदासजी को ये वचन लग गए और उन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया। विभिन्न तीर्थों का भ्रमण करके ईश्वरीय प्रेरणा से अयोध्यापुरी में निवास करते हुए संवत् 1631 में **'रामनवमी'** के दिन **'श्रीरामचरितमानस'** की रचना प्रारंभ की और संवत् 1633 के मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में रामविवाह के दिन सातों काण्ड पूर्ण हुए। उन्होंने अन्य कई ग्रन्थों की रचना की, किंतु उनमें 'श्रीरामचरितमानस' सर्वाधिक लोकप्रिय है।

गोस्वामी तुलसीदासजी पर श्रीरामजी की अपार कृपा रही। एक सत्य घटना लोक चर्चित है कि एक बार वे एक शव यात्रा के पास से निकल रहे थे कि एक स्त्री उनके चरणों में गिर पड़ी। उन्होंने उसे सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद दे दिया। उसने बताया कि यह शवयात्रा उसके पति की है। तुलसीदासजी घबड़ा गए कि यह क्या हो गया। उन्होंने श्रीरामजी से प्रार्थना की कि शायद आप इस दास के द्वारा कुछ कराना चाहते हैं। जैसी प्रभु की इच्छा। उनकी प्रार्थना से उस स्त्री का पति जीवित हो गया। यह घटना बादशाह अकबर तक पहुँच गई। उसने तुलसीदासजी की इच्छा के विरुद्ध अपने दरबार में दिल्ली बुलाया और कुछ चमत्कार दिखाने को कहा, पर उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि वे कुछ नहीं जानते हैं, जो कुछ करते हैं वे हैं उनके आराध्यदेव श्रीरामजी। यह जानकर कि ये कोई चमत्कार नहीं दिखाएँगे, अकबर ने उन्हें कारागार में डाल दिया। भगवान की असीम कृपा तो थी ही तुलसीदासजी पर, अतः दूसरे ही दिन पूरी दिल्ली में और खासकर बादशाह के महलों में असंख्य बंदर आकर उपद्रव मचाने लगे। इसे देखकर मंत्रियों की सलाह से बादशाह ने तुलसीदासजी को कारागार से निकाल कर उनसे क्षमा याचना करके उन्हें छोड़ दिया। इससे बंदरों का प्रकोप शान्त हो गया।

प्रेम, समर्पण और त्याग की मूर्ति भरतजी राम–वनवास प्रकरण में स्वयं को दोषी मानकर ग्लानि से भरे हुए हैं, फिर भी उन्हें विश्वास है कि चाहे पूरा जगत यह मान ले कि वनगमन में उनकी सम्मति थी, पर श्रीरामजी कोई संदेह नहीं करेंगे और वे उनकी बात मानकर अयोध्या लौट आएँगे। इसी विश्वास के साथ वे भाई शत्रुघ्न के साथ श्रीरामजी को मनाने चित्रकूट जाते हैं। साथ में गुरु वसिष्ठ, विप्र समाज, तीनों माताएँ और अयोध्या के गणमान्य/सामान्य जन भी थे। चित्रकूट में कई बार आपस में तथा सबके साथ मिलकर विचार–विमर्श हुआ, पर कोई निर्णय नहीं लिया जा सका, तब गुरु वसिष्ठजी भरतजी से पूछते हैं कि वे कुछ उपाय सुझाएँ। भरतजी विनम्रता पूर्वक कहते हैं कि आपने तो ब्रह्मा की कृति तक को बदल दिया था। आपने द्वापर युग (दूसरा युग) को तीसरे स्थान पर कर दिया और त्रेता युग (तीसरा युग) को दूसरे स्थान पर और आप मुझसे उपाय पूछ रहे हैं, यह मेरा ही अभाग्य है, यथा –

सो गोसाइँ बिधि गति जेहिं छेकी। सकइ को टारि टेक जो टेकी।।

बूझिअ मोहि उपाय अब सो सब मोर अभागु।
सुनि सनेहमय बचन गुर उर उमगा अनुरागु।। (2/255)

भरतजी के प्रेम और समर्पण से गुरु वसिष्ठजी इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने श्रीरामजी से कह दिया कि उनके विचार से भरतजी की रुचि (इच्छा) के अनुसार निर्णय लेने में सबका हित है, यथा –

मोरें जान भरत रुचि राखी। जो कीजिअ सो सुभ सिव साखी।। (2/258/8)

इस प्रकार से यह निर्णय तो हो गया, फिर भी वसिष्ठजी कहते हैं कि इसके साथ–साथ साधुमत, लोकमत, नृपनय (राजनीति) और निगम निचोर (शास्त्र सम्मत) के अनुसार विचार किया जाए। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

भरत बिनय सादर सुनिअ करिअ बिचारु बहोरि।
करब <u>साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि</u>।। (2/258)

गुरुजी के ऐसे वचन सुनकर श्रीरामजी ने कहा कि हे भरत! तुम जैसा कहो, वही होगा, ऐसा कहकर श्रीरामजी चुप हो गए, तब वसिष्ठजी ने भरतजी से कहा कि अब अपने मन की बात कह दें। भरतजी जो उत्तर देते हैं उसमें साधुमत, लोकमत, राजनीति और शास्त्र सम्मत सभी तथ्य समाहित हैं। वे कहते हैं कि हम दोनों भाई वन में रहें आप लक्ष्मण तथा माता सीताजी के साथ अयोध्या लौट जाएँ। इससे अयोध्यावासी अपने प्रिय राजा को पाकर धन्य हो जाएँगे। दूसरा विकल्प यह है कि दोनों भाइयों लक्ष्मण और शत्रुघ्न को वापिस कर दीजिए और मैं आपके साथ चलूँ अथवा केवल शत्रुघ्न को वापिस कर दीजिए और हम तीनों भाई सीताजी सहित वन में रहें। जिस प्रकार से हम सबका हित हो, पर आपको किसी प्रकार का क्षोभ न हो, वही कीजिए। अंत में वे कहते हैं कि हे प्रभु! जिस प्रकार से आपका मन प्रसन्न रहे, वही कीजिए। वास्तव में यही शास्त्र सम्मत है कि जैसी ईश्वरेच्छा। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

सानुज पठइअ मोहि बन कीजिअ सबहि सनाथ।
नतरु फेरिअहिं बंधु दोउ नाथ चलौं मैं साथ।। (2/268)
नतरु जाहिं बन तीनिउ भाई। बहुरिअ सीय सहित रघुराई।।
जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई। करुना सागर कीजिअ सोई।। (2/269/1–2)

भरतजी का चरित्र पितामह भीष्म से कुछ मिलता जुलता है। श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध में वर्णन है कि जब महाभारत युद्ध समाप्त हो गया, तब सम्राट युधिष्ठिर आदि के साथ श्रीकृष्णजी पितामह से मिलने गए। भीष्म कहते हैं कि अब उनके जीवन के अंतिम क्षण हैं, मैं आपका वह रूप देखना चाहता हूँ जब आपने अपना प्रण तोड़ते हुए क्रोधित होकर मेरी ओर रथ का पहिया लेकर कदम बढ़ाया था। मैंने अपने आपको तब अत्यंत सौभाग्यशाली माना कि परमेश्वर ने मुझ जैसे तुच्छ सेवक के लिए अपना प्रण, **''मैं युद्ध के दौरान किसी अस्त्र–शस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा''**, तोड़ दिया और मेरा **'मान'** रखा। वे कहते हैं कि दूसरी बात मुझे वह अच्छी लग रही थी कि आप अपने प्रिय भक्त अर्जुन की ओर तो पीठ किए हुए थे और युद्ध में मेरे सामने रहे। ठीक उसी प्रकार की दो बातें हम भरत चरित्र में

देखते हैं। जब श्रीरामजी ने कह दिया कि जो भरत कहें वही करने में भलाई है, तब भरतजी ने भी यही कहा था कि आपने अपना प्रण तोड़कर मेरी बात रखी। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

भरतु कहहिं सोइ किएँ भलाई। अस कहि राम रहे अरगाई।। (2/259/8)
निज पन तजि राखेउ पनु मोरा। छोहु सनेहु कीन्ह नहिं थोरा।। (2/266/8)

भीष्मपितामह की तरह भरतजी कहते हैं कि आज आप (प्रभु श्रीरामजी) मेरे सामने हैं तो फिर मेरे दुख और दोष सारे समाप्त हो गए हैं, यथा –

भरतहि भयउ परम संतोषू। सनमुख स्वामि बिमुख दुख दोषू।। (2/307/3)

भरतजी के त्याग और समर्पण की अनूठी मिशाल है। वे हम सभी को अपने आचरण से यह शिक्षा देते हैं कि ईश्वरेच्छा में ही अपनी इच्छा समाहित कर लें, तभी परमसुख की प्राप्ति हो सकती है।

इस समारोह में सर्वहितकारी शिक्षा निकेतन पब्लिक स्कूल, निठारी, सैक्टर–31, नोएडा के विद्यार्थियों ने गोस्वामी तुलसीदासजी के जीवन चरित्र पर प्रकाश डाला तथा श्रीरामचरितमानस के कुछ प्रसंगों को सुनाया। इस हेतु उनके अध्यापक श्री मिश्राजी तथा स्कूल के तीन विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया। इस पावन वेला में पूर्व आई. ए.एस. अधिकारी श्री गणेश शंकर त्रिपाठीजी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए बताया कि श्रीरामचरितमानस की रचना उस काल में हुई जब मुगलों का शासन था। उस समय जनमानस में ऐसा कोई ग्रंथ नहीं था जो हिंदू समाज का मार्गदर्शन कर सके, क्योंकि हमारे सभी प्राचीन ग्रंथ संस्कृत में होने से जन सामान्य की पहुँच से बाहर थे। ऐसे समय में गोस्वामी तुलसीदासजी का महाकाव्य श्रीरामचरितमानस जन सामान्य का पथ–प्रदर्शक बना। ये केवल धार्मिक ग्रंथ ही नहीं, बल्कि एक ऐसा सामाजिक ग्रंथ है जो कि परिवार, समाज और विश्व के कल्याणार्थ ऐसे जीवन–मूल्य संजोए हुए है, जिनके आचरण से हम एक सुखमय समाज की कल्पना कर सकते हैं।

मानस एवं भागवताचार्य पं. ओमप्रकाश त्रिपाठी, सभी आगन्तुकों तथा कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु गीता रामायण समिति के महासचिव श्री सी.एस. भोगल एवं मंदिर के प्रधान पुजारी आचार्य योगेन्द्र पाण्डेय को साधुवाद ज्ञापित किया गया। पूर्व वर्षों की भाँति आरती एवं भोजन प्रसाद के साथ ही कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

औरों पर बोझ न बन जाए

सुकून उतना ही देना प्रभु,
जितने से जिंदगी चल जाए।
औकात इतनी ही देना,
कि प्यार से निभ जाए।।
आँखों में शर्म इतनी देना,
कि बुजुर्गों का मान रख पाए।
पिंजरे में साँसें इतनी ही हों,
कि बस नेक काम करने जाए।।
बाकी उम्र ले लेना कि औरों पर बोझ न बन जाए।।

गुरु वसिष्ठ का निषादराज से भावविभोरित मिलन

पं. दिनेश्वर मिश्र, कानपुर, फोनः 7881102951

अखिल ब्रह्माण्डनायक मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम ने भक्तिमती शबरी को नवधा भक्ति श्रवण कराने से पूर्व भक्ति की महिमा बताते हुए कहा कि मैं केवल भक्ति का नाता मानता हूँ, यथा–

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता।।
जाति–पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।।
भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा।। (3/35/4–6)

श्रीरामजी इसी सिद्धांत को काकभुशुंडिजी से कहते हैं कि मेरी भक्ति के बिना ब्रह्मा के समान जीव भी मुझे अन्य सभी जीवों के समान ही प्रिय है, किंतु नीच से नीच भी भक्तिवान प्राणी मुझे प्राणप्रिय है, यथा –

पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं। मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं।।
भगति हीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई।।
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी। मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी।। (7/86/8–10)

गुरु वसिष्ठजी ने इस सिद्धांत को कब और कैसे चरितार्थ किया, इसका संक्षिप्त विवरण इस आलेख में प्रस्तुत है। भगवान राम ने गुरु बनाया मुनि वसिष्ठ को, जो कि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं और मित्र बनाया निषादराज को। गुरु वसिष्ठ और निषादराज में बड़ी दूरी है। गुरु ब्राह्मण धर्म की मर्यादा में रहते हैं। उनकी दृष्टि में निषाद ऐसा नीच है कि जिसकी छाया छूने से स्नान करना पड़ता है और जो लोकमत और वेदमत में संपूर्ण रूपेण नीच है। इस कारण निषाद और गुरु वसिष्ठ कभी एक दूसरे के निकट नहीं आ सकते। दोनों अपने–अपने वर्ण धर्म की मर्यादा में तत्पर हैं। निषाद सेवा का कार्य करता है और गुरु वसिष्ठ धर्मोपदेश का कार्य करते हैं। भगवान का गुरु वसिष्ठ के प्रति आदर है और निषाद के प्रति प्रेम। इस आदर और प्रेम दोनों को प्रभु मिलाकर ऐसा एकाकार कर देते हैं कि धर्म का केन्द्र ही बदल जाता है। इस केन्द्र को बदलने का श्रेय है, प्रेममूर्ति श्रीभरतजी को। देखें कैसे? श्री भरतजी गुरु वसिष्ठ तथा अयोध्या के नागरिक सभी चित्रकूट की ओर जाते हैं तो देखें केन्द्र कैसे परिवर्तित होता है। अनजाने ही एक नई बात होने जा रही है। श्रीभरतजी निषाद को आते देख गुरु वसिष्ठ से पूछते हैं, ये सामने कौन आ रहे हैं? गुरु वसिष्ठ को लगा कि परिचय तो ऐसा दें कि जिससे ये पहले ही उन्हें पहचान लें। उन्होंने पहला वाक्य यही कहा–ये राम के मित्र हैं। वैसे गुरु वसिष्ठ अन्य रूप से भी उनका परिचय दे सकते थे। वे पहले निषाद का नाम बताते, फिर जाति आदि का वर्णन करते, पर यह सब उन्होंने पहले नहीं कहा। केवल यही बोले, ये राम के सखा हैं और फिर कहा इनका नाम गुह है, ये जाति के निषाद हैं। लेकिन श्रीभरतजी ने क्या सुना? श्रीभरतजी ने केवल इतना ही सुना कि ये श्रीराम के सखा हैं। इसके बाद उनके नाम, जाति आदि का श्रीभरतजी के समक्ष कोई महत्व नहीं था और एक नई बात हो गयी। अब तक की यह परम्परा थी कि राजा रथ पर रहते और सेवक नीचे। पर गुह निषाद को देख राजा भरत उनसे मिलने रथ से उतर पड़े। यद्यपि यह उस समय की प्रचलित परम्परा के प्रतिकूल बात थी, पर संत भरत को उसकी कोई चिन्ता नहीं। उनके सामने बस यही बात थी कि ये राम के सखा हैं, अतः राम के हैं और इसलिए उन्होंने पहला कार्य यही किया–

राम सखा सुनि संदनु त्यागा। चले उतरि उमगत अनुरागा।। (2/193/7)

अब एक और नया दृष्य उपस्थित हो गया –

करत दंडवत देखि तेहि भरत लीन्ह उर लाइ।
मनहुँ लखन सन भेंट भइ प्रेमु न हृदयँ समाइ।। (2/193)

एक सम्राट के पुत्र ने, राज्य के उत्तराधिकारी ने दौड़कर निषादराज को उठाकर हृदय से लगा लिया। आँखों से अश्रुपात हो रहा है। हृदय में प्रेम समाता नहीं। ऐसा लगता है मानो लक्ष्मण से भेंट हो गयी हो। गुरु वसिष्ठ यह देखकर क्षण भर के लिए चौंक पड़े, क्योंकि श्रीभरत से मिलने के पूर्व ही निषादराज ने गुरु वसिष्ठ को अपनी वर्ण–मर्यादा के अनुरूप दूर से ही प्रणाम किया था –

देखि दूर तें कहि निज नामू। कीन्ह मुनीसहि दंड प्रनामू।। (2/193/5)

गुरुदेव ने उसे आशीर्वाद दिया, पर श्रीभरत केवल आशीर्वाद देकर नहीं रह गए, बल्कि रथ से उतर कर केवट को गले लगा लिया। आजकल के कई धर्मधुरंधर कहते होंगे कि श्रीभरत तथा भगवान राम का निषाद को गले लगाना वर्णाश्रम धर्म के विपरीत था। ऐसे लोग यह सोचकर आत्मतुष्ट होते होंगे कि केवट से मिलने के बाद भगवान राम और भरतजी ने स्नान कर लिया होगा, पर कम से कम गोस्वामीजी को यह स्वीकार नहीं कि भगवान राम निषादराज से मिलने के बाद स्नान करें तो शुद्ध होंगे। हमारी मान्यताएँ इतनी संकीर्ण हो गयी हैं, जिसकी कल्पना गोस्वामीजी का धर्म नहीं कर पाता। भगवान राम तो परम उदार हैं। उनके चरित्र का गौरव कैसा है? देखें– लोग दो प्रकार के होते हैं एक पवित्र होते हैं और दूसरे पावन। पवित्र लोगों को सदा यह डर लगा रहता है कि कहीं हम अपवित्र न हो जायें और पावन की विशेषता यह है कि जो अपवित्र है वे भी उनके स्पर्श से पवित्र हो जाते हैं, देखिए अहिल्या उद्धार के प्रसंग में –

परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही।। (1/211/छंद)

क्या गंगा ने कभी किसी नदी या नाले से पूछा कि तुम पवित्र हो या अपवित्र? एक कवि ने ठीक ही लिखा है–

इक नदिया इक नार कहावत मैलोहि नीर भरो।
जब दोनों मिल एक बरन भये सुरसरि नाम परो।।

हमारे प्रभु राम के चरण ही गंगा के उद्गम स्थल हैं, उस गंगा के जो अपावन को पावन बनाती है, जिनका द्वार कभी किसी के लिए बंद नहीं होता। श्रीभरत के चरित्र में भी हम यही पाते हैं। श्रीभरत और निषादराज का जो मिलन होता है उसके द्वारा गुरु वसिष्ठ को धर्म की एक नई व्याख्या मिल जाती है। ज्यों–ज्यों गुरु वसिष्ठ, श्रीभरत को परखते जाते हैं, त्यों–त्यों उन्हें अपने में न्यूनता का बोध होने लगता है। उन्हें लगता है कि मुझमें और श्रीभरत में अन्तर है। मैं मुख से तो निषाद को रामसखा कहता हूँ, पर मेरे मन में उनके रामसखा होने की बात उतनी ध्यान में नहीं रहती, जितनी कि उनके निषाद होने की और इसीलिए उसे आशीर्वाद देते समय मैंने उनसे वर्णाश्रम के अनुकूल दूरी बनाए रखी। मुझमें यह साहस नहीं हुआ कि मैं भी उसे रामसखा के रूप में हृदय से लगा लूँ और फिर गुरुदेव इसका परिमार्जन भी करते हैं। देखें कब और कैसे? जब चित्रकूट में श्रीभरत और भगवान राम का मिलन हुआ, तब वह मिलन प्रेम में इतना पूर्ण था कि न तो श्रीभरत को अपने भरत होने का भान रहा और न श्रीराम को अपने राम होने का–

परम पेम पूरन दोउ भाई। मन बुधि चित अहमिति बिसराई।।
कहहु सुपेम प्रगट को करई। केहि छाया कबि मति अनुसरई।। (2/241/2–3)

चित्रकूट के इस मिलन को देख पार्वतीजी, शंकरजी से कहती हैं–भगवान राम, भरतजी से कुछ बोल नहीं रहे हैं? शंकरजी ने कहा–पार्वती! बोलना क्या बड़ी ऊँची बात है?

कोउ किछु कहइ न कोउ किछु पूँछा। प्रेम भरा मन निज गति छूँछा। (2/242/7)

जहाँ राम को राम होने का भान नहीं और भरत को भरत होने का भान नहीं, वहाँ बोलने, समझने की बात कैसे हो सकती है। कौन पूछे और किससे पूछे? **'डूबे सो बोले नहीं, बोले सो अनजान'**। अब देखें इस विषम परिस्थिति से कौन उवारता है, क्योंकि न राम, भरत से बोल रहे हैं और न भरत श्रीराम से। दोनों प्रेमरस में डूबे हुए हैं और डूबने वाले को उठाता कौन? केवट। उसने देखा कि ये दोनों प्रेमरस में ऐसे डूबे हैं कि इन्हें गुरुदेव और अन्य लोगों के आने की ओर ध्यान ही नहीं है। तब एक अनोखी बात होती है। आज तक बहुतों ने यह जाना था कि गुरु के द्वारा भगवान की प्राप्ति होती है, पर आज एक केवट ने गुरु को भगवान की प्राप्ति कराई। गुरु वसिष्ठ कहीं दूर खड़े थे। श्रीभरत को यह बताने का ख्याल ही नहीं रहा कि गुरु वसिष्ठ भी आए हैं तथा भगवान भी यह पूछना भूल गए कि

साथ में कौन–कौन आए हैं। दोनों तो प्रेमरस में डूबे हुए हैं। इन डूबे हुओं को निकालने के लिए केवट को एक लम्बा रस्सा लगाना पड़ा। वे पास जाते हैं और हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं –

तेहि अवसर केवटु धीरजु धरि। जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि।। (2/242/8)

फिर धीरे–धीरे डूबे हुए प्रभु को निकालना शुरू करते हैं। पहले कहते हैं, प्रभु मुनि वसिष्ठ साथ आए हुए हैं, नाथ साथ मुनिनाथ। फिर कहते हैं यही नहीं, सभी मातायें भी आई हैं, मातु सकल और अन्त में कहते हैं नगरवासी, सेवक, सेनापति, मंत्री सभी आपके वियोग से व्याकुल होकर आए हैं –

नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सकल पुर लोग।
सेवक सेनप सचिव सब आए बिकल बियोग।। (2/242)

ज्यों ही प्रभु ने यह सुना तो गोस्वामीजी लिखते हैं, भगवान राम अब बदल गए। पहले जब भरत आए तब राम कौन थे? उठे रामु सुनि पेम अधीरा। (2/240/8) उस समय ये प्रेमाधीर राम थे, और अब –

सीलसिंधु सुनि गुर आगवनू। सिय समीप राखे रिपुदवनू।।
चले सबेग रामु तेहि काला। धीर धरम धुर दीनदयाला।। (2/243/1–2)

अब ये अधीर राम नहीं है, बल्कि अब ये धीर राम हैं। पहले प्रेमी राम थे, अब धर्मी राम हैं –

गुरहि देखि सानुज अनुरागे। दंड प्रनाम करन प्रभु लागे।। (2/243/3)

प्रभु दौड़कर जाते हैं और गुरु वसिष्ठ के चरणों में साष्टांग प्रणाम करते हैं। गुरुदेव उनको हृदय से लगा लेते हैं। निषादराज फिर से गुरुदेव को प्रणाम करते हैं। निषादराज में कोई अहंकार नहीं। इस बार फिर उन्होंने अपनी वर्णधर्म परम्परा का पालन करते हुए दूर से ही गुरुदेव को प्रणाम किया –

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूरि तें दंड प्रनामू।। (2/243/5)

मानस तत्व–दर्शक जन! देखिए आज गुरुदेव कितने बदल गए। इस प्रेमभूमि में आकर, श्रीभरत और भगवान राम के सान्निध्य में आकर उनमें इतना परिवर्तन आ गया है कि उन्होंने अब निषादराज को दूर से ही आशीर्वाद नहीं दिया, वरन वे दौड़ते हुए आगे बढ़े। निषादराज को घबराहट हुई कि क्या हो रहा है? गुरुदेव मर्यादा को कैसे भूले जा रहे हैं, लेकिन–

रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा।। (2/243/6)

गुरुदेव ने उन्हें जबरदस्ती हृदय से लगा लिया। मानो जमीन पर लोटते हुए प्रेम को समेट लिया हो और तब–

नभ सराहि सुर बरिसहिं फूला।। (2/243/7),

गुरुदेव के इस कार्य की सराहना करते हुए देवता आकाश से फूल बरसाने लगे। गोस्वामीजी लिखते हैं –

एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं। बड़ बसिष्ठ सम को जग माही।। (2/243/8)

इसके समान नीच जाति का संसार में और कौन है तथा गुरु वसिष्ठ जैसा धर्मवेत्ता कौन है? फिर भी –

जेहि लखि लखनहु तें अधिक मिले मुदित मुनिराउ।
सो सीतापति भजन को प्रगट प्रताप प्रभाउ।। (2/243)

जिस निषाद को देखकर मुनिराज वसिष्ठ, लक्ष्मण से भी अधिक आनंदित होकर उनसे मिले, यह सब सीतापति रामचंद्रजी के भजन का प्रत्यक्ष प्रभाव है। गुरु वसिष्ठ और निषाद का मिलन, राम–प्रेम के उस केन्द्र में है, जहाँ किसी प्रकार का अलगाव नहीं, जहाँ दो वर्णों की अलग–अलग मर्यादाएँ आकर एकरस हो गयी हैं और इस केन्द्र के मूल में जो व्यक्ति हैं, वे हैं –**प्रेममूर्ति संत श्रीभरतजी।**

एक रचइ जग गुन बस जाकें

डॉ. शंकर शरण तिवारी, झाँसी, फोनः 9795127788

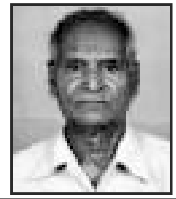

मानस के तृतीय सोपान के अंतर्गत जीवभाव से भावित शेषावतार लक्ष्मण भगवान श्रीराम से प्रीत्यर्थ प्रश्न करते हैं – हे प्रभु! आप मुझे अपने स्वरूप का दार्शनिक बोध कराइए, जिससे मैं आपके चरणों की सेवा में संलग्न हो जाऊँ। उत्तर में प्रभु श्रीराम संक्षेप में माया, ईश्वर, जीव, ब्रह्म, ज्ञान और भक्ति का उपदेश करते हुए माया के दो भेदों में से 'विद्या–माया का स्वरूप निर्देश इस प्रकार करते हैं –

एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।। (3/15/6)

माया के दो भेद हैं – (1) अविद्या तथा (2) विद्या। अविद्या दोषयुक्त है, जो जीवमात्र को भव–बंधन में आबद्ध कर देती है। गोस्वामीजी भी इस माया से क्षुब्ध होकर विनय पत्रिका में प्रभु से विनय करते हुए लिखते हैं –

द्वैत रूप भवकूप परौं नहिं अस कछु जतन बिचारो।

इससे भिन्न विद्या माया है, जो अपने तीन गुणों–सतोगुण, रजोगुण तथा तमोगुण के माध्यम से सृष्टि रचना करती है। यह रचना–शक्ति उसे ईश्वर से प्राप्त होती है। यहाँ उल्लेखनीय है कि ईश्वर तत्त्व वेदान्त में स्वीकृत है, पर सांख्य दर्शन में इसके स्थान पर केवल '**मूल प्रकृति**' को स्वीकृति मिली है, जो इन तीनों गुणों की अधिष्ठात्री है। गीता के अंतर्गत योगेश्वर श्रीकृष्ण इसी गुणमयी माया की उपर्युक्त विशेषताओं का परिचय देते हुए अर्जुन को संबोधित करते हैं –

दैवी ह्येशा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। (7/14)

हे अर्जुन! उस त्रिगुणात्मक दिव्य माया से पार पाना अत्यन्त कठिन है। जो साधक या जीवन्मुक्त इनसे अतीत होकर मात्र मेरी शरण में आ जाते हैं, वे ही इस पर विजय प्राप्त करते हैं। यहाँ माया के उपर्युक्त तीन गुणों की विशेषताओं का परिचय प्रस्तुत करना उचित प्रतीत होता है। सतोगुण के संदर्भ में गीता में यह सिद्धांत वर्णित है –

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ।। (14/6)

सतोगुण निर्मल होने के कारण प्रकाश करने वाला और विकार रहित है – सुख तथा ज्ञान से संबद्ध होने से जीवधारी को उसके अभिमान से बाँधता है। स्पष्ट है कि यह गुण सांसारिक भोग्य वस्तुओं को प्रकाशित करता है, जिससे रजोगुण तथा तमोगुण की वृत्तियाँ दुःख–मोहादि प्रकाशित होती हैं और उसे व्यक्ति पहचान लेता है। उसे यह बोध हो जाता है कि इनकी ओर आकृष्ट होने पर दुःख या मोह का शिकार बनना पड़ेगा। इस गुण की विशेषता का वर्णन सांख्य दर्शन इस प्रकार करता है –

सत्त्वं लघुप्रकाशकमिष्टम्। (कारिका 13)

सतोगुण हल्का और प्रकाशक है। इसके हल्के होने के कारण ही साधक सामान्य धरातल से उठकर ऊर्ध्व चेतना से युक्त हो जाता है। वह कर्मठ, धर्मप्रिय, तपस्वी, त्यागी, विरागी आदि रूपों में समाज के द्वारा समादृत होता है। ऐसी साधना के साधकों की विरलता के विषय में गीता में योगेश्वर श्रीकृष्ण का संकेत है –

मनुष्याणां सहस्रेशु कश्चिद्यतति सिद्धये। (7/3)

हजारों मनुष्यों में कोई एक व्यक्ति ज्ञानार्जन की दिशा में अग्रसर होता है। निःसन्देह ऐसे सतोगुणी ज्ञान की शोध सुखप्रद ही है।

रजोगुण भौतिक जीवन में सर्वप्रथम भोग्यविषयों के प्रकाशन के लिए क्रियाशील होता है और तदनन्तर उनके ग्रहण हेतु 'तृष्णा' नामक मनोवृत्ति उत्पन्न होती है। यह रजोगुण का उत्पाद है, ऐसा गीताकार कहते हैं –

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसंगेन देहिनम्।। (14/7)

रजोगुण संसार के प्रति राग या आसक्ति का परिचायक है, जिसके मूल में तृष्णा है। इसे 'लोभ' का पर्याय

माना गया है। इसे संतुष्ट करने के लिए 'कर्म' का आश्रय लेना पड़ता है। कर्म द्वारा प्राप्त इस संतुष्टि की परिणति में पुनः नवीन तृष्णा उत्पन्न होती है और यह क्रिया निरन्तर चलती रहती है। भर्तृहरि ने इसीलिए 'तृष्णा' को पापिनि का अभिधान दिया है –

भ्रान्तं देशमनेकदुर्गं विषयं प्राप्तं न किंचित्फलं,
त्यक्त्वा जाति कुलाभियानमुचितं सेवाकृतानिष्फला।
भुक्तं मानविवर्जित परगृहे साशंकया काकवत्,
तृष्णे! दुर्मतिपापकर्मनिरते नाद्यापि सन्तुष्यसि।। (शृंगार शतक 5)

तृष्णा से आकुल–व्याकुल चित्त वाला व्यक्ति कहता है – मैंने उनके दुर्गम देशों का भ्रमण किया तथापि कुछ फल नहीं प्राप्त हुआ, जाति और कुल का अभिमान त्याग कर पराई सेवा की, वह भी निष्फल हुई और मान को त्याग कर कौए के समान सशंकित पराए घर पर भोजन किया, तृष्णे! यह सब तेरे ही कारण हुआ। पापकर्म में प्रवृत्त सदैव बर्द्धमान तृष्णे! तुझको अब भी संतोष नहीं होता। तृष्णा के ऐसे स्वरूप की स्थिति में दुःख अवश्यंभावी हो जाता है – पुनः गीताकार भी ऐसे भोगों की दुःख मूलकता का उद्घोष करते हैं –

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः।। (5/22)

सांख्य दर्शन के अनुसार रजोगुण 'प्रेरक' और 'क्रियाशील' है। स्पष्ट है व्यक्ति तृष्णा के वशीभूत होकर उससे प्रेरित होता है और भोगों की प्राप्ति हेतु क्रिया सम्पन्न करता है। क्रिया के बिना भोग प्राप्त होने वाला नहीं।

तमोगुण – गीता में भगवान वासुदेव के श्रीमुखवचन हैं –

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।। (14/8)

उपर्युक्त दोनों गुणों से भिन्न तमोगुण अपने प्रभाव से सभी देहधारियों को मोह' से युक्त कर देता है – परिणामतः वे 'प्रमाद', 'निद्रा' तथा 'आलस्य' से ग्रसित होकर अपने जीवन को पतन का ग्रास बना देते हैं। ये प्रमाद आदि मनोवृत्तियाँ मूलतः अज्ञान से उत्पन्न होती हैं। ध्यान देने योग्य है, यह अज्ञान वेदान्त के 'अज्ञान' से नितान्त भिन्न है और व्यावहारिक जीवन से संबद्ध है। अज्ञान से परिचालित व्यक्ति करणीय कर्म न करके 'विकर्म' (पाप कर्म) करता है, निरन्तर कर्म का आश्रय न लेकर आलस्य विवश हो जाता है और निद्रा में उसे सुख की अनुभूति होती है। सांख्य दर्शन में इस 'गुण' को 'भारी' एवं 'अवरोधक' कहा गया है –

गुरुवरणकर्मेव तमः। (सांख्यकारिका–13)

सतोगुण त्रिगुणात्मक पदार्थों को प्रकाशित करता है, रजोगुण उन्हें प्रवृत्त और क्रियाशील बनाता है – जबकि तमोगुण 'भारी' और 'नियामक' होने के कारण उन्हें अपने अनुसार अन्यत्र प्रवृत्त करता है। इसी स्वैर–वृत्ति के कारण व्यक्ति आलस्य तथा निद्रा का आश्रय ले लेता है।

गुणों की पारस्परिकता – ऊपर से देखने में ये तीनों गुण एक–दूसरे के विरोधी प्रतीत होते हैं – एक प्रकाशरूप है, दूसरा क्रियारूप है तो तीसरा **'मोह'** रूप है। उदाहरणार्थ – एक **'भजन'** की ग्राह्यता का बोध कराता है, तो दूसरा 'भोजन' के लिए प्रेरित करता है और तीसरा 'निद्रा' की गुहा में जाने को विवश करता है। इतनी विपरीतता होने पर भी इनमें विलक्षण समन्वय है – प्रदीप की तरह। सांख्य दर्शन के अनुसार दीपक में प्रयुक्त होने वाले बत्ती, तेल और आग परस्पर विरोधी हैं, पर वे एक साथ मिलकर अभीष्ट वस्तु के प्रकाशन का कार्य करते हैं। (वही सांख्य कारिका) आयुर्वेद में भी वात, पित्त और कफ विरोधी होते हुए भी 'शरीर–धारण' रूप कार्य को करते हैं।

गुणों की अभिभूतता–प्रधानता – गीता के अनुसार एक विशेष समय पर एक गुण ही प्रधान रहता है – अन्य उसके अनुवर्ती या सहायक बन जाते हैं, जैसा कि प्रमाण है –

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा।। (14/10)

रजोगुण की प्रधानता से कभी सतोगुण तथा तमोगुण अभिभूत या पराजित हो जाते हैं, तो कभी सतोगुण इन दोनों गुणों को विवश कर देता है और जब तमोगुण का उद्रेक होता है, तब शेष दोनों गुण उसके वशवर्ती बन जाते हैं।

गोस्वामीजी श्रीरामचरितमानस में इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं, पर इनकी युगीन संबद्धता का निर्देश करते हुए –

नित जुग धर्म होहिं सब केरे। हृदयँ राम माया के प्रेरे।।
सुद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना।।
सत्त्व बहुत रज कछु रति कर्मा। सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा।।
बहु रज स्वल्प सत्व कछु तामस। द्वापर धर्म हरष भय मानस।।
तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा।। (7/104क/1–5)

मनुष्य के जीवन में नित्य प्रति उक्त चारों युगों के धर्म होते रहते हैं। जब प्रसन्न मन हो, शुद्ध सतोगुण का उद्रेक हो, समता से आध्यात्मिक ज्ञान का प्रकाश हो, तब सतयुग का प्रभाव मान्य होगा, जब सत्त्वगुण में रजोगुण की न्यूनता का मिश्रण हो तब त्रेतायुग का प्रभाव होगा, रजोगुण की अधिकता और सतोगुण की न्यूनता होने पर द्वापर होगा। इसी प्रकार तमोगुण के आधिक्य के साथ जब किंचित् रजोगुण का मिश्रण होगा, तब चतुर्दिक विरोध वाला कलियुग अवतरित माना जाएगा। ऐसे विरोध अवलोकनीय हैं –

धर्म–विरोध – श्रुति बिरोध रत सब नर नारी। (7/98/1)
सत्य–विरोध – पंडित सोइ जो गाल बजावा। (7/98/2)
दाम्पत्य–विरोध – भजहिं नारि पर पुरुश अभागी। (7/99/4)
कर्म–विरोध – लोभ ग्रसे सुभ कर्म। (7/97 ख)
नीति–विरोध – नृप पाप परायन धर्म नहीं। (7/101/6)
ज्ञान–विरोध – जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर । (7/99ख)
वर्ण–विरोध – जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा।।
नारि मुई गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी।।
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी। निराचर सठ बृषली स्वामी।।
आचार–विरोध – सब नर कल्पित करहिं अचारा। जाइ न बरनि अनीति अपारा।।
(7/100/5, 6, 7 एवं 9)

साधना की दिशा में अग्रसर होने वाले साधक के लिए यह आवश्यक है कि वह उपर्युक्त गुणों के धर्मों को समझ कर अपने प्रेय (सांसारिक) या श्रेय (पारमार्थिक) पथ को प्रशस्त करे, यथा –

बुध जुग धर्म जानि मन माहीं। तजि अधर्म रति धर्म कराहीं।। (7/104/6)

भगवान वासुदेव गीता में यही उद्घोष करते हैं –

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च।। (14/2)

उक्त त्रिगुण का सम्यक् बोध भगवान वासुदेव का धर्म है और जो इस धर्म को धारण कर अनुगामी होते हैं, वे मुक्त हो जाते हैं – गुणातीत अवस्था को प्राप्त होकर। ऐसा लोकोत्तर गुणातीत पुरुष गीता के स्थितप्रज्ञ, भक्त, सन्त, ज्ञानी से पृथक् नहीं हैं और ऐसी स्थिति एक जन्म की उपलब्धि नहीं हो सकती। गीता में भगवान का कथन है –

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते। (7/19)

निष्कर्षतः सिद्ध हो जाता है कि त्रिगुण विवेक से ही विद्या माया एक तरफ साधक को मुक्त करती है, तो दूसरी ओर मायाधीश उसे अपना लेते हैं –

यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः। (कठोपनिषद् 2/23)

मानस में जीवन–मूल्यों की प्रासंगिकता

डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवानिवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म.प्र.), फोनः 9826249448

जीवन–मूल्य वे सद्‌गुण हैं, जो मानव को प्रेम और श्रेय दोनों की समृद्धि एवं सिद्धि में सहायक होते हैं। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच श्रेय मानव जीवन के मूल्य हैं। भारतीय संस्कृति का सुविग्रह सत्य, शिव और सौन्दर्य स्वरूप है। इन्हीं तीनों गुणों में उक्त पाँच मानव जीवन–मूल्य समाहित हैं। यही सच्चिदानंद सद्‌गुण मानव को सही मानव बनाते हैं। **ऋग्वेद (10/53/6)** में कहा गया है कि 'मनुर्भव' अर्थात् सही मानव बनो। प्रश्न उठता है कि क्या मनुष्य 'मनुष्य' नहीं है? शास्त्र वेत्ता कहते हैं कि सद्‌गुण विहीन मनुष्य 'सही मानव' नहीं है, यथा –

येषां न विद्या न तपो न दानं। ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।।
ते मर्त्य लोके भुविभारभूताः। मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति।। (नीतिशतक–97)

अस्तु, मानव जीवन–मूल्य, सहनशील आदि ऐसे सद्‌गुण हैं, जिनमें मानव व मानव–जाति का स्थायित्व है। प्रस्तुत लेख में श्रेष्ठ एवं सहज मानव स्वरूप प्रत्यक्षीकरण के लिए श्रीरामचरितमानस के सातों काण्डों (सोपानों) में वर्णित मानव जीवन–मूल्यों को यथासंभव संक्षिप्त में प्रस्तुत किया गया है। ये जीवन–मूल्य श्रीरामजी के समान बनने के लिए अनुकरणीय आदृत आदर्श हैं।

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं कि जो व्यक्ति अविनयी है, माता–पिता और बड़ों का सम्मान नहीं करता तथा संत–सज्जनों के प्रति समादर नहीं रखता, वह व्यक्ति मनुष्य योनि में होते हुए भी राक्षसवत् है, यथा –

मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा।।
जिन्ह के यह आचरन भवानी। ते जानेहु निसिचर सब प्रानी।। (1/184/2–3)

श्रीरामचरितमानस **'श्रीराम'** को केन्द्र बिन्दु मानकर नायक रूप में मान्यता प्रदान करता है। 'श्रीराम' राजा दशरथ और कौसल्या के पुत्र हैं तथा उन्होंने सामान्य मनुष्य रूप में अवतार लिया, यथोक्त है कि –

अंसन्ह सहित मनुज अवतारा। लेहउँ दिनकर बंस उदारा।। (1/187/2)

श्रेष्ठ मानव जीवन–मूल्य विद्या, विनय, गुण और शील का नैपुण्य है। उक्त मूल्य या श्रेष्ठ गुण श्रीराम में भली प्रकार से सम्भृत हैं, यथोल्लेख है कि –

बिद्या बिनय निपुन गुन सीला। खेलहिं खेल सकल नृप लीला।। (1/204/6)

1 श्रीरामचरितमानस में सात काण्ड (सोपान) हैं। इन सभी में मानव जीवन–मूल्यों का या मानव–जीवन को सार्थक बनाने वाले सद्‌गुणों का मनोरम भण्डार भरा हुआ है, जो श्रीराम के आचार–विचार, सच्चरित्र, सुकृत एवं सदाचार से अनुकरणीय आदर्श के रूप में प्रद्योतित हैं। मानव जीवन–मूल्यों की दृष्टि से कृति के बालकाण्ड पर दृष्टिपात करने पर स्पष्ट है कि व्यक्ति को सरल चित्त या संत स्वभाव का बनना चाहिए, क्योंकि सत्संग से ही सुमति, सुकीर्ति, सुगति, विभूति (ऐश्वर्य) और भलाई प्राप्त होती है। सत्संग विवेक को जगाता है, यथोल्लेख है कि –

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।(1/3/5–6)

श्रीराम सद्‌विद्या, संस्कार–ग्रहण, सद्‌गुरुओं और ऋषि–मुनियों के सत्संग से ही श्लाघ्य सरल स्वभाव बने थे एवं महामूल्यवान् आशीर्वाद के पात्र भी निरूपित हुए, यथोल्लेख है कि –

राम कहा सबु कौसिक पाहीं। सरल सुभाउ छुअत छल नाहीं।।
सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही। पुनि असीस दुहु भाइन्ह दीन्ही।। (1/237/2–3)

अतिशय विनम्रता, बड़ों के प्रति सम्मान एवं उनका आज्ञानुपालन सबके प्रति सरलता, समत्व, निरालस्यभाव, वीरता, शूरता, सौहार्द, सहोदरभाव आदि सभी महत्वपूर्ण एवं मानवोत्कर्ष के श्रेष्ठ जीवन–मूल्य या सद्‌गुण श्रीराम में प्रदृष्ट हैं, जो अनुकरणीय आदर्श के रूप में प्रदर्षित हैं। मन, वाणी और कर्म के ऐक्य की महामहिमा श्रीरामचरितमानस में सर्वश्रेष्ठ मानव जीवन–मूल्यों में परिगणित है, जिससे परमात्मदर्शन सिद्ध होता है। मन, वाणी और कर्म के ऐक्य का यह जीवन–मूल्य सम्पूर्ण मानव–समाज के लिए उसके श्रेयार्थ आत्मसात करने योग्य एवं भगवत्कृपा प्राप्त करने हेतु अनुकरणीय है, यथा –

मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।। (1/200/6)

व्यक्ति को सही मानव तो श्रेष्ठ मानव जीवन–मूल्यों में परिगणित 'संस्कार' ही बनाते हैं। गर्भाधान की पवित्रता से लेकर जातकर्म, नामकरण, चूड़ाकरण, निष्क्रमण, उपनयन, विद्याग्रहण, विवाह आदि सभी संस्कार श्रीराम के कराये गये थे। सभी संस्कारों से सम्पन्न 'श्रीराम' श्रीरामचरितमानस में तेजस्वी, ओजस्वी, तपस्वी, मनस्वी और यशस्वी रूप में प्रदृष्ट हैं। श्रीराम की विनम्रता, पित्राज्ञानुपालन, सबके प्रति सौहार्दपूर्ण व्यवहार, प्रतिदिन सद्‌शास्त्रों का पठन, चिन्तन, मनन, शीलन और उनकी शालीनता महत्तम जीवन–मूल्य हैं। ये सभी रामादर्श आज के मानव–समाज के द्वारा आवश्यक, अनिवार्य एवं अपरिहार्य रूप से अनुकरणीय हैं, जो इस प्रकार से वर्णित हैं, यथा –

अनुज सखा सँग भोजन करहीं। मातु पिता अग्या अनुसरहीं।।
जेहि बिधि सुखी होहिं पुर लोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा।।
बेद पुरान सुनहिं मन लाई। आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई।।
प्रातःकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मागि करहिं पुर काजा। देखि चरित हरषइ मन राजा।।(1/205/4–8)

मानवता संरक्षण महत्त्वपूर्ण जीवन–मूल्य है। श्रीराम ने इसकी रक्षार्थ जन्म (अवतार) लिया था, यथोल्लेख है कि –

असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस राम जन्म कर हेतु।। (1/121)

इस प्रकार श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड में शील, सदाचार, सत्संग, संस्कार और सुकृत श्रेष्ठ जीवन–मूल्यों के रूप में अनुकरणीय आदर्श स्वरूप वर्णित हैं।

2 **श्रीरामचरितमानस का अयोध्याकाण्ड** मानव जीवन–मूल्यों का एक वृहत् कोश है। पारिवारिक एकता, सुख सम्पन्नता, समृद्धि, सौहार्द एवं सामंजस्य, कर्तव्य, राजधर्म आदि जीवन–मूल्यों के प्रतिष्ठापन एवं समुन्नयन के शोभन सूत्र तथा मनोरम मंत्र यहाँ निर्दिष्ट हैं। सुख–दुःख में समभाव की मनोहरता इस काण्ड के प्रारम्भ में ही बहुत ही प्रभावी रूप में वर्णित है, यथा –

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।
मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य मे सदास्तु सा मंजुलमङ्गलप्रदा।। (2/मंगलाचरण)

यहाँ मानव को सदा एक रस (प्रशान्त स्वभाव) रहने की बात कही गई है। यह मानव मात्र को अधैर्य तथा अधोपतन देने वाले आवेश से बचने के लिए सहायक निर्दिष्ट है। वर्तमान समय में प्रायः माता–पिता और सम्माननीय जनों के तिरस्कार या अवहेलना के उदाहरण मिलते हैं। श्रीरामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड के प्रारंभ में ही माता–पिता के सम्मान की प्रेरणा वर्णित है, यथा –

चारि पदारथ करतल ताकें। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकें।। (2/46/2)

इसी प्रकार इस काण्ड में भाग्य से बढ़कर कर्मरूप जीवन–मूल्य का प्राधान्य निरूपित है, यथा –

जीव करम बस सुख दुख भागी। (2/12/4)
करम प्रधान सत्य कह लोगू ।। (2/91/8)
निज कृत करम भोग सबु भ्राता।। (2/92/4)
करम प्रधान बिस्व करि राखा। (2/219/4)

उपर्युक्त कर्म–प्रधानता का निरूपण वर्तमान में प्रायः अकर्मण्यता और प्रमाद में जीवन व्यतीत करने वाले लोगों के लिए एक समुचित सीख है, जो परमजीवन्त जीवन–मूल्य है। कर्मनिष्ठा के साथ–साथ 'सत्य' रूप जीवन–मूल्य को गोस्वामीजी ने श्रेष्ठ धर्म के रूप में निरूपित किया है, यथा –

धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना।। (2/95/5)

सबके प्रति समभाव भी इस काण्ड में अनुकरणीय मानव–जीवन मूल्य के रूप में दृष्टव्य है, यथा –

कोल किरात कुरंग बिहंगा। मोहि सब सुखद प्रानपति संगा।। (2/98/8)

उत्कर्षदायी सत्यशील आदि जीवन–मूल्यों के ग्रहण करने में बाधक तत्त्वों का सम्बोध कराते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा है कि कपट–दम्भ से रहित निर्विकारी तथा वासना और कामना विहीन व्यक्ति सच्चिदानन्द रूप से श्रेष्ठ जीवन–मूल्यों को अपने अन्तस में संधारण करने में सफल होते हैं। परस्त्री को अपनी माता के समान और परधन को विष तुल्य समझना आदर्श जीवन–मूल्य हैं, यथा –

काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा।।
जिन्ह कें कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह कें हृदय बसहु रघुराया।।
जननी सम जानहिं परनारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी।। (2/130/1–2,6)
जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु ।। (2/131)

शील को श्रेष्ठ जीवन–मूल्य माना गया है, तथापि शील के साथ–साथ नैतिक गुण, सेवा–भावना तथा धैर्य आदि भी जीवन मूल्यों के रूप में यहाँ निर्दिष्ट हैं, यथा –

नीति न तजिअ राजपदु पाएँ।। (2/152/3)
पालेहु प्रजहि करम मन बानी। (2/152/4)
धीरज धरहु बिबेकु बिचारी। (2/150/8)
धीरजु धरेउ कुअवसर जानी। (2/74/1)

इस प्रकार से श्रीरामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड में मानव–समाज द्वारा सहज ही अपनाये जाने योग्य वर्तमान में परम प्रासंगिक जीवन–मूल्य शील, कर्तव्यनिष्ठा, आशीर्वाद, धैर्य, सत्य, शालीनता, समत्व, सौहार्द आदि की विशुद्ध विवेचना है। मन, वाणी और कर्म का ऐक्य, जो आज प्रायः लुप्त होता जा रहा है, अनेकशः प्रेरक रूप में वर्णित है, यथा –

सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू।। (2/93/6)
सेवकु राउ करम मन बानी। सदा सहाय महेसु भवानी।। (2/285/4)

3 **श्रीरामचरितमानस का तृतीय काण्ड 'अरण्यकाण्ड'** है। इसमें कामना एवं वासना रहित जीवन जीने के जीवन–मूल्य निरूपित हैं। मानव–जीवन के उत्कर्षक सद्‌गुण ही जीवन–मूल्य कथ्य होते हैं। प्रस्तुत काण्ड में अध्यात्म–विषयक जीवन, माया, संसार, ईश्वर आदि के परिज्ञान के साथ उनके बन्धन से मुक्त होने के सद्‌गुण वर्णित हैं। इसमें प्रारम्भ में ही विनम्रता और शील गुणागारा 'सीता' के लिए अत्रि ऋषि पत्नी अनुसूया द्वारा प्रदत्त शुभाशीष रूप जीवन–मूल्य का निदर्शन मानव–समाज को आकृष्ट करता है, यथा–

अनुसुइया के पद गहि सीता। मिली बहोरि सुसील बिनीता।।
रिषिपतिनी मन सुख अधिकाई। आसिष देइ निकट बैठाई।। (3/5/1–2)

यहाँ, 'विनम्र बनो एवं आशीर्वाद ग्रहण करो', जैसे अनुकरणीय जीवन–मूल्य प्रदर्षित हैं। यहाँ धैर्य, धर्म, मित्र और नारी की अनुकूलता संजोने के लिए उनकी आत्मीयता एवं चाहत के जीवन–मूल्यों के प्रति भी आगाह किया गया है, यथा –

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी। (3/5/7)

इसमें अत्रि पत्नी अनुसूया द्वारा नारी धर्म की विवेचना नारियों द्वारा अपनाए जाने वाले जीवन–मूल्य ही हैं, जो उनके कल्याणार्थ कथित हैं। यहाँ पतिसेवा, पतिपरायण होना, पति की आज्ञा का पालन आदि नारी जीवन–मूल्य प्रदृष्ट हैं। मानव जीवन–मूल्यों में अहिंसा का बड़ा महत्व है। राक्षसों द्वारा ऋषि–मुनियों की हत्या कर हिंसा का बड़ा अस्थि समूह देखकर श्रीराम ने हिंसक राक्षसों का वध करने का व्रत लिया, यथा –

निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह।। (3/9)

भक्ति और सेवा क्षेत्र मानव–जीवन मूल्य एक महत्वपूर्ण अनुकरणीय आदर्श हैं। आज भक्ति को प्रायः कर्मकाण्ड के रूप में ग्रहण किया जाता है। इस काण्ड में नवधा भक्ति के माध्यम से निष्काम कर्मानुरति, सत्संग, सेवा, ज्ञान, इंद्रिय संयम, शील, संतोष, सरलता आदि सुन्दर शोभन मानव जीवन–मूल्यों को लोककल्याण हेतु संजोया गया है। ये बड़े ही लाभकारी, उपयोगी एवं अनुकरणीय सद्‌गुण हैं, यथा उल्लेख है कि–

छठ दम सील बिरति बहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा।।
सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोतें संत अधिक करि लेखा।।
आठवँ जथालाभ संतोषा। सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा।।
नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना।। (3/36/2–5)

शील, संतोष, सरलता, निश्चलता आदि आचरणीय जीवन–मूल्य आज पूर्णतः प्रासंगिक एवं आचरणीय सद्‌गुण हैं। इस काण्ड में भक्ति का एक साधन स्वकर्मरत भी निरूपित है, यथा –

निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।। (3/16/6)

अरण्यकाण्ड में विद्यार्जन से विवेक के उद्‌भव पर जोर दिया गया है तथा राज्य संचालन में नीति को और 'धनोपयोग से धर्म को आदृत स्थान प्रदान करने का उल्लेख है, यथा–

राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।।
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़ें किएँ अरु पाएँ।। (3/21/8–9)

इस प्रकार से अरण्यकाण्ड में श्रेष्ठ मानव जीवन–मूल्यों की सन्निधि एवं वर्णन है, जो वर्तमान समय में अनुकरणीय एवं परमोपादेय हैं। यहाँ झूठ और चोरी परम हेय निरूपित हैं। रावण अद्वितीय विद्वान था, लेकिन झूठ और चोर वृत्ति ने उसे निस्तेज कर श्वान (कुत्ते) का हेय स्वरूप प्रदान किया, यथा–

जाकें डर सुर असुर डेराहीं। निसि न नीद दिन अन्न न खाहीं।।
सो दससीस स्वान की नाईं। इत उत चितइ चला भड़िहाईं।।
इमि कुपंथ पग देत खगेसा। रह न तेज तन बुधि बल लेसा।। (3/28/8–10)

इस काण्ड में परम उपयोगी मानव जीवन–मूल्य श्रीराम की दया या कृपा प्राप्ति को कहा गया है। इनसे ही सभी प्रकार के विकार–काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि से व्यक्ति मुक्त होता है, यथा –

क्रोध मनोज लोभ मद माया। छूटहिं सकल राम कीं दाया। (3/39/3)

अस्तु, श्रीरामचरितमानस का अरण्यकाण्ड मानव जीवन–मूल्यों का श्रेष्ठ भण्डार है। इसमें वर्णित सभी मानव

जीवन–मूल्य वर्तमान में समाज द्वारा अपनाये जाने योग्य हैं तथा पूर्णतया सही दिशादर्शक एवं परम प्रासंगिक हैं।

4 **श्रीरामचरितमानस का किष्किन्धाकाण्ड** परस्पर सौहार्द बनाने, मेल–मिलाप एवं मैत्रीभाव जाग्रत करने का सुअवसर प्रदान करता है। यह 'करुणा' रूपी जीवन–मूल्य को प्रश्रय देता है एवं विषय रूप गरल से दूर रहने का उत्प्रेरक है, यथा –

जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल जेहिं पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस।। (4/मंगलाचरण)

इस काण्ड में वर्णित मानसी निर्मलता परमेश्वर प्रभु का परम सामीप्य प्रदान करती है। हनुमानजी जब अपने असली रूप में आये, तभी श्रीराम ने उन्हें अपने गले लगाया, यथा–

अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई।।
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सींचि जुड़ावा।।(4/3/5–6)

व्यक्ति जैसा है, उसी रूप में अपने को प्रस्तुत करना, यह वह निश्चल जीवन–मूल्य है, जिससे वह परमतत्त्व को प्राप्त कर लेता है। सच्चरित्र और निरभिमानता, ये दो जीवन–मूल्य भी यहाँ प्रदर्शित हैं। श्रीरामजी बालि से कहते हैं –

अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।।
मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारि सिखावन करसि न काना।। (4/9/7–9)

इस काण्ड में वर्षा और शरद ऋतु के बड़े सुन्दर रूप में वर्णन से जीवन–मूल्य प्रदर्षित किए गए हैं, यथा विद्वान् का विनीत होना सद्गुण रूप में प्रदृष्ट है –

बरषहि जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ।। (4/14/3)
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना।। (4/15/8)

इसी प्रकार शरद ऋतु के वर्णन में भी अनुकरणीय जीवन–मूल्य पिरोये गए हैं, यथा

उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिमि लोभहि सोषइ संतोषा।।
रस रस सूख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी।।(4/16/3एवं 5)

इस प्रकार श्रीरामचरितमानस के किष्किंधाकाण्ड में बड़े ही रसात्मक रूप से समाज के लिए उपादेय जीवन–मूल्य प्रस्तुत किए गए हैं।

5 **श्रीरामचरितमानस का सुन्दरकाण्ड** परम सुन्दर जीवन–मूल्यों से सुशोभित है। व्यक्ति का शान्त स्वरूप होना उसके श्रेष्ठ जीवन–मूल्यों में अनुपमेय मान्य है। श्रीराम शान्त स्वभाव हैं, इसलिए वे शान्ति प्रदान की क्षमता से युक्त कहे गए हैं। उनकी करुणा या दयावृत्ति भी उनके अनुकरणीय जीवन–मूल्य में परिगणित है, यथा –

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं।
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्।। (5/मंगलाचरण)

इस काण्ड में श्री हनुमानजी की वीरता, पौरुष, साहस, उत्साह, चातुर्य आदि सद्गुण मानव जीवन–मूल्यों के रूप में वर्णित हैं। अपने को लघु निरूपित कर विजयश्री की प्राप्ति करना भी यहाँ एक बहुमूल्य जीवन–मूल्य के रूप में प्रदृष्ट है, यथा –

सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा।।
बदन पइठि पुनि बाहेर आवा। मागा बिदा ताहि सिरु नावा।। (5/2/10–11)
लघु बनने से निरभिमानता आती है और शुभाशीषों की प्राप्ति होती है, यथोल्लेख है कि –
राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान।। (5/2)

बल, शील, अजरता, अमरता गुण तथा भगवत्कृपा आदि वे जीवन–मूल्य हैं, जिनकी प्राप्ति के लिए सभी को सदा तत्पर रहना चाहिए। हनुमानजी ने इन्हें अपनी सरलता से ही प्राप्त किया था। निश्छल सेवा भाव देखकर माँ सीता ने ये सद्गुण श्रीहनुमान को दिये थे, यथा –
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बल सील निधाना।।
अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।। (5/17/2–3)
सद्गुण या शोभन जीवन–मूल्य संजोने तथा भगवत्कृपा प्राप्त करने में अभिमान बाधक है, इसके त्यागने के पश्चात् सभी सद्गुणों के साथ–साथ भगवत्भक्ति भी प्राप्त होती है, जैसे कि श्रीहनुमानजी को प्राप्त हुई, यथा–
मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान।। (5/23)
नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी।।
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी। एवमस्तु तब कहेउ भवानी।। (5/34/1–2)
सर्वविधि कल्याण, सुयश, सुमति, शुभगति एवं संपूर्ण सुखादि जीवन–मूल्यों का संरक्षण परनारी के परित्याग में उल्लिखित है, यथा –
जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना।।
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद की नाईं।। (5/38/5–6)
शोभन जीवन–मूल्यों के संयोजन में कामादिक विकार भी बाधक होने के कारण त्याज्य कहे गये हैं, यथा –
काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत।। (5/38)
सुन्दरकाण्ड में मन की निर्मलता परम श्रेष्ठ जीवन–मूल्य के रूप में निर्दिष्ट है। यह आत्मदर्शन या भगवान का साक्षात्कार कराने में समर्थ है, यथा –
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।। (5/44/5)
श्रीरामचरितमानस महाकाव्य के नायक श्रीराम में सम्पूर्ण शुभ मानव जीवन–मूल्य या समस्त शोभन गुण विद्यमान हैं। इन सब जीवन–मूल्यों को अपनाने और आत्मसात करने के लिए तथा अपना जीवन धन्य बनाने के लिए गोस्वामी तुलसीदासजी ने सकल सुमंगलदायक श्रीराम के गुणों का गायन करने की उत्प्रेरणा प्रदान करते हुए उल्लेख किया है कि–
सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान।। (5/60)
सुन्दरकाण्ड तो इसलिए सुन्दर नामकरण से सुशोभित है, क्योंकि इसमें मानव मात्र के लिए कल्याणप्रद जीवन–मूल्यों को बड़ी सरलता से संजोया गया है। ये जीवन–मूल्य वर्तमान संदर्भ में अपनी अक्षय प्रासंगिकता को संधारण किये हुए हैं।

6 **श्रीरामचरितमानस के लंकाकाण्ड** में श्रीराम द्वारा आचरित विभिन्न जीवन–मूल्यों के विधान निरूपित हैं। 'लंका' का अर्थ शब्द–कोष के अनुसार व्यभिचार या लम्पट है। संस्कृत हिन्दी कोष (बामन शिव राम आप्टे), पृ0

868 पर लंका शब्द का विपर्यय कालम् है। अस्तु, लंका रूप लम्पट के लिए श्रीराम कालस्वरूप हैं। वे शोभन सद्गुणी, ज्ञानगम्य, गुणनिधि, दुष्ट दुर्विकारों के हन्ता, दैवी शक्ति सम्पन्न अर्थात् समस्त शुभ जीवन–मूल्यों के सुधाम कहे गये हैं, यथा –

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं।
योगीन्द्रं ज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम्।। (6/मंगलाचरण)

श्रीराम सात्त्विक गुणरूप आत्मतत्त्व हैं। यह सुन्दर जीवन का द्योतक है। सद्गुण या शोभन जीवन मूल्याधान से ही आसुरी वृत्तियों पर विजय मिलती है। काम, क्रोध, मद, लोभ आदि विकृत राक्षसी–विग्रह 'सद्गुणों' से ध्वस्त हो जाते हैं। मंजुल जीवन मूल्यागार 'राम' कामरूप वाले को अपना ग्रास बना लेते हैं। श्रीराम में समाहित मानवता संरक्षण के रत्न रूप मानव जीवन–मूल्य आज के प्रदूषित एवं विकास विकृत समाज को संभारने और इसे सात्त्विक बनाने में अपनी अहं भूमिका का निर्वहन करने में सक्षम हैं। इस हेतु श्रीरामचरितमानस के लंकाकाण्ड में प्रदत्त विराग की शिक्षा परमोपयोगी है, यथा –

संत कहहिं असि नीति दसानन। चौथेंपन जाइहि नृप कानन।। (6/7/3)

इस काण्ड में भी निरभिमानता रूप जीवन–मूल्य अपनाने की बात कहकर मानव समाज के स्थायित्व के लिए उसकी प्रासंगिकता के रूप में निरूपित किया है, यथा –

नृप अभिमान मोह बस किंबा। हरि आनिहु सीता जगदंबा।। (6/20/5)

अपने मुँह से अपनी प्रशंसा को नकारने सम्बन्धी जीवन–मूल्य व्यंगात्मक रूप से यहाँ दृष्टव्य है, यथा –

लाजवन्त तव सहज सुभाऊ। निज मुख निज गुन कहसि न काऊ।। (6/29/6)
इस काण्ड में नीतिगत जीवन–मूल्यों का वर्णन इस प्रकार से मिलता है –
पुनि कपि कही नीति बिधि नाना। मान न ताहि कालु निअराना।। (6/35/9)
बोला बचन नीति अति पावन। सुनहु तात कछु मोर सिखावन।। (6/48/6)

सद्गुण रूपी जीवन–मूल्यों को आचरण में लाने का यहाँ अनुकरणीय उपदेश है, यथा–

पर उपदेस कुसल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे।। (6/78/2)

इस काण्ड में भी आशीर्वाद प्राप्ति को श्रेष्ठ जीवन–मूल्य मानकर विशिष्ट स्थान प्राप्त है, यथा –

सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा। चित्रकूट आए जगदीसा।। (6/120/3)

विनम्रता, सद्गुण, शील, सौहार्द, सत्कर्म आदि सद्गुणों जैसे श्रेष्ठ जीवन–मूल्यों के संधारण से सहज ही शुभाशीष प्राप्त होता है। सामंजस्य और समन्वय दृष्टि से युक्त व्यक्ति को प्रकृति भी आशीर्वाद प्रदान करने में पीछे नहीं रहती, यथा उल्लेख है कि–

दीन्हि असीस हरषि मन गंगा। सुंदरि तव अहिवात अभंगा।। (6/121/9)

इस प्रकार से श्रीरामचरितमानस के लंकाकाण्ड में वर्णित सद्गुण या शोभन मानव जीवन–मूल्य वर्तमान में अपनी प्रासंगिकता को निरूपित करते हैं।

7 **श्रीरामचरितमानस का उत्तरकाण्ड** परम हितकारी एवं लोकोपकारी है तथा वर्तमान में पूर्णतः प्रासंगिक मानव जीवन–मूल्यों से सम्भृत है। इसके प्रारंभ में ही श्रीराम के द्वारा राष्ट्रप्रेम एवं राष्ट्रभक्ति का सर्वोत्तम जीवन–मूल्य प्रस्तुत किया गया है, जो राष्ट्रीय भावना के जागरण का श्रेष्ठ सोपान है और वर्तमान समय में परम प्रासंगिक है, यथा –

सुनु कपीस अंगद लंकेसा। पावन पुरी रुचिर यह देसा।।
जद्यपि सब बैकुंठ बखाना। बेद पुरान बिदित जगु जाना।।

अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ। यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ।। (7/4/2–4)

यहाँ मन, वचन और कर्म से धर्मानुशरण करने की सबके लिए सीख है, यथोल्लेख है कि –
जाहु भवन मम सुमिरन करहू। मन क्रम बचन धर्म अनुसरहू।। (7/20/2)

सभी लोगों को रोग–शोक रहित सुखमय जीवन के लिए वर्णाश्रमानुसार धर्म तथा वेदनीति के अनुसार सुपथ अपनाने का निदर्शन भी यहाँ दृष्टव्य है, यथा –
बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।। (7/20)

इस काण्ड में राजा के लिए भी प्रजा के सुख के हितों, प्रजा के समादर के शोभन जीवन–मूल्य उल्लिखित हैं, जो आज के परिप्रेक्ष्य में परम प्रासंगिक हैं, यहाँ तक कि श्रीराम अपनी त्रुटि को बताने के लिए, जो कि प्रजातंत्र का मूलाधार है, प्रजा जनों को अधिकार देते हैं, उल्लेख है कि –
जौं अनीति कछु भाशौं भाई। तौ मोहि बरजहु भय बिसराई।। (7/43/6)

यहाँ धर्म विषयक उल्लिखित आचरणीय जीवन–मूल्य बड़े ही प्रासंगिक हैं, यथा–

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।। (7/41/1)
अघ कि पिसुनता सम किछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना।। (7/112/10)
परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गरीसा।। (7/121/22)

लेख का निष्कर्ष यह है कि श्रीरामचरितमानस में राजा, प्रजा, संन्यासी, शिक्षक आदि सभी के धर्म, कर्म, कर्तव्य–पालन और शुचिता आदि सम्बन्धी उत्कृष्ट एवं श्रेष्ठ जीवन–मूल्य अच्छे समाज के स्थापन हेतु वर्णित हैं। ये सभी श्रेष्ठ मानव–जीवन मूल्य आज हमारे भारतीय समाज एवं विश्व समाज के शान्ति, सुख, सद्गति, सौहार्द तथा सद्गुण प्रसारण के लिए पूर्णतया प्रासंगिक हैं।

श्रीरामचरितमानस में वर्णित इन जीवन–मूल्यों के अनुसरण से ही **'सर्वे तु सुखिनः सन्तु'** की विचारधारा की सम्पुष्टि होगी।

भगवन्नाम–स्मरण एवं शरणागति ही सभी संकटों से बचने के लिए श्रेष्ठतम साधन है। धैर्य धारण करना ही श्रेष्ठ है। दुःख एवं सुख दिन–रात की तरह आने–जाने वाले हैं। सर्वदा कोई सुखी या दुखी नहीं रहता है। स्वयं भगवान अवतार काल में संकट सहकर अपने भक्तों को शिक्षा देते हैं।

भरत सरिस को राम सनेही

पं. राधा कृष्ण पाठक (अतीत), भांडेर, दतिया (म.प्र.), फोनः 8770436182

त्याग एवं समर्पण की प्रतिमूर्ति का नाम भरत है, जो ज्ञान की अविरल धारा है और उन्हें उसी का अवलंबन है, किसी और का नहीं। महात्मा तुलसीदासजी लिखते हैं ''को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा'' (2/233/2) अखिल लोकनायक ही जाने, हम तो केवल भाव से जो आता है लिख लेते हैं, शायद वाग्विलास ही हो। पग–पग पर श्रीरामचरितमानस के पात्र और प्रसंग हमारे जीवन के आधारभूत मंत्र हैं, जो गोस्वामी तुलसीदासजी की ज्ञान लेखनी का पराचिंतन है। लोक–कल्याण और स्वः कल्याण का रास्ता ही त्याग और समर्पण है, जीव इस धरा पर प्रारब्धवश उस छूटे हुए योग को जोड़ने का अवसर लेकर आता है, जिसे ईश कृपा ही जाने।

नामकरण ऋषियों की दूरदृष्टि तथा गुणों का आधार ही नाम की आधारशिला है। भरतजी के नामकरण पर गुरु वसिष्ठजी कहते हैं –

बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। (1/197/7)

जिसको जन्मते ही विश्व भरण–पोषण का जिम्मा मिला हो, उस जीव का प्रारब्ध उसको उसी रास्ते पर चलने के लिए सतत् प्रेरित करता है। यह मानव–हठ हो सकता है, यदि वह रास्ते से विमुख हो दिशाविहीन हो जाए, लेकिन समर्पण जिसके स्वभाव में है, स्वभावगत मिला है, उसका रास्ता तो उसी दिशा में जाता है, जहाँ सांसारिक बंधन समाप्त हो जाते हैं और तब फिर समर्पण की रज्जु के सहारे मंजिल मिलना तय हो जाता है। आनंद के सागर में त्याग और समर्पण की नाव से ही विहार करने पर सुखानुभूति प्राप्त हो सकती है, राग–अनुराग की नावें कुछ दूर जाकर डूब जाती हैं। माता कैकेई का पुत्रप्रेम भरत को देता है राजगद्दी का वरदान, पर वरदान पाकर भी जो सर्वदा समर्पित भाव में है, उसे उस राजसत्ता का मोह कैसे सता सकता है। यही भरत का चरित्र है। उनके त्याग के संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं –

अवध राजु सुर राजु सिहाई। दसरथ धनु सुनि धनदु लजाई।।
तेहिं पुर बसत भरत बिनु रागा। चंचरीक जिमि चंपक बागा।। (2/324/6–7)

उनके त्याग में बाधा पैदा करने वाले राग–द्वेष का सर्वथा अभाव है। यह त्याग सांसारिक व्यवहार में कुछ भटकन पैदा करता है, लेकिन जहाँ बंधनों से बंधने का जिसका स्वभाव ही न हो, उसे वह बंधन कभी बांध नहीं सकता। समस्त गुरुजन परिजनों के खातिर पद स्वीकार कर लेना और फिर उस पद–प्रतिष्ठा को अपने इष्ट के चरणों में समर्पित करने वाले हैं भरत।

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं। सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।। (2/316/4)
नित पूजत प्रभु पाँवरी प्रीति न हृदयँ समाति।
मागि मागि आयसु करत राज काज बहु भाँति।। (2/325)

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने जितना भी भरत चरित्र का निरूपण किया है स्तुतेय है, लेकिन फिर भी लगता है जैसे कुछ और शेष रह गया है, क्योंकि जिस भरत का चिंतन प्रभु श्रीराम स्वयं करते हों, वह कितना गुणग्य होगा, यह कल्पना से परे का विषय है, ज्ञान और चिंतन की परिधि से बाहर है।

भरत सरिस को राम सनेही। जगु जप राम रामु जप जेही।। (2/218/7)

परब्रह्म परमात्मा किसके चिंतन और समर्पण का साक्षी नहीं है, उस विश्वरूप को किसे परखने की आवश्यकता है, लेकिन मानवीय सोच परिस्थितियों बस तथा विधि के विधान को स्वीकारने में अक्षम होने के कारण अपनों की परख करने में धोखा खा जाता है। अहं सदैव चिंतन–मनन के रास्ते पर आड़े आ जाता है। भाई लक्ष्मण को संदेह होना इसी दोष का प्रभाव कह सकते हैं, किंतु श्रीरामजी के लिए जीवन समर्पित करने वाले लक्ष्मणजी के संदर्भ में यह विचार भी उचित नहीं लगता है, क्योंकि जहाँ पर, जिसके कारण श्रीरामजी की प्रतिष्ठा में आँच आती हो या उन्हें लेषमात्र भी किसी के कारण क्षणिक कष्ट भी हो तो वे सहन नहीं कर सकते और तुरंत बिना प्रभु से आज्ञा लिए ही बोल पड़ते हैं। इस संदर्भ में यह चौपाई उल्लेखनीय है –

बहुरि सोचबस भे सियरवनू। कारन कवन भरत आगवनू।। (2/227/1)

भरत मिलन के रास्ते, भरत के समर्पण भाव से दूर बाह्य रचना देखकर तथा अपने स्वामी श्रीरामजी को चिंतित देखकर ही लक्ष्मणजी ने यह कह दिया –

आजु राम सेवक जस लेऊँ। भरतहि समर सिखावन देऊँ।।
राम निरादर कर फलु पाई। सोवहुँ समर सेज दोउ भाई।। (2/230/3–4)

भाई–भाई के प्रेम के आंकलन में श्रीरामजी को सोचवश जानकर धीरज धारण न कर पाने से ही लक्ष्मणजी ने उपर्युक्त शब्द बोले, लेकिन वहीं भगवान श्रीराम ने उस विश्वास की मजबूती को भाई लक्ष्मण को कह सुनाया, जो वास्तव में सच्चाई ही थी और बाद में लक्ष्मणजी द्वारा भरतजी के प्रति अनुचित शब्दों का प्रयोग करना भूल ही साबित हुई। लक्ष्मणजी के आवेषमय वचन सुनकर श्रीरामजी ने भरतजी के प्रेम की पराकाष्ठा का वर्णन करते हुए कहा –

सुनहु लखन भल भरत सरीसा। बिधि प्रपंच महँ सुना न दीसा।। (2/231/8)
भरतहि होइ न राजमदु बिधि हरि हर पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ।। (2/231)

श्रीरामचरितमानस के प्रसंग और पात्र आज के परिवेश में हमारे राग–द्वेष जैसे विकारों को, जो आज समाज में व्याप्त हैं, दूर करने में समर्थ हैं। आज भाई–भाई में संवादहीनता का दौर बढ़ गया है, भरोसा टूट गया है। भाई–भाई कभी एक साथ बैठकर विचार नहीं करते, दोषारोपण का सिलसिला हमने तीसरे हाथों में सौंप दिया है। यही परेशानी का कारण बना हुआ है। हमारे पास जीवन जीने के समर्थ सूत्र श्रीरामचरितमानस में उपलब्ध हैं, लेकिन आज हम केवल श्रीरामचरितमानस का पाठ करवा कर दुख निवारण की सोच बनाए हुए हैं, कभी उसमें वर्णित प्रसंगों, चरित्रों पर चिंतन–मनन नहीं करते। प्रत्यक्ष रूप से यह दिखाई देता है कि माता कैकेई ने अपने स्वार्थ के लिए भरत को टीका और राम को वनवास मांगा, लेकिन गहनता से विचार करने पर ज्ञात होता है कि दोनों चरित्र पात्र श्रीरामचरितमानस में त्याग–तपस्या की प्रतिमूर्ति हैं। माता कैकेई ने राजधर्म को दृष्टिगत मानव–कल्याण के लिए स्वयं वैधव्यता को जानबूझ कर स्वीकार करके रामजन्म के हेतु को पूर्ण किया। यही आदर्श और मानव–कल्याण की प्रतिमान सोच और समर्पण की पराकाष्ठा है। वहीं भरत ने सांसारिक सुख के प्रलोभन को छुआ तक नहीं, जिसका उदाहरण त्याग और तपस्या की परिभाषा करता है। श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में ही लिखा है –

प्रनवउँ प्रथम भरत के चरना। जासु नेम ब्रत जाइ न बरना।। (1/17/3)

महात्मा तुलसीदासजी की रचना श्रीरामचरितमानस व्यावहारिक और आध्यात्मिक दोनों विधाओं को निरूपित करती है। इस अनुपम कृति की विशेषता है कि जो जिस दृष्टि से पढ़ेगा, समझेगा उसे वह दृष्टांत वैसा ही उसी प्रकार से परिलक्षित होगा जैसे –

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी।। (1/241/4)

व्यावहारिक ज्ञान होना हमारे परिवार और सामाजिक परिवेष के लिए जहाँ आवश्यक है, वहीं अध्यात्म का आधार होना भी अति आवश्यक है, क्योंकि अध्यात्म की धरा ही मनुष्य को जीवन में प्रत्येक स्थिति, परिस्थिति में चलने की दिशा प्रदान करती है। आज इसका हमारे जीवन में अभाव होता जा रहा है और इसीलिए दुखानुभूति प्रत्येक व्यक्ति की समस्या बनकर विचारों में भ्रम की स्थिति बना रही है, दिशाविहीनता पैदा कर रही है। जब तक आध्यात्मिक आधार नहीं होगा, हमें जीवन का स्वरूप दिखेगा ही नहीं।

भरत त्याग और तपस्या का नाम है, राग–द्वेष जिसकी परछाईं को नहीं छू सकते। हमें प्रसंगों का अवलोकन केवल व्यावहारिक पक्ष को लेकर नहीं करना है, बल्कि उसका मूल तत्व भी समझना है। भ्रम कुतर्क पैदा करता है, जो समर्पण के रास्ते का रोड़ा बन जाता है। भरत–चरित्र को जितना महात्मा तुलसीदासजी ने लिखा और कौन लिख सकता है, उनके लिए कहे गए एक–एक शब्द का विमर्ष हमारे जीवन को दिशा देने के लिए पर्याप्त है, यथा –

जौं न होत जग जनम भरत को। सकल धरम धुर धरनि धरत को।।
कबि कुल अगम भरत गुन गाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा।। (2/233/1–2)

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने जितना विषद चरित्र–चित्रण भाई भरत का किया है, उतना

किसी अन्य पात्र का नहीं किया है। अयोध्याकाण्ड के दोहा क्रमांक 157 से इस सोपान के समापन (दोहा क्रमांक 326) तक भरत–चरित्र का वर्णन किसी न किसी रूप में मिलता है। विस्तार भय से अति संक्षिप्त में कुछ बिन्दुओं पर यहाँ चर्चा की जा रही है।

1) ननिहाल में रहते हुए भी भरतजी दिन–रात श्रीसीता–रामजी के चिंतन में रहते हैं, इसलिए जब से अवध में श्रीराम वनगमन की प्रक्रिया प्रारंभ हुई थी, तभी से भरतजी को रात्रि में बुरे–बुरे सपने आते थे। वे जागकर शिव–आराधना करके अपने परिवार और श्रीसीता–रामजी की कुशलता के लिए प्रार्थना करते थे, यथा –

अनरथु अवध अरंभेउ जब तें। कुसगुन होहिं भरत कहुँ तब तें।।
देखहिं राति भयानक सपना। जागि करहिं कटु कोटि कलपना।। (2/157/5–6)

2) महाराजा दशरथ के देहान्त के पश्चात् गुरु वसिष्ठजी ने संदेशा भेजकर भरतजी को तुरंत बुलवाया। आकर जब उन्होंने अपनी माता कैकेयी से राम वनवास का समाचार सुना, तब पिताजी का मरण भूलकर अपने को दोषी मानकर स्तब्ध हो गए।

भरतहि बिसरेउ पितु मरन सुनत राम बन गौनु।
हेतु अपनपउ जानि जियँ थकित रहे धरि मौनु।। (2/160)

3) भरतजी अपनी विमाता कौसल्याजी के पास जाते हैं और विश्वास दिलाते हुए, विभिन्न जघन्य पापों का विवरण सुनाते हुए कहते हैं कि हे माता! यदि इस षड़यंत्र में किंचित मात्र भी मेरा मत हो, तो विधाता मुझे उन सभी पापों का फल दें।

तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ। जननी जौं यहु जानौं भेऊ।। (2/168/8)

4) पिताजी का अन्तिम संस्कार करने के पश्चात् जब राजसभा में उनके राजतिलक का प्रस्ताव आता है, जिसमें माता कौसल्या का भी मत था, तब वे एक ही बात कहते हैं कि भैया राम के चरण–कमल देखे बिना मेरे मन की जलन नहीं जा सकती है –

आपनि दारुन दीनता कहउँ सबहि सिरु नाइ।
देखें बिनु रघुनाथ पद जिय कै जरनि न जाइ।। (2/182)

5) श्रीरामजी को मनाने भरतजी पूरे समाज के साथ चित्रकूट की ओर प्रस्थान करते हैं। निषादराज को संदेह हो जाता है और वे भरतजी से युद्ध करने की तैयारी करने लगते हैं, पर एक वृद्ध निषाद के सुझाव पर भरतजी का मन्तव्य जानने हेतु सात्विक, राजसी और तामसी तीनों प्रकार के उपहार लेकर उनके सामने खड़े हो जाते हैं। भरतजी ने राम सखा सुनते ही तुरंत रथ से उतर कर दौड़ कर निषादराज को गले से लगा लिया।

राम सखा सुनि संदनु त्यागा। चले उतरि उमगत अनुरागा।। (2/193/7)

6) शृंगवेरपुर में गंगाजी से भरतजी यही प्रार्थना करते हैं कि सीता–रामजी के चरणों में मेरा सहज ही प्रेम हो।

जोरि पानि बर मागउँ एहू। सीय राम पद सहज सनेहू।। (2/197/8)

7) शृंगवेरपुर से प्रयागराज के मार्ग में भरतजी सबसे पीछे पैदल ही चल रहे थे। सेवकों ने घोड़े पर सवार होने का निवेदन किया तो वे कहते हैं –

रामु पयादेहि पायँ सिधाए। हम कहँ रथ गज बाजि बनाए।।
सिर भर जाउँ उचित अस मोरा। सब तें सेवक धरमु कठोरा।। (2/203/6–7)

8) प्रयागराज में त्रिवेणी संगम से भरतजी यही मांगते हैं कि चाहे स्वयं श्रीरामजी उन्हें कुटिल समझें, पर आपके अनुग्रह से मेरे मन में दिन प्रतिदिन श्रीसीता–रामजी के चरणों में प्रेम बढ़ता रहे।

जानहुँ रामु कुटिल करि मोही। लोग कहउ गुर साहिब द्रोही।।
सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। (2/205/1–2)

9) भरद्वाजजी ने अपने तपोबल से सुर दुर्लभ सुखभोग भरतजी के लिए उत्पन्न कर दिए थे, किंतु उन्होंने

उसका कुछ भी उपभोग नहीं किया। गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं –

संपति चकई भरतु चक मुनि आयस खेलवार।
तेहि निसि आश्रम पिंजराँ राखे भा भिनुसार।। (2/215)

10) प्रयागराज से चित्रकूट के मार्ग में उनके प्रेमभाव को देखकर सिद्ध मुनि कहते हैं कि यदि संसार में भरत जैसा भाव (प्रेम) न होता तो चर को अचर और अचर को चर कौन करता, यथा –

निरखि सिद्ध साधक अनुरागे। सहज सनेहु सराहन लागे।।
होत न भूतल भाउ भरत को। अचर सचर चर अचर करत को।। (2/238/7–8)

11) भरतजी जब चित्रकूट में श्रीरामजी के पीछे से उन्हें दण्डवत् प्रणाम करते हैं, तब लक्ष्मणजी के बताने पर श्रीरामजी प्रेममग्न होकर इतने उतावले होकर भरतजी को गले लगाने उठे कि कहीं उनका धनुष गिरा और कहीं पर वस्त्र।

उठे रामु सुनि पेम अधीरा। कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा।। (2/240/8)

12) महाराजा जनक रानी सुनयना से भरतजी की प्रशंसा करते हुए कहते हैं –

परमारथ स्वारथ सुख सारे। भरत न सपनेहुँ मनहुँ निहारे।। (2/289/7)

13) चित्रकूट में गुरु वसिष्ठजी, महाराजा जनक तथा अन्य सभी सचिव आदि भरतजी से कहते हैं कि वे श्रीरामजी को अयोध्या लौटने को कहें, तब भरतजी स्पष्ट रूप से निवेदन करते हैं –

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना। सेवा धरमु कठिन जगु जाना।।
स्वामि धरम स्वारथहि बिरोधू। बैरु अंध प्रेमहि न प्रबोधू।। (2/293/7–8)

14) विस्तृत विचार मंथन के बाद चित्रकूट में जब यह निर्णय हुआ कि श्रीरामजी वापिस अयोध्या नहीं जाएँगे, तब भरतजी इसे श्रीरामजी की इच्छा और आज्ञा समझ कर प्रसन्नता से स्वीकार करते हैं –

मुख प्रसन्न मन मिटा बिषादू। भा जनु गूँगेहि गिरा प्रसादू।। (2/307/4)

15) अयोध्या लौटने पर जब प्रभु पादुकाओं को राज सिंहासन पर बैठाकर उनकी आज्ञा से भरत राज–काज सँभालने लगे, तब उन्होंने गुरु वसिष्ठजी से आज्ञा माँगी कि वे भैया राम की तरह ही एक तपस्वी का जीवनयापन करना चाहते हैं, तब गुरुजी ने कहा –

समुझब कहब करब तुम्ह जोई। धरम सारु जग होइहि सोई।। (2/323/8)

16) गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं कि जो श्रीरामजी के अनुरागी हैं वे भोग–विलास का त्याग ठीक उसी तरह से करते हैं जैसे कोई वमन (उल्टी) का त्याग कर देते हैं।

रमा बिलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी।। (2/324/8)

यह उपमा भरतजी पर सटीक उतरती है।

मुनि भरद्वाज ने भरतजी से कहा था कि श्रीरामजी के प्रति तुम्हारे अनन्य–असीम प्रेम को देखकर उन्हें ऐसा लगता है कि तुम तो मानो शरीरधारी श्रीरामजी के प्रेम ही हो –

तुम्ह तौ भरत मोर मत एहू। धरें देह जनु राम सनेहू।। (2/208/8)

उल्लेखनीय है कि श्रीरामजी को तो केवल प्रेम ही प्यारा है, यथा –

रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा।। (2/137/1)

श्रीरामजी के प्रति भरतजी के इसी असीम प्रेम, समर्पण और त्याग की भावना के कारण ही सारा संसार तो 'राम–राम' जपता है, पर स्वयं श्रीरामजी भाई भरत का चिंतन करते हैं, यथा–

भरत सरिस को राम सनेही। जगु जप राम रामु जप जेही।। (2/218/7)

शिव महिमा

सरल शास्त्री, नोएडा, फोनः 9311384212

कोई तो है 'सरल' रे निर्माता संसार।
सर्वोपरि सत्ता वही वही जगत का सार।।
जग का संचालक 'सरल' जगन्नियंता एक।
पर निगमागम का कथन उसके नाम अनेक।।
ब्रह्म कहें कुछ जन उसे वासुदेव हरि–भक्त।
उसे सदाशिव ही कहें भक्ति भाव शिव–भक्त।।
'सरल' सृष्टि से पूर्व था वह निर्गुण अद्वैत।
पर जग–रचना के समय वह बन जाता द्वैत।।
वह निर्गुण परब्रह्म शुचि वही सच्चिदानन्द।
एक अनंत अखंड शिव हर अव्यक्त मुकन्द।।
मन वाणी मति से परे विगत मोह मद काम।
ज्ञेय ज्ञान सर्वज्ञ शिव ज्ञानेश्वर गुण – धाम।।
आशुतोष करुणालु भव मृत्युंजय भुवनेश।
मरणासन्नों तारने काशी दें उपदेश।।
शिव व्यापक सर्वत्र जग शिवशंकर दो रूप।
मंगलमय संहारमय 'शिव' अरु 'रुद्र' स्वरूप।।
जग–मंगल शिव रूप से करते परम उदार।
रुद्र रूप से काल बन करते जग–संहार।।
विष–ज्वाला जलते मचा जब जग हाहाकार।
तब शिव ने विष–पान कर रक्षा की संसार।।
त्रिपुर – बिलों में बैठ विष उगल रहे विषदंत।
तब उन नागों का 'सरल' किया पिनाकी अंत।।
जब–जब जगदाकाश में छाते संकट घोर।
तब–तब हर हरते उन्हें गर्दन 'सरल' मरोर।।
व्यथित सती ने जनक से पा पति का अपमान।
देह भस्म योगाग्नि कर भंग किया अभिमान।।
'सरल' लगाते रोक मन शिव समाधि चिर काल।
मदन डिगाने जब लगा भस्म किया तत्काल।।
पर हरने आतंक जग करते गिरिजा–ब्याह।
योगी अनुरागी बने चले प्रेम की राह।।
प्रेमी पति उनसे बड़ा नहीं जगत में अन्य।
शिव–जीवन वैषम्य, पर शिवादर्श है धन्य।।
चुल्लू भर जल मात्र से होते शीघ्र प्रसन्न।
आशुतोष इस हेतु ही कहते उन्हें प्रपन्न।।

वे अवढर दानी बड़े सीधे सरल स्वभाव।
स्वयं नग्न पर रंक को दें इन्द्रासन चाव।।
इस कारण सुर–असुर जन करते हैं शिव–भक्ति।
उन सबको निष्पक्ष शिव फल दें भक्तों–भक्ति।।
जटा समस्यायें 'सरल' गंगा शान्ति प्रतीक।
इनसे मानव जाति को शिक्षा मिलती नीक।।
चाहे जीवन में बिछें विकट समस्या–जाल।
रहें शान्त तो हानि कुछ कर न सकें जंजाल।।
मानव–जीवन में 'सरल' प्रबल तीन ही शूल।
काम क्रोध अरु लोभ ही सब रोगों की मूल।।
इन्हीं प्रबलतम शूल का 'सरल' प्रतीक त्रिशूल।
मुट्ठी में रख शिव कहें रखो नियंत्रण शूल।।
मुंड–माल्य जो शिव गले पत्नी–प्रेम प्रतीक।
प्रिया–प्रेम की नर–जगत दिखलायी यह लीक।।
कोटि नमन शिव पद–कमल करुणालय सुखधाम।
अटकी जीवन–नाव भव पहुँचा दो निज धाम।।

– **शिक्षा और संस्कार जिंदगी जीने के मूल मंत्र हैं, शिक्षा कभी झुकने नहीं देगी और संस्कार कभी गिरने नहीं देंगे।**

– **हमें कहाँ मालूम था कि सुख और उम्र की आपस में बनती नहीं। कड़ी मेहनत के बाद तो सुख घर आते हैं, पर उम्र नाराज होकर चली जाती है।**

– **जो 'आपके' हैं वे आपको देखकर 'व्यस्त' नहीं हो सकते। साहब! जो आपको देखकर 'व्यस्त' हो जायें, वे आपके कभी नहीं हो सकते।**

– **'पछतावा' अतीत नहीं बदल सकता 'और चिन्ता' भविष्य नहीं सुधार सकती, इसलिए वर्तमान का आनंद लेना ही जीवन का सच्चा सुख है।**

– **झुक जाते हैं जो लोग आपके लिए किसी भी हद तक, वे सिर्फ आपकी इज्जत ही नहीं करते, आपसे प्रेम भी करते हैं।**

दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन
परम पूज्यपाद श्री रामकिंकरजी महाराज (उनके प्रवचनों के संकलन से साभार)

बिरला अकादमी ऑफ आर्ट एण्ड कल्चर द्वारा रामनवमी, संवत् 2057 (सन् 2000) में प्रकाशित महाराजश्री के प्रवचनों का संकलन, ''दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन'' नामक पुस्तक में 8 प्रवचनों का संकलन है। **प्रथम प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत है।** आगामी अंकों में क्रमशः सभी प्रवचन प्रकाशित किए जाने का विचार है।

एक दिन लंकाधिपति रावण की बहिन सूर्पणखा दण्डकारण्य के उस स्थल–पंचवटी में आती है, जहाँ भगवान राम श्रीसीताजी और श्रीलक्ष्मणजी के सहित निवास कर रहे थे। यही सूर्पणखा जनकनंदिनी श्रीसीता और भगवान राम के वियोग का कारण बनती है। इसी दण्डकारण्य में ही एक और नारी पात्र शबरी भी निवास करती है, जो भगवान राम को वह उपाय बताती है, जिससे भगवान राम और श्रीसीताजी का पुनः मिलन होता है।

भगवान राम जब श्रीसीताजी की खोज में निकलते हैं तो इस क्रम में वे भक्तिमती शबरी के आश्रम में आते हैं और वे शबरी से प्रश्न करते हुए कहते हैं कि –

जनकसुता कइ सुधि भामिनी। जानहि कहु करिबरगामिनी।। (3/36/10)

क्या आप सीताजी की सुधि जानती हैं? और यदि जानती हैं तो बताएँ कि उन्हें पाने का उपाय क्या है? भगवान राम का प्रश्न सुनकर शबरी बड़े संकोच और विनम्रता से उन्हें जो उपाय बताती है, भगवान राम उसका पालन करते हैं और अंततोगत्वा सीताजी को पाने में सफल होते हैं। इस प्रसंग के माध्यम से जो संकेत–सूत्र हमें प्राप्त होते हैं, वे बड़े महत्वपूर्ण हैं।

मनुष्य के सामने जो एक शाश्वत समस्या रही है, वह समस्या है दुख की। प्रत्येक व्यक्ति सुख ही सुख पाना चाहता है, पर न चाहने पर भी दुख आ ही जाता है। ऐसी स्थिति में 'दुख के कारण क्या हैं तथा उसके निवारण के क्या उपाय हैं?' यह जानने की जिज्ञासा व्यक्ति के हृदय में स्वाभाविक रूप से होती है। 'मानस' में भगवान राम और लक्ष्मणजी के संवाद के माध्यम से इसी की ओर संकेत किया गया है।

समाज में एक बड़ा प्रचलित शब्द है– 'माया' और यह माना जाता है कि माया ही दुख का कारण है। भगवान राम भी लक्ष्मणजी के प्रश्नों का उत्तर यही कहकर देते हैं कि माया का एक रूप ऐसा भी है जो दुख का मूल कारण है। वे कहते हैं कि –

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।। (3/15/5)

प्रत्येक व्यक्ति व्यवहार में बार–बार इस 'माया' शब्द का प्रयोग करता रहता है, पर सचमुच इसका स्वरूप क्या है? क्या यह कोई ऐसी नारी है जो व्यक्ति को अपने बंधन में बाँध कर कष्ट दिया करती है? कई बार उसे एक साकार रूप में भी आरोपित कर दिया जाता है, पर वस्तुतः भगवान राम लक्ष्मण से माया की जो व्याख्या करते हैं उसका पूरा का पूरा लक्षण सूर्पणखा के चरित्र में दिखाई देता है। इसी प्रकार भगवान राम ने जिस भक्ति को सुख का मूल बताया था, उसका साकार रूप शबरी के चरित्र में दिखाई देता है। इसका तात्पर्य है कि माया रूपी सूर्पणखा दुख का कारण बनती है और भक्तिरूपा शबरी वह उपाय बताती है कि जिससे दुखों को दूर करने वाली भक्ति की प्राप्ति होती है।

सूर्पणखा और शबरी में एक अंतर और भी है। सूर्पणखा उस लंकाधिपति रावण की बहिन है जो शक्तिशाली है, विद्वान है, तपस्वी है तथा जिसके जीवन में अनेकानेक विशेषताएँ और विलक्षणताएँ विद्यमान दिखाई देती हैं, पर शबरी के बारे में ऐसी किसी विशेषता का उल्लेख नहीं मिलता है। उनके पिता कौन थे, उनकी कौन सी जाति थी तथा उनके संबंधी कौन थे, इनका भी वर्णन नहीं मिलता, यहाँ तक कि उनका नाम भी ठीक से ज्ञात नहीं है। जंगल में आभीर, जमन, किरात, खस व स्वपच आदि की तरह शबर नाम की भी एक जाति थी, इस नाते उन्हें 'शबरी' नाम प्राप्त हो गया हो। मानस में यही कहा गया है कि –

जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि असि नारि। (3/36)

शबरी के जीवन में ऐसा कुछ भी नहीं है, व्यक्ति जिसका गौरवपूर्वक उल्लेख करना चाहता है।

प्रभु जनकनंदिनी सीता तथा लक्ष्मणजी के साथ चित्रकूट में आनंदपूर्वक निवास कर रहे थे। वे यदि चाहते तो वनवास की पूरी अवधि चित्रकूट में ही रहकर आनंदपूर्वक व्यतीत कर सकते थे। कैकेयी ने भी उन्हें वन में निवास करने के लिए ही कहा था, अतः किसी भी वन में प्रभु रह लेते तो उनकी आज्ञा का पालन हो ही जाता, पर प्रभु स्वयं चित्रकूट की प्रेम और आनंदमयी भूमि को छोड़ कर आगे दण्डकारण्य की ओर प्रस्थान करने का निर्णय करते हैं। गोस्वामीजी ने प्रभु के चित्रकूट–निवास की अवधि के आनंद का वर्णन 'मानस' में किया है। गोस्वामीजी मानो जानते थे कि लोगों के मन में यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ सकता है कि सीताजी राजमहल में पली–बढ़ी थीं, जहाँ दिव्य कोमल शय्या आदि सुख–सुविधा के सभी साधन उपलब्ध थे, अतः वन में उन्हें बड़े कष्ट उठाने पड़े होंगे? इसीलिए गोस्वामीजी कहते हैं कि –

सिय मनु राम चरन अनुरागा। अवध सहस सम बनु प्रिय लागा।। (2/140/4)

चित्रकूट की यह भूमि सीताजी के लिए हजारों अयोध्या से भी अधिक सुख देने वाली थी। गोस्वामीजी यह भी कहते हैं कि –

सीय लखन जेहि बिधि सुखु लहहीं। सोइ रघुनाथ करहिं सोइ कहहीं।। (2/141/1)

भगवान प्रतिदिन यही प्रयास करते हैं कि जिससे श्रीसीताजी व लक्ष्मणजी को सुख मिले और वे प्रसन्न रहें। इस प्रकार जब ईश्वर ही निरंतर सुख देने के लिए व्यग्र हो जायें, तो फिर उस सुख और आनंद का कौन वर्णन कर सकता है? गोस्वामीजी ने चित्रकूट की बड़ी प्रशंसा की है। किसी ने उनसे पूछ लिया कि आप चित्रकूट की इतनी प्रशंसा क्यों करते हैं? उसमें ऐसी क्या विशेषता है? गोस्वामीजी ने कहा कि –

क्यों कहौं चित्रकूट–गिरि, संपति–महिमा–मोद–मनोहरताई।
तुलसी जहँ बसि लषन–रामसिय आनँद.अवधि अवध बिसराई।। (गीतावली2/46/9)

जिस वन में रहकर भगवान राम आनंद की भूमि अयोध्या को भूल गए, उस चित्रकूट की महिमा का वर्णन भला मैं क्या कर सकता हूँ, पर ऐसी दिव्य और आनंदमयी चित्रकूट–भूमि का परित्याग कर भगवान राम ने दण्डकारण्य में जाने का निर्णय क्यों किया? इसका एकमात्र कारण यही है कि संसार में मनुष्य जीवन से जुड़े जो विविध पक्ष हैं उन सबको भगवान राम अपने लीला–चरित्र के द्वारा दिखलाना चाहते हैं और इनसे जुड़ी हुई जो समस्याएँ हैं, उन सबका क्या समाधान होता है, इसे भी बताना चाहते हैं। भगवान राम लक्ष्मणजी को उपदेश देते हुए, माया की व्याख्या करते हैं तो यही कहते हैं कि –

तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ।। (3/15/4)

माया के दो रूप हैं–विद्या माया और अविद्या माया। फिर दोनों में क्या अन्तर है, यह बताते हुए प्रभु कहते हैं कि –

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।। (3/15/5)

अविद्या माया दुख देने वाली है तथा इसी के कारण जीव इस संसार–कूप में पड़ा हुआ है। इस संसार का परिचय समुद्र और नदी के रूप में भी दिया जाता है, पर गोस्वामीजी यहाँ इसे समुद्र या नदी न कहकर 'कूप' (कुआँ) कहते हैं। इसके पीछे भी एक सुंदर संकेत है। गोस्वामीजी मानो बताना चाहते हैं कि नदी और समुद्र के संदर्भ में व्यक्ति का पुरुषार्थ, भले ही एक सीमा तक ही हो, पर चल सकता है। वह अपने हाथ–पाँव चला कर तैरने की चेष्टा कर सकता है, नाव की सहायता लेकर उसे खेकर पार जाने का यत्न कर सकता है, पर कुएँ में गिरे हुए व्यक्ति को कोई दूसरा निकालने वाला हो, तभी वह बच पाएगा। ठीक इसी प्रकार माया के कूप में पड़ा हुआ व्यक्ति एकमात्र भगवान की कृपा से ही बाहर आ सकता है। इसका अर्थ यही है कि अविद्या माया अत्यन्त दुखदायी है। फिर विद्या माया की व्याख्या करते हुए बताते हैं कि –

एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।। (3/15/6)

विद्या माया संसार का निर्माण करती है, पर यह निर्माण कार्य वह अपने बल पर नहीं, अपितु ईश्वर की प्रेरणा और शक्ति से करती है। 'मानस' में श्रीसीताजी के लिए भी 'माया' शब्द का प्रयोग किया गया है। मनु और शतरूपा

की प्रार्थना पर जब भगवान श्रीसीताजी के साथ उनके सामने प्रकट होते हैं, उस समय वे उनसे श्रीसीताजी का परिचय देते हुए कहते हैं कि –

आदिसक्ति जेहिं जग उपजाया। सोउ अवतरिहि मोरि यह माया। (1/152/4)

यही वह आदिशक्ति माया है, जो संसार का सृजन करती है। इसका अभिप्राय है कि जहाँ एक ओर माया के द्वारा संसार का निर्माण होता है, वहीं दूसरी ओर व्यक्ति को दुख भी माया के द्वारा ही प्राप्त होता है। पर दोनों में अंतर यही है कि एक यदि विद्या माया है तो दूसरी को अविद्या माया कहा गया है। श्रीसीताजी व लक्ष्मीजी विद्या माया हैं तथा सूर्पणखा अविद्या माया का रूप है।

सारे पुराणों में 'वन' को बड़ा महत्व दिया गया है। श्रीरामचरितमानस में भी वन को महत्वपूर्ण माना गया है। एक ओर वन में जहाँ बड़े–बड़े महामुनि निवास करते हैं, वहीं दूसरी ओर राक्षस तथा दुष्ट प्रवृत्ति वाले भी वन में निवास करते हैं। भगवान राम और भगवान कृष्ण की लीला में वन को बड़ा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। भगवान कृष्ण 'वृन्दावन' के रूप में वन के महत्व को प्रकट करते हैं। भगवान राम की लीला में भी 'चित्रकूट' और 'दण्डकारण्य' इन दोनों वनों का बड़ा महत्व है।

चित्रकूट के वन में आनंद ही आनंद है और दण्डकारण्य में समस्याएँ ही समस्याएँ हैं। व्यक्ति वन में किसी मुनि के आश्रम में पहुँच जाए तो वन में भी जाकर उसे प्रसन्नता की अनुभूति होती है, पर व्यक्ति वन में यदि अकेला हो और भटक जाए, उसे कोई मार्ग समझ में न आए, तो ऐसी स्थिति में वन उसके लिए आनंद के स्थान पर दुख की ही सृष्टि करेगा। वन की ये दोनों स्थितियाँ मनुष्य के भीतर विद्यमान होती हैं। गोस्वामीजी यही कहते हैं कि –

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु। (1/31)

चित्रकूट चित्त की भूमि है। दण्डकारण्य के लिए वे कहते हैं कि –

दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किए पावन।। (1/24/7)

दण्डकारण्य मन की भूमि है। चित्त की स्थिति में पहुँच जाने पर एक शुद्ध आनंद का साक्षात्कार होता है और व्यक्ति जब मन के धरातल पर होता है तो दुखों से अछूता नहीं रह सकता। यह अनुभव किया जा सकता है कि एकान्त अथवा पूजास्थल में बैठकर ध्यान करने से एक अलग प्रकार का आनंद प्राप्त होता है, पर व्यक्ति चौबीसों घंटे ध्यान में ही तो नहीं बैठा रह सकता। उसकी एक सीमा होती है। उसके बाद व्यक्ति जब बाहर आता है, तब उसके सामने मन और व्यवहार की समस्या होती है। यद्यपि यह बात कही जाती है कि परमार्थ बड़ा कठिन है और स्वार्थ तो संसार का व्यवहार होने से बड़ा सहज और सरल है, पर विचार करने पर यह बात भिन्न दिखाई देती है, उल्टी दिखाई देती है। ध्यान में बैठने में आनंद का अनुभव करने के बाद जब व्यक्ति बाहर निकलता है तो उसके सामने परिवार की समस्या, समाज की समस्या और न जाने कितनी समस्याएँ आ जाती हैं। बहुत सी ऐसी बातें भी होती हैं जिन्हें पढ़ या सुनकर ही व्यक्ति बेचैन हो जाता है।

प्रसंग आता है कि प्रभु रामभद्र जब लंका–विजय के बाद अयोध्या पधारे तो उनके साथ मुख्य–मुख्य वानर गण भी आए हुए थे। वे सब राज्याभिषेक के बाद भी प्रभु के साथ छः माह तक रहे और उस दिव्य स्थिति में अपना घर–परिवार आदि सब कुछ भूल गए।

बिसरे गृह सपनेहुँ सुधि नाहीं। (7/16/1)

गोस्वामीजी कहते हैं कि तब प्रभु ने एक निर्णय लिया कि अब इन बंदरों को यहाँ से विदा करना चाहिए। उस समय उन्होंने बंदरों से जो शब्द कहे वे बड़े अनोखे हैं। भगवान राम बंदरों से यदि यह कहते कि बहुत दिनों तक आपने मेरी सेवा की, अब कुछ दिन जाकर घर–परिवार की भी चिन्ता कीजिए, तो लगता कि यह ठीक बात है, क्योंकि यह एक व्यावहारिक भाषा है। पर वे ऐसा नहीं कहते। प्रभु ने कहा कि –

अब गृह जाहु सखा सब।

मित्रो! तुम सब अब अपने–अपने घरों को जाओ! पर घर जाकर घर के कामकाज करने मत लग जाना, अपितु–

भजहु मोहि दृढ़ नेम।

वहाँ जाकर मेरा भजन करना। पूछा जा सकता है कि यदि भजन ही करना है तो यहाँ आपके पास रहकर करना चाहिए! आप तो घर भेज रहे हैं, वहाँ भजन कैसे होगा? इसका एक व्यावहारिक अर्थ है। एक विद्यार्थी साल भर अध्ययन करता है, पाठ याद करता है, पर जो कुछ साल भर में उसने पढ़ा या याद किया है, उसका पता तो परीक्षा के दिन ही चलता है। संस्कृत के एक श्लोक में वर्णन आता है कि एक विद्यार्थी को परीक्षा में कुछ न करते देखकर परीक्षक ने जब यह पूछा कि तुम पाठशाला में खूब ध्यान से बैठकर संस्कृत के श्लोकों और व्याकरण के सूत्रों को पढ़ा करते थे, पर आज क्या हो गया? तो उत्तर में उस विद्यार्थी ने कहा– क्या करूँ? गुरु–दक्षिणा में कुछ न कुछ दिया जाता है, मेरे पास देने के लिए कुछ और तो था नहीं, इसलिए जो कुछ गुरुजी से पढ़ा था, वही उन्हें वापस कर दिया।

यत्पठितं तद् गुरुदेव निवेदितं।

भगवान राम मानो बंदरों को यह संकेत देना चाहते थे कि इस छः महीने की अवधि में यहाँ रहकर तुम लोग जो शिक्षा प्राप्त करते रहे उसकी परीक्षा तो घर जाकर ही होगी।

व्यक्ति के परमार्थ की परीक्षा परमार्थ में नहीं, स्वार्थ में है। भगवान राम यह बताना चाहते हैं कि मित्रो! यहाँ मेरे पास रहकर भजन करना तो बड़ा सरल है, पर तुम्हारे भजन की दृढ़ता की परीक्षा तो घर में जाकर ही होगी। इसलिए भगवान ने जो शब्द चुना वह बहुत महत्वपूर्ण है। वे कहते हैं कि –

अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम। (7/16)

यह स्वाभाविक है कि हम ध्यान की स्थिति में, परमार्थ की स्थिति में बुराइयों से दूर रहें, पर जब हम स्वार्थ–साधन के लिए बाहर निकलेंगे तो उस समय असली समस्या सामने आएगी। भगवान राम बंदरों को यही संकेत देना चाहते हैं कि यदि तुम लोग यह मानते हो कि अयोध्या में रहकर, मेरे निकट रहकर मेरा भजन करना, मेरी सेवा करना ही मेरी भक्ति है, तो यह एक अधूरी दृष्टि है, क्योंकि अब तक तुम मुझे यहाँ अयोध्या में निवास करता हुआ देखते थे, मुझे मुझमें देखते थे, पर तुम लोग कितने दिनों तक अयोध्या में रहोगे? मैं भी कितने दिनों तक यहाँ रहकर लीला करूँगा? समय की एक सीमा होती है, अतः तुम सब अपने–अपने घरों में जाकर मेरा भजन करो और –

सदा सर्बगत सर्बहित जानि करेहु अति प्रेम।। (7/16)

यदि समाज के सब लोगों में, घर–परिवार के सभी संबंधियों में मैं दिखाई देने लगूँ और तुम उनकी सेवा इसी भावना से करो, तब इसका अर्थ होगा कि तुम सचमुच मुझे पहिचान गए हो और तुम्हारी भक्ति दृढ़ है। भगवान राम यह बताना चाहते हैं कि वे सब काल में हैं, सब देश में हैं और प्रत्येक व्यक्ति में हैं। यह बड़े महत्व का सूत्र है। इस प्रकार स्वार्थ और परमार्थ दोनों ही स्थितियों में सर्वत्र ईश्वर की अनुभूति कर उससे प्रेम करना ही दृढ़ भक्ति है।

भगवान राम चित्रकूट को छोड़कर दण्डकारण्य में जाते हैं, उसके द्वारा वे यही बताना चाहते हैं कि व्यक्ति जब चित्त की भूमि से मन की भूमि में जाता है तो व्यवहार की सब जटिलताएँ सामने आती दिखाई देती हैं, पर उस समय भी मन में केवल विकृत वृत्तियाँ ही नहीं, अनेक श्रेष्ठ व कल्याणमयी वृत्तियाँ भी विद्यमान होती हैं। सूर्पणखा विकृत वृत्ति का एक रूप है। 'सूर्पणखा' का अर्थ होता है कि जिसके नाखून सूप के समान हों। प्राचीनकाल में जो नाम रखे जाते थे उनके अर्थ भी बड़े सांकेतिक होते थे। जैसे, 'कुंभकर्ण' नाम का अर्थ होता है कि जिसके कान घड़े के समान हों। पूछा जा सकता है कि कुंभकर्ण के कान ही बड़े थे, क्या उसके और भी अंग बड़े नहीं थे? यद्यपि कुंभकर्ण का पूरा शरीर ही विशाल था, पर उसे कुंभकर्ण कहने का एक विशेष अर्थ है। वस्तुतः कुंभकर्ण अहंकार का प्रतीक है और प्रत्येक अहंकारी व्यक्ति को कान बड़े प्रिय होते हैं। ऐसा व्यक्ति चाहता है कि कोई उसकी प्रशंसा करे, इसलिए वह निरंतर अपने कान खुले रखता है। इस प्रकार कान के प्रति विशेष ममत्व बुद्धि रखने तथा उसमें केन्द्रित रहने से उसका नाम कुंभकर्ण पड़ा।

सूर्पणखा का भी एक सांकेतिक अर्थ है। सारे शरीर में नाखून ही एक ऐसा विलक्षण अवयव है जिसे समय–समय पर काटते रहना पड़ता है, जबकि अन्य अवयवों को काटने से बचाया जाता है। नाखून काटने पर भी बढ़ता रहता है, इसलिए इसे बार–बार काटते रहने की आवश्यकता पड़ती है। 'मानस' में गोस्वामीजी सूर्पणखा का

परिचय देते हुए कहते हैं कि –

सूपनखा रावन कै बहिनी। दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी।। (3/17/3)

वह 'दुष्ट हृदय' और 'दारुन' है। इसी प्रसंग में ही अविद्या माया का परिचय देते हुए उसे भी, ''एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा।'' 'दुष्ट' और 'दुखरूपा' बताया गया है। 'मानस' में बार–बार माया का स्मरण 'दारुण' कहकर ही किया गया है। उत्तरकाण्ड में गोस्वामीजी 'मानस' के गाने, सुनने और पढ़ने का फल बताते हुए भी यही कहते हैं कि –

सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरै।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरै।। (7/130/छंद)

'मानस' में यह भी कहा गया है कि –

तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि। (3/43)

गोस्वामीजी यह जो सूर्पणखा को अविद्या माया के रूप में प्रस्तुत करते हुए उसकी तुलना सर्पिणी से करते हैं, इसके पीछे भी एक बड़े महत्व का संकेत है। सर्प की एक विचित्रता तो यह है कि उसके पास कान नहीं होते। यद्यपि प्रचलित मान्यता यह है कि सांप बीन की धुन सुनकर नाच उठता है, पर यह ठीक नहीं है। संस्कृत में सर्प को 'चक्षुश्रया' कहा गया है, जिसका अर्थ है कि वह आँखों के द्वारा सुनता है। सूर्पणखा की भी यही स्थिति है।

एक शब्द और है– 'श्रुतिश्रवा'। इसका अर्थ है– कान से सुनने वाला। जो कान से सुनेगा वह भगवान पर विश्वास करेगा पर जो आँख से सुनेगा वह केवल दृष्टि से दिखाई देने वाले पदार्थों को ही सत्य मानेगा। ऐसा व्यक्ति मानता है कि पदार्थों का भोग कर लेने से ही जीवन का उद्देश्य पूरा हो जाता है। माया का जो दुख है, वह दृष्टि के श्रुतिपरक न होकर नेत्रपरक होने के कारण ही प्राप्त होता है। क्या प्रमाण है कि जो दिखाई देता है वह ठीक है? या वह है भी अथवा नहीं है?

सर्प तो प्रायः सब जगह होते हैं। गांव में कभी–कभी ऐसा होता है कि किसी व्यक्ति को कोई ऐसा जन्तु काट लेता है, जो अंधेरे के कारण दिखाई नहीं देता। लोग जानते हैं कि यदि किसी अन्य जन्तु ने काटा है तो कोई घबराने की बात नहीं है, पर यदि सर्प ने काटा है तो उसकी तुरन्त दवा करनी होगी। ऐसी स्थिति में यह जानने के लिए कि सांप ने काटा है कि नहीं, उस व्यक्ति को नीम की पत्ती खिलाई जाती है। यदि नीम की पत्ती उसे मीठी लगती है तो लोग समझ लेते हैं कि निश्चित रूप से उसे सांप ने ही काटा है। इसमें एक बहुत बड़ा व्यंग्य है और यही माया की भी विचित्रता है। किसी ने गोस्वामीजी से पूछा– 'आप कहते हैं कि माया बड़ी दुखद है, पर हमें तो वह बड़ी सुखद लगती है, बड़ी मीठी प्रतीत होती है।' गोस्वामीजी ने कहा कि इससे बहुत प्रसन्न होने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसका तो अर्थ यही है कि तुम्हें सांप ने काट लिया है। जहरीले सांप के द्वारा काटे गए व्यक्ति को क्या नीम के मीठे लगने पर, यह सोचकर प्रसन्नता होती है कि यह तो बड़ी अच्छी बात है, क्योंकि इससे नीम का कड़वापन मिट गया? कदापि नहीं! अपितु वह व्यक्ति इस बात से चिन्तित हो जाता है कि यदि उसकी उचित दवा नहीं की गई तो उसकी मृत्यु निश्चित है। गोस्वामीजी कहते हैं कि ठीक उसी प्रकार से –

काम भुजंग डसत जब जेही। बिषय नीम कटु लाग न तेही।।

जिसे काम–भुजंग डस लेता है उसे विषय का कडुआ नीम भी मीठा लगता है। इसका अर्थ यही है कि 'जब विषय मीठे लगें तो समझ लेना चाहिए कि माया रूपी सर्पिणी ने डस लिया है।'

भगवान राम सूर्पणखा के माध्यम से यह बताते हैं कि माया किसी प्रकार नकली सुंदर वेष बनाकर आकृष्ट करने की चेष्टा करती है, भुलावा देने की चेष्टा करती है और किस तरह से जीवन में दुख की सृष्टि कर देती है। फिर वे यह भी बताते हैं कि जब जीवन में कोई दुख या विपत्ति आ जाये तो व्यक्ति भक्तिमती शबरी का आश्रय लेकर इन दुखों से छुटकारा पा सकता है।

इस प्रकार 'मानस' में सूर्पणखा और शबरीजी के माध्यम से माया और भक्ति की व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान

श्री कैलाश त्रिपाठी, औरैया (उ.प्र.), फोनः 9897939095

'गुरु' शब्द का सामान्य अर्थ महान, श्रेष्ठ, भारी व बड़ा बताया गया है, परन्तु व्याकरणाचार्यों ने इसकी नाना प्रकार से व्याख्या की है, यथा—1. गुनि गरबे। गिरती, गिलति इति गुरुः अर्थात् जो शिष्य के अज्ञान को निगल जाता है, उसे गुरु नाम से अभिहित किया जाता है, 2. गिरति अज्ञानान्धकारम् इति गुरुः अर्थात् जो शिष्य के अज्ञानान्धकार को नष्ट कर देता है, वह गुरु है और 3. गुरु उद्यमन्ते। गुरु ते सत्पथे प्रवर्तयति शिष्यम् इति गुरुः अर्थात् जो शिष्य को सन्मार्ग पर प्रवृत्त कर गतिमान करता है उसे गुरु कहा जाता है। गुरु शब्द के इस संक्षिप्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि जो हमें बहु आयामी सत्य का साक्षात्कार करा कर कल्याण का मार्ग प्रशस्त करे वही गुरु है। वस्तुतः यदि कोई गुरु पद का अधिकारी है तो उसमें गुरु शब्द के समस्त अर्थ और व्याख्यायें स्वमेव समाहित दिखायी देती हैं।

श्रीरामचरितमानस के अरण्यकाण्ड में गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीराम द्वारा शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश किये जाने के प्रसंग में **''गुरु पद पंकज सेवा तीसरि भक्ति अमान''** कह कर गुरु सेवा का तीसरी भक्ति के रूप में प्रतिपादन किया है। प्रसंगानुरूप यहाँ भक्ति के स्वरूप पर पुनः एक विहंगम दृष्टि अपेक्षित है।

सेवा के अर्थ में प्रयुक्त **'भज्'** धातु में **'क्ति'** प्रत्यय के योग से बने भक्ति शब्द में सेवा से सम्बद्ध श्रद्धा, विश्वास, प्रेम, अनुरक्ति एवं समर्पणादि भाव किसी न किसी रूप में व्याप्त हैं। मनीषियों ने अपने—अपने चिन्तन एवं अनुभूतियों के आधार पर भक्ति को विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया है। शाण्डिल्य ने ईश्वर में परानुरक्ति को भक्ति मानकर **'सा परानुरक्ति रीश्वरे' (भक्ति सूत्र 1/2)** तथा नारद ने परम प्रेमरूपा कहकर 'सा त्वस्मिन पर प्रेम रूपा' भक्ति का विषद निरूपण किया है। भागवत में परानुरक्ति का तात्पर्य निर्हेतुक, निष्काम तथा निरन्तर प्रेम बतलाया गया है— **''अहैतुक्यव्यहृता या भक्ति पुरुषोत्तमे' (3/39/12)** तथा अहेतुकी भक्ति को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि एक मात्र भगवान में ही लगे हुए चित्तयुक्त मनुष्य की वेद विहित कर्मों में लगी हुई तथा विषयों का ज्ञान कराने वाली इन्द्रियों (कर्मेन्द्रिय एवं ज्ञानेन्द्रिय) की सत्वमूर्ति श्रीहरि के प्रति स्वाभाविकी प्रवृत्ति ही अहेतुकी भक्ति है। आशय यह है कि नाना रूपों में अंतःकरण चतुष्टय अर्थात् मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार का श्रीभगवान में समाहित होकर उनके प्रेम में सराबोर हो जाना ही भक्ति है। मधुसूदन सरस्वती भक्ति को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि —

श्रुतस्य भगवद्धर्माद् धारावाहिकतां गता।
सर्वेशे मनसो वृत्तिर्भक्तिरित्याभिधीयते।।

भगवद् धर्म अर्थात् भगवद्गुण श्रवण आदि से द्रवीभूत हुए चित्त की सर्वेश्वर भगवान के विषय में धारावाहिकता को प्राप्त हुई वृत्ति ही भक्ति है। इस प्रकार भक्ति के तीन स्तर दृष्टिगत होते हैं— साधन, भाव और प्रेम। जिसको करने से हृदय में तदनुरूप भाव उत्पन्न हो वह साधन भक्ति है। जब मन उसमें डूब जाता है तो वह भाव भक्ति है एवं भाव की परिपक्व अवस्था का नाम प्रेम है। यही भक्ति है अर्थात् भक्ति साधन भी है और साध्य भी। अभिप्राय यह है कि श्रीभगवान में प्रेम के प्रयास की प्रारंभिक अवस्था भी भक्ति है और अन्तिम अवस्था भी भक्ति है। भक्ति की इस यात्रा के नाना रूप और सोपान हो सकते हैं। संतों का संग, कथा श्रवण में अनुरक्ति, नाम साधना, कीर्तन, स्मरण, अर्चन, वन्दन, पाद सेवनम् आदि सोपानों में एक सशक्त साधन गुरु पद सेवा भी है। किसी भी साधन की साधना गुरु के माध्यम से सरल, सहज और निर्बाध हो जाती है। वह साधन मार्ग में आने वाली बाधाओं को पार करने में सहयोगी होता है। गुरु के बिना किसी साधन की साधना सहज संभव नहीं है। सभी साधनों की साधना गुरु के माध्यम से होने के कारण **'गुरु सेवा'** भक्ति का ही एक रूप है।

श्रीमद्भागवत में शौनकजी ने सूतजी महाराज से पूछा कि आप हमें कोई ऐसा शाश्वत साधन बताइये जो सबसे अधिक कल्याणकारी तथा पवित्र करने वालों में भी पवित्र हो तथा जो भगवान की प्राप्ति करा दे, तो सूतजी ने कहा कि सर्वश्रेष्ठ साधन गुरु ही है। चिन्तामणि केवल लौकिक सुख दे सकती है और कल्पवृक्ष अधिक से अधिक स्वर्गीय सम्पत्ति दे सकता है, परन्तु गुरुदेव प्रसन्न होकर शिष्य को योगियों को भी दुर्लभ भगवान का वैकुण्ठधाम दे

देते हैं–

श्रेयसां यद्भवेच्छेयः पावनानां च पावनम्।
कृष्णप्राप्तिकरं शा श्वत्साधनं तद्वदाधुना।।
चिन्तामणिर्लोकसुखं सुरद्रुः स्वर्गसम्पदम्।
प्रयच्छति गुरुः प्रीतो वैकुण्ठं योगिदुर्लभम्।। (श्रीमद्भागवत 1/7–8)

इसकी पुष्टि संत कबीर की अनुभूति में भी दृष्टिगत होती है –

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागौं पाँय।
बलिहारी गुरु आपने गोविन्द दियो मिलाय।।

सभी सद्ग्रथों एवं संतों की अनुभूतियों में गुरु महिमा को अनन्त बताया गया है। गुरु महिमा की कोई सीमा नहीं है। कबीर की वाणी में –

सब धरती कागद करूँ, लेखनि सब बनराय।
सात समुद्र की मसि करूँ, गुरु गन लिखा न जाय।।

'मानस' के अयोध्याकाण्ड में तुलसीदासजी ब्रह्मर्षि वाल्मीकि के माध्यम से गुरु का महत्व इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं –

तुम्ह तें अधिक गुरहि जियँ जानी। सकल भायँ सेवहिं सनमानी।। (2/129/8)

गोस्वामीजी बालकाण्ड में लिखते हैं कि यदि ब्रह्मा भी क्रोध करें, तो गुरु बचा लेते हैं, पर गुरु से विरोध करने पर जगत में कोई भी बचाने वाला नहीं है–

राखइ गुर जौं कोप बिधाता। गुर बिरोध नहिं कोउ जग त्राता।। (1/166/6)

आगे पुनः उत्तरकाण्ड में वे लिखते हैं कि गुरु के बिना कोई भवसागर को पार नहीं कर सकता चाहे वह ब्रह्माजी या शंकरजी के समान ही क्यों न हो।

गुर बिनु भव निधि तरइ न कोई। जौं बिरंचि संकर सम होई।। (7/93/5)

स्कन्ध पुराण के अंतर्गत शिव–पार्वती संवाद के रूप में 352 श्लोकी गुरु गीता में गुरु की विषद महिमा वर्णित है। संकेत रूप में एक श्लोक यहाँ दृष्टव्य है –

गुरुर्देवो गुरुधर्मो गुरौ निष्ठा परं तपः।
गुरोः परतरं नास्ति त्रिवारं कथयामि ते।। (152)

अर्थात् गुरु ही देव हैं, गुरु ही धर्म हैं, गुरु में निष्ठा ही परम तप है। गुरु से अधिक और कुछ नहीं है। यह मैं तीन बार कहता हूँ।

अभिप्राय यह है कि गुरु से प्राप्त दृष्टि, चेतना, ऊर्जा, आत्मबोध एवं साधना रहस्य आदि के कारण गुरु–महिमा रेखांकन शब्दों से परे है। यह अनुभूति का विषय है, वाणी का नहीं। मानसकार ने तीसरी भक्ति के रूप में गुरु–सेवा का निर्देश किया है। वस्तुतः सेवा शब्द स्वयं में अत्यंत व्यापक है। गोस्वामीजी द्वारा 'मानस' में यत्र–तत्र सेवा के स्वरूप और व्यापकता के संकेत दिए गए हैं, यथा –

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना। सेवाधरमु कठिन जगु जाना।।
स्वामि धरम स्वारथहि बिरोधू। बैरु अंध प्रेमहि न प्रबोधू।। (2/293/7–8)

निम्नांकित श्लोक गुरु के प्रति सर्वोच्चता का भाव स्थापित करता है –

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात परब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः।।

अर्थात् गुरु ही ब्रह्मा हैं, गुरु ही विष्णु हैं और गुरु ही महेश्वर हैं तथा गुरु ही साक्षात ब्रह्म हैं। ऐसे गुरु को मैं प्रणाम करता हूँ।

गोस्वामी तुलसीदासजी की मान्यता है कि गुरु–सेवा से तन, मन एवं दृष्टि शुद्धि स्वमेव हो जाती है। मानस

में वे लिखते हैं –

तन शुद्धि

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
अमिय मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भव रुज परिवारू।।
सुकृति संभु तन बिमल बिभूती। मंजुल मंगल मोद प्रसूती।।
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी। किएँ तिलक गुन गन बस करनी।।(1/1/1–4)

मैं गुरु के चरण–कमलों के रज की वंदना करता हूँ जो सुरुचि, सुगन्ध तथा अनुराग रूपी रस से पूर्ण है और वह अमरमूल का सुन्दर चूर्ण है, जो समस्त भवरोगों के परिवार को नष्ट करने वाला है। वह रज (धूलि) पुण्यवान पुरुष (सुकृति) रूपी शिवजी के शरीर पर सुषोभित निर्मल विभूति है, जो सुन्दर, कल्याण और आनंद की जननी है तथा भक्त के मनरूपी सुन्दर दर्पण के मैल को दूर करने वाली और तिलक करने से गुणों के समूह को वश में करने वाली है।

मन शुद्धि

श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि। (2/वंदना प्रकरण)

अभिप्राय यह है कि श्रीगुरु के चरण–कमलों की धूलि से मन रूपी दर्पण स्वच्छ निर्मल होकर स्थिर (ठीक) हो जाता है।

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।। (1/वंदना प्रकरण)

मैं गुरु के चरण–कमलों के रज की वन्दना करता हूँ जो कृपा के समुद्र और मनुष्य रूप में श्रीहरि ही हैं तथा जिनके वचन महामोहरूपी घने अंधकार को नष्ट करने के लिए सूर्य–किरणों के समूह हैं।

दृष्टि शुद्धि

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती।।
दलन मोह तम सो सप्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू।।
उघरहिं बिमल बिलोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के।।
सूझहिं राम चरित मनि मानिक। गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक।। (1/1/5–8)

गुरु–चरणों के नाखून की ज्योति मणियों के प्रकाश के सदृश है, जिसके स्मरण मात्र से हृदय में दिव्य दृष्टि आ जाती है। यह प्रकाश अज्ञान रूपी अंधकार का नाश करने वाला है। जिसके हृदय में वह आ जाता है, उसके बड़े भाग्य हैं। उसके आने से हृदय के निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसार रूपी रात्रि के दोष–दुख मिट जाते हैं तथा श्रीराम चरित्र रूपी मणि और माणिक्य, गुप्त और प्रकट जहाँ जो जिस खान में हैं, सब दिखाई पड़ने लगते हैं।

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन। नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।। (1/2/1)

गुरु–चरणों की धूलि सुंदर मुलायम नयनामृत अंजन है, जो नेत्रों के दोषों का नाश करने वाला है।

तुलसीदासजी ने गुरु पद पंकज सेवा के साथ अमानता को भी संयुक्त किया है, अतः यहाँ अमानता पर भी विचार आवश्यक है।

किसी से किसी भी प्रकार के मान की इच्छा न रहना ही अमानता है। वस्तुतः हम स्वयं को किसी न किसी रूप में अन्यों से विशिष्ट या श्रेष्ठ मानकर अपनी उसी विशिष्टता या श्रेष्ठता के प्रति मान की इच्छा या अपेक्षा करते हैं। गीता के दसवें अध्याय में वर्णित विभूति योग में वर्णन है कि यदि सृष्टि में कहीं किसी प्रकार की कोई विशिष्टता है तो उसे श्रीभगवान के तेज की अभिव्यक्ति मानना चाहिए।

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोऽशसम्भवम्।। (गीता/10/41)

जो–जो भी विभूतियुक्त अर्थात् ऐश्वर्ययुक्त, कान्तियुक्त और शक्तियुक्त आदि वस्तु हैं, उस–उसको तू मेरे तेज के अंश की ही अभिव्यक्ति जान।

गोस्वामी तुलसीदासजी के अनुसार भगवान को अमानी प्रिय है। श्रीरामजी स्वयं कहते हैं –

सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी।। (7/38/4)

वस्तुतः गुरु–सेवा और अमानता भक्ति की आधारशिला होने के साथ–साथ शिखर तक जाने का सहज मार्ग है, अतः मानसकार ने इसका नवधा भक्ति के अंतर्गत तीसरी भक्ति के रूप में सार्थक प्रतिपादन किया है।

यहाँ पर यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि सद्गुरु का स्वयं चयन करना दुष्कर है, अतः इस हेतु पात्रता प्राप्त करनी आवश्यक है और यह प्राप्त होने पर ईश्वर की कृपा से सद्गुरु स्वयं सुपात्र के समीप आ जाते हैं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही।। (7/69/7)

जब तक हमें सद्गुरु न मिल जाएँ, तब तक भगवान को ही गुरु मानकर उनकी सेवा में रहना चाहिए, यथा–

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।। (श्रीरामचरितमानसः 1/वंदना प्रकरण)

इस संदर्भ में गीताप्रेस से प्रकाशित स्वामी रामसुखदासजी की पुस्तकें 'सच्चा गुरु कौन' और क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं? पठनीय हैं। श्रीरामचरितमानस में भी ठगने वाले गुरुओं से सावधान किया है, यथा –

हरइ सिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक महुँ परई।। (7/99/7)

मानस में वर्णित 3 पक्षियों से प्रेरणा

श्रीरामचरितमानस में विभिन्न उपमाओं में प्रयुक्त चकवा, चकोर और चातक अध्यात्म की दृष्टि से हमें मार्गदर्शन दे सकते हैं।

चकवा और चकवी दिन में तो दोनों साथ–साथ दाना चुगते हैं, खेलते हैं, किन्तु रात होते ही दोनों दूर–दूर हो जाते हैं, एक नदी के इस किनारे पर और दूसरा नदी के उस किनारे पर। यह साधकों के लिए संकेत है। मानस में भरतजी जब भरद्वाजजी के आश्रम में रात्रि विश्राम के लिए रुकते हैं, तब गोस्वामीजी ने लिखा– **संपति चकई भरतु चक मुनि आयस खेलवार (2/215)।** इसी प्रकार साधक को हमेशा सावधान रहना चाहिए।

दूसरा पक्षी चकोर संकेत करता है कि हमें इष्ट पर चकोर की तरह नजर रखनी चाहिए, तभी लाभ मिल सकेगा। **पुष्प–वाटिका प्रसंग में सिय मुख ससि भए नयन चकोरा।। (1/230/3)** कहकर संत शिरोमणि तुलसीदासजी ने हमें श्रृंगार रस का अद्भुत आनंद देने के साथ–साथ अपने इष्टदेव पर ऐसे ही प्रेम करने का संदेश दिया है।

तीसरा पक्षी चातक, गजब का प्रेमी है। स्वाती नक्षत्र में बरस रहे जल का ही सेवन करता है। नदी, तालाब, समुद्र इत्यादि में भरे जल से उसे कोई सरोकार नहीं है। उसे उसका प्रेमी बादल ही जब देगा, तब ही ग्रहण करेगा, नहीं तो पूरे साल उड़ता हुआ, प्यासा हूँ, की रटन लगाए रखेगा। प्यास की वजह से गंगा नदी में गिर जाए तो भी जल में चोंच नहीं डुबाएगा, दृष्टि बादल पर ही रखता है, इसलिए प्रेम–पथ का अनुपम उदाहरण है, चातक। मानस में वाल्मीकिजी (परमभक्त के संदर्भ में) कहते हैं –**लोचन चातक जिन्ह करि राखे। (2/128/6)**

सभी प्रेममार्गी साधक इन पक्षियों से प्रेरणा प्राप्त करके अपने आध्यात्मिक जीवन को सबल कर सकते हैं।

उपासना स्वरूपा माता सुमित्रा

डॉ. सहृदय नारायण उपाध्याय, झाँसी (उ.प्र.), फोनः 7860039496

माता सुमित्रा का व्यक्तित्व भगवान राम के वन गमन के पहले लोक दृष्टि से ओझल था, किन्तु करुणा वरुणालय भगवान राम तो सब कुछ जानने वाले हैं, उन्हें माता के व्यक्तित्व का लोक दृष्टि में प्रकटीकरण भी करना था, क्योंकि प्रभु माता के अंतरंग प्रेम—रस से पूर्णतः परिचित थे, अतः उन्होंने लक्ष्मणजी के वन चलने के समर्पण पूर्ण आग्रह को स्वीकारते हुए, उन्हें विदा माँगने के लिए माता सुमित्रा के पास भेजा।

मागहु बिदा मातु सन जाई। आवहु बेगि चलहु बन भाई।। (2/73/1)

लक्ष्मणजी की निष्ठा व प्रेम देखते हुए प्रभु यह नहीं कहते कि माँ से आज्ञा ले लो। विदा माँगने के लिए कहते हैं, क्योंकि आज्ञा के लिए जाने हेतु तो लक्ष्मणजी मना भी कर सकते थे, पर विदा तो शिष्टाचार का एक अंग है। विदा लेने वाला तो स्वयं जाने का निश्चय करके ही जाता है। विदा तो शिष्टाचारवश मांगता है, इसमें कोई बाध्यता नहीं होती। अब दो प्रश्न उठते हैं, मात्र विदा मांगने के लिए लक्ष्मणजी को भेजने की क्या आवश्यकता थी और दूसरे यह कि प्रभु स्वयं माता सुमित्रा के पास विदा माँगने क्यों नहीं गए। सुमित्रा अम्बा के निकट भगवान राम का न जाना तो आश्चर्यजनक है ही, पर यह माँ भी कम अद्भुत नहीं है, जो अपने पुत्र को प्रभु सेवा का आदेश देकर सहर्ष विदा कर देती है और चौदह वर्ष के वनवास जाने वाले राघव के साथ अपने पुत्र को विदा करने भवन के बाहर तक नहीं निकलती है। शायद ही ऐसी मूक प्रीति संसार में देखने को मिलती हो। आध्यात्मिक अर्थ में सुमित्राजी उपासना—शक्ति हैं, जिसका समग्र दर्शन उनमें होता है।

वनवास में साथ जाने के लिए लक्ष्मणजी ने स्नेह और आग्रह के स्वर में प्रभु से यह कह दिया था —

गुर पितु मातु न जानउँ काहू। कहउँ सुभाउ नाथ पतिआहू।। (2/72/4)

प्रभु ने गुरु पिता का नाम तो नहीं लिया, पर माँ का नाम लिए बिना नहीं रह पाये और बोले अनुज माँ से तो आपको विदा लेनी ही होगी। माँ के पास भेजने का भगवान का कुछ और ही उद्देश्य है। लक्ष्मणजी आज सर्व त्यागी के रूप में वन जाना चाहते हैं। वे कहते हैं कि प्रभु के चरणों को छोड़कर वे और कुछ नहीं चाहते। कीर्ति, सद्गति और वैभव की ओर तो वह देखना भी नहीं चाहते। धर्म—धुरीण प्रभु राम के धर्मोपदेश को स्वीकार करते हुए यही कहते हैं —

मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर अंतरजामी।। (2/72/6)

सर्वत्याग का सच्चा अर्थ क्या है, इसे समझना होगा। ऐसे तो अयोध्यावासी भी अपने हृदय सम्राट के साथ सब कुछ छोड़कर चले थे, पर प्रभु के साथ कहाँ रह पाये। प्रभु उन्हें बीच में ही छोड़कर चले गए। कई अति उत्साही लोग भावावेष में भगवान को पाने के लिए घरवार छोड़कर भाग जाते हैं, पर टिक नहीं पाते। कुछ संन्यासी ऐसे होते हैं —

नारि मुई गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी।। (7/100/6)

ऐसे संन्यासी कुछ तो पुनः घर वापस जाना चाहते हैं, पर असम्मान के कारण ऐसा कर नहीं पाते, तभी कबीरदासजी को कहना पड़ा था —

कबिरा खड़ा बजार में लिए लुकाठा हाथ।
जो घर फूँके आपनों चले हमारे साथ।।

अर्थात् जब गृहस्थ रूपी आसक्ति नहीं रहेगी, तभी पक्के बैरागी हो पाओगे। गोस्वामीजी ने भी दोहावली में इस संदर्भ में अपना मनोभाव इस प्रकार से प्रकट किया है—

घर कीन्हे घर जात है घर छोड़े घर जाय।
तुलसी घर बन बीच ही राम प्रेमपुर छाय।।

मानव को **'मरघट वैराग्य'** भी त्याग का उपदेश तो देता है, पर ऐसा त्याग संग्रह से ज्यादा घातक है, क्योंकि संग्रही कम से कम यह तो जानता रहता है कि उसके जीवन में त्याग का अभाव है और दूसरी ओर त्याग का मिथ्याभिमान मिथ्याचार को ही जन्म देगा। वास्तव में लोक में यश प्राप्त करने की आशा पूर्णत्याग में बाधक है। सर्वत्याग बिरले व्यक्ति ही कर पाते हैं। इसीलिए लक्ष्मणजी को प्रभु ने माँ के पास भेजकर त्याग की शिक्षा—दीक्षा दोनों ही दिलवा दीं। सुमित्रा अम्बा और लक्ष्मणजी के संवाद में यह रहस्य सामने आ जाता है। जब लक्ष्मणजी ने प्रभु के वन

जाने का समाचार माता सुमित्रा को सुनाकर अपने आने का कारण बताया तब उनकी व्याकुलता बढ़ गयी। लक्ष्मणजी ने अपनी माता की व्याकुलता देखकर सोचा, वे कहीं मुझे प्रभु के साथ जाने के लिए विदा देने के बजाय मना न कर दें, वे सोचते हैं –

लखन लखेउ भा अनरथ आजू । ऐहिं सनेह बस करब अकाजू।। (2/73/7)

लक्ष्मणजी कुछ आशंका की भावना से सोच रहे थे, किंतु माता सुमित्रा की बात सुनकर लज्जित हो गए। उन्हें लगा कि माँ के हृदय में प्रभु के प्रति जो सच्ची प्रीति व समर्पण है उसके आगे मेरा त्याग व स्नेह कुछ नहीं है। माँ महान हैं। उन्हें लगा कि मेरे त्याग और वैराग्य के अहंकार को देखकर ही उसके निवारण के लिए ही प्रभु ने उन्हें माँ के पास भेजा है। सचमुच ही सुमित्रा अम्बा की भावना इतनी उदात्त एवं सूक्ष्म है कि उसे उपासना का सार कह सकते हैं। देखा जाए तो लक्ष्मणजी ने लोक व्यवहार धर्म को तो पूरी तरह से अस्वीकार कर दिया था, क्योंकि उन्होंने श्रीरामजी से कह दिया था कि 'मैं आपके सिवा गुरु, माता व पिता किसी को नहीं जानता, पर माँ समझती हैं कि सच्चा धर्म कभी भी प्रभु के प्रेममार्ग में बाधक नहीं होता है। शास्त्र आदेश देता है कि पुत्र को सदैव माता–पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिए, लक्ष्मणजी इसे अस्वीकार कर देते हैं। मानो माँ कहती हैं कि शास्त्र अनुचित आदेश कैसे दे सकता है? वेद तो ईश्वर की श्वास हैं। वास्तव में शास्त्र का सही अर्थ न समझने के कारण मनुष्य को धर्म और प्रेम में विरोध दिखता है। जब कोई अपने असली माता–पिता की खोज करेगा, तो उसे भक्ति व ईश्वर ही (सीता व राम) सच्चे माता–पिता के रूप में दिखाई देंगे। शास्त्र सदैव सच्चे माता–पिता की ओर ही इंगित करेगा। इसी सिद्धांत के अनुसार माता सुमित्रा कहती हैं –

तात तुम्हारि मातु बैदेही। पिता रामु सब भाँति सनेही।। (2/74/2)

इसी में यह भाव भी छिपा हुआ है कि सुमित्राजी राम को उनके पास विदा लेने न आने को इस दृष्टि से देखती हैं कि श्रीराम की तो बात ही क्या, उनके पुत्र को भी विदा लेने के लिए उनके पास नहीं आना चाहिए था। वे समझती हैं कि मेरे पुत्र ने प्रभु का आदेश ठीक से समझा ही नहीं। यदि सच्चा अर्थ समझ लेता तो मेरे पास विदा लेने भी नहीं आता, क्योंकि यदि राम का तात्पर्य माँ से (मुझमें) विदा लेने का होता तो वे पिता दशरथ के पास भी विदा लेने अवश्य भेजते। इस प्रकार से सुमित्रा माँ ने सर्वत्याग का मानो दर्शन ही बदल दिया। उनका अभिप्राय है कि सर्वत्याग तो केवल ईश्वर ही करा सकते हैं, क्योंकि जब जीव का कुछ है ही नहीं तो वह क्या त्याग करेगा। माता का अभिप्राय यह है कि मेरा पुत्र अपने आपको त्यागी समझता हो या अन्य लोग उसे सर्वत्यागी की पदवी दे दें, तो इससे बड़ा भ्रम कोई और नहीं हो सकता है। यहाँ भी तो यही स्पष्ट हो रहा है कि अयोध्या का राज्य तो कौसलेन्द्र का है, जिसे छोड़कर वे वन जा रहे हैं, तो अभिनंदन तो रामजी का ही सर्वत्यागी के रूप में होना चाहिए, लक्ष्मण का नहीं। अब प्रश्न यह उठता है कि त्याग का उद्देश्य क्या है। प्रत्यक्ष देखने में तो यही लगता है कि प्रभु पिता दशरथ और माता कैकेयी के आदेश से वन जा रहे हैं, किन्तु यथार्थ में यह नहीं हो सकता। सारा ब्रह्माण्ड भगवान के संकल्प मात्र से संचालित होता है।

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।। (1/128/1)

इसीलिए यदि राघव न चाहते तो राजा दशरथ तथा माता कैकेयी के मन में यह संकल्प आता ही नहीं। तो फिर क्या भरत को राज्य दिलाना था, पर वह हुआ नहीं। भरत तो राज्य चाहते ही नहीं थे। फिर श्रीराम के वन–गमन का उद्देश्य क्या था? अखिल ब्रह्माण्ड नायक श्रीराम का अवतार दुष्टों के संहार और विशेषकर वनवासी भक्तों के कल्याणार्थ हुआ था, इसीलिए स्वयं श्रीरामजी की इच्छा से उनका वनगमन हुआ। इसका प्रमाण देवगुरु बृहस्पति एवं इंद्र के उस समय के संवाद में मिलता है, जब इंद्र भरतजी के चित्रकूट में श्रीराम–मिलन में बाधा डालना चाहते थे। इसके उत्तर में बृहस्पतिजी कहते हैं–

तब किछु कीन्ह राम रुख जानी। अब कुचालि करि होइहि हानी।। (2/218/3)

इसीलिए माता सुमित्रा, जो उपासना का स्वरूप हैं, सोचती हैं कि मेरे विचार से लक्ष्मण को राम की सेवा का सुअवसर प्रदान करना ही, वनगमन का उद्देश्य है। लक्ष्मणजी प्रभु की समग्र सेवा स्वयं करना चाहते हैं। यह अवसर उन्हें विश्वामित्रजी के यज्ञ रक्षार्थ श्रीरामजी के साथ जाने पर मिला था, किन्तु अब विवाह के बाद सेवा का स्वरूप

बदल गया था। माँ कहती हैं –

तुम्हरेहिं भाग रामु बन जाहीं। दूसर हेतु तात कछु नाहीं।। (2/75/3)

इस कथन से सुमित्राजी लक्ष्मण के मन में यह भावना भर देती हैं कि तुम्हें राम का कृतज्ञ होना चाहिए, जो तुम्हारे लिए समग्र सेवा का अवसर देने हेतु वनगमन का इतना कष्ट उठा रहे हैं। उन्होंने इस धारणा का भी अंत किया कि तुम्हें वन में कष्ट होगा। माता की दृष्टि में तो वहीं अवध है, जहाँ श्रीराम निवास करते हैं, यथा –

अवध तहाँ जहँ राम निवासू। तहँइँ दिवसु जहँ भानु प्रकासू।। (2/74/3)

भावनात्मक रूप से इसका अर्थ है कि प्रभु की अवधपुरी कोई जड़ पदार्थ नहीं है। यह तो नित्य चैतन्य है और ऐसी अनुरागिनी है कि प्रभु जहाँ जाते हैं, वह वहीं चली जाती है। सुमित्राजी ने समग्र सेवा के अनुपम सूत्र लक्ष्मणजी को दिए। उन्होंने कहा कि सच्चे सेवक का यह कर्तव्य है कि स्वप्न में भी निम्न विकारों के वशीभूत नहीं होना चाहिए, अन्यथा तो स्वामी की सेवा समग्र रूप से नहीं हो पाएगी, यथा –

रागु रोषु इरिषा मदु मोहू। जनि सपनेहुँ इन्ह के बस होहू।।
सकल प्रकार बिकार बिहाई। मन क्रम बचन करेहु सेवकाई।। (2/75/5–6)

सुमित्रा अम्बा का सेवा सूत्र यह है कि सेवक किसी की सेवा तभी कर सकता है जब उसका एक ही सेव्य हो। अनेक स्वामियों वाला तो किसी को भी संतुष्ट नहीं कर सकता। जो लोग दुर्गुणों, दुर्विचारों से संचालित होते हैं वे श्रीराम की सेवा कैसे कर सकते हैं, उन्हें तो विकारों से समय ही कहाँ मिलेगा। वास्तव में माता का अभिप्राय यह है कि पूरी तरह से विकार रहित न हो पाओ तो भी कोई बात नहीं, क्योंकि संसार के व्यवहार भी चलाने हैं, पर विकारों के वश में न हो जाओ। माता के ऐसे उपदेश को चरितार्थ करने हेतु लक्ष्मणजी ने वनवास काल में निद्रा का भी परित्याग कर दिया था, ताकि स्वप्न ही न आएँ, तब स्वप्न में विकार कैसे आएँगे। सेवा–धर्म का उपदेश देने के उपरांत माँ ने लक्ष्मणजी को एक अनोखा दिव्य आशीर्वाद भी दिया, यथा –

तुलसी प्रभुहि सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिष दई।
रति होउ अबिरल अमल सिय रघुबीर पद नित नित नई।। (2/75/छंद)

मानस की दृष्टि में चरण–रति ही साधना की परम परिणति है। साधना का प्रारंभ सम, यम और नियम से होता है, जिसके फलस्वरूप अन्तःकरण की शुद्धि होती है और तब ज्ञान का उदय होता है, पर उसमें मिठास लाने के लिए प्रभु पद–रति आवश्यक है, यथा–

सम जम नियम फूल फल ग्याना। हरि पद रति रस बेद बखाना।। (1/37/14)

सांसारिक रति किसी रस की चरम परिणति है, किन्तु भक्ति मार्ग में यह सांसारिक रति से भिन्न तथा तीनों गुणों से परे है। सांसारिक रति में निरन्तरता हो ही नहीं सकती और यह कभी मल रहित नहीं हो सकती, क्योंकि वासना की मलिनता तो सदैव रहेगी अर्थात् यह वासनायुक्त रति मलिन जल है, जो प्यास के समय कुछ प्यास तो बुझाएगा, पर बाद में रोग भी पैदा कर देगा। प्रभु पद रति में सदैव नवीनतमा बनी रहती है, जबकि सांसारिक रति में पुरानेपन की अनुभूति के कारण धीरे–धीरे अरुचि होने लगती है।

माँ का आशीर्वाद लक्ष्मणजी के जीवन में चित्रकूट प्रवास के समय इस प्रकार से चरितार्थ हुआ –

छिनु छिनु लखि सिय राम पद जानि आपु पर नेहु।
करत न सपनेहुँ लखनु चितु बंधु मातु पितु गेहु।। (2/139)
सेवहिं लखनु सीय रघुबीरहि। जिमि अबिबेकी पुरुष सरीरहि।। (2/142/2)

लक्ष्मणजी को सुमित्रा माता के पास भेजकर प्रभु समस्त उपासना दर्शन को ही प्रकट कराना चाहते थे, क्योंकि उपासना के लिए जो भावभूमि माता सुमित्रा के पास थी वह और किसी के पास नहीं थी। उन्हें राम के ईश्वरत्व पर कभी अविश्वास हुआ ही नहीं। उनकी समर्पण की पूर्णता का रहस्य भी यही है। उनके लिए राम का अनुराग व्यवहार से संबंध नहीं है, अतः लक्ष्मणजी के समक्ष उन्होंने मातृत्व की जो व्याख्या की है, वह भक्ति परंपरा के अनुकूल ही है, वे कहती हैं –

पुत्रवती जुबती जग सोई। रघुपति भगतु जासु सुतु होई।।
नतरु बाँझ भलि बादि बिआनी। राम बिमुख सुत तें हित जानी।। (2/75/1–2)

सुमित्राजी के जीवन में कोई द्वंद्व नहीं है। व्यावहारिक संबंध को केन्द्र मानकर वह धर्म की व्याख्या नहीं करतीं, बल्कि वास्तविक संबंध का केन्द्र जो केवल परमात्मा ही है, उस संबंध को मानती हैं। उनका सिद्धांत है कि सभी नाते राम के नाते से हैं। कुछ लोग सोचते हैं कि माता के इस विचार में विरोधाभास जैसा लगता है, क्योंकि एक ओर तो कहती हैं कि लक्ष्मण तुम्हारी माँ जानकीजी हैं, पर दूसरी ओर यह भी कहती हैं कि तुम जैसा पुत्र पाकर मैं धन्य हो गयी। वास्तव में माँ की दृष्टि में लक्ष्मण का उन्हें माँ मानना भक्ति में बाधा देने वाला न बने, इसीलिए उन्हें कह दिया कि सीताजी ही तुम्हारी माँ हैं, क्योंकि जब वन में माँ की याद आएगी, तो भगवान के पास से मन हट जाएगा, मेरे पास चला आएगा, पर लक्ष्मण को मेरा पुत्र मानना मुझे ठीक है, क्योंकि मुझे जब पुत्र की याद आएगी तो मुझे लगेगा, मेरा पुत्र राम के पास है और मैं भी धन्य हो जाऊँगी। उस समय यह संबंध हमें (मुझे और लक्ष्मण को) भावनात्मक रूप से प्रभु के पास ही पहुँचा देगा, वे कहती हैं –

भूरि भाग भाजनु भयहु मोहि समेत बलि जाउँ।
जौं तुम्हरें मन छाड़ि छलु कीन्ह राम पद ठाउँ।। (2/74)

वाणी के माध्यम से जो उपासना का गंभीर रहस्य प्रकट होता है, उसकी तुलना माँ का स्वयम् न मिलने जाना उनके हृदय की अथाह गहराई को ही प्रकट करता है। यही प्रेम की अनन्यता को प्रकट करता है। सुमित्रा अम्बा भगवान के शील स्वभाव से अच्छी तरह परिचित थीं। वे उनसे मिलने क्यों नहीं आए, यह माँ भलीभाँति जानती हैं। राघव उस समय अपने को उस ऋणी की तरह देखते हैं, जो एक ऋण तो किसी का दे नहीं पाया और दूसरा लेने का निवेदन कर रहा है। भगवान सोचते होंगे कि माँ ने अपने पुत्र को बचपन से ही मेरी सेवा के लिए लगा दिया एवं अब फिर से उसे सेवा के लिए ले जा रहा हूँ और वह भी चौदह वर्ष के लिए। प्रभु का सुमित्रा माँ के समक्ष न जाने का तात्पर्य यह दिखाना था कि मेरे शील स्वभाव की बाध्यता है, किन्तु मैं जानता हूँ कि माँ ने केवल और केवल देना ही सीखा है, प्रतिदान की कोई आशा उनके जीवन में नहीं है। माँ का स्वभाव भी कितना महान है। ऋणी को तो धनी के समक्ष संकुचित होते देखा होगा, पर उस धनिक का हृदय कितना विशाल होगा जो ऋणी के समक्ष जाने में संकोच करता है।

धन्य हैं सुमित्रा माँ की उपासना और उनके पुत्र लक्ष्मण का सेवाधर्म।

भगवन्नाम–स्मरण एवं शरणागति ही सभी संकटों से बचने के लिए श्रेष्ठतम साधन है। धैर्य धारण करना ही श्रेष्ठ है। दुःख एवं सुख दिन–रात की तरह आने–जाने वाले हैं। सर्वदा कोई सुखी या दुखी नहीं रहता है। स्वयं भगवान अवतार काल में संकट सहकर अपने भक्तों को शिक्षा देते हैं।

झूठे दिलासे से स्पष्ट इनकार बेहतर है।

अच्छी सोच, अच्छी भावना, अच्छा विचार मन को हल्का करता है।

"तेरा मेरा" करते–करते एक दिन चले जाना है, जो भी कमाया यहीं रह जाना है।
कर ले कुछ अच्छे कर्म साथ यही तेरे जाना है।

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी

डॉ. भगवान दास पटैरया, नोएडा, फोनः 9899004263

गोस्वामी तुलसीदासकृत श्रीरामचरितमानस एक ऐसा ग्रन्थ है, जिसमें समाज के सभी वर्गों के हितों के लिए ऐसे जीवन–सूत्र हैं, जिनका अनुसरण करने से इहलोक और परलोक दोनों सुधर सकते हैं। यह महाकाव्य भगवान शिव की प्रेरणा से ही गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है। इसके प्रारंभ में ही प्रथम काण्ड (बालकाण्ड) के 36वें दोहे की प्रथम चौपाई में उन्होंने लिखा है –

संभु प्रसाद सुमति हियँ हुलसी। रामचरितमानस कबि तुलसी।। (1/36/1)

यह लिखने के साथ ही उन्होंने इसमें सुधार करने की बात भी लिखी है यथा–**'सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी' (1/36/2)** अर्थात् सज्जन लोग अपनी सद्बुद्धि से इसमें सुधार कर सकते हैं, पर विचारणीय तथ्य यह है कि इसके लिए दो शर्तें हैं – एक तो सुधार करने वाला सुजन अर्थात् सज्जन होना चाहिए और दूसरे वह अपनी सुमति अर्थात् सद्बुद्धि से यह कार्य करे। उल्लेखनीय है कि कुछ विद्वानों ने श्रीरामचरितमानस की कुछ चौपाइयों में, जिनमें शीर्शकान्तर्गत चौपाई भी शामिल हैं, सुधार किया है, किंतु संत समाज ने इस सुधार को इस तर्क के साथ अस्वीकार कर दिया कि जब यह महाकाव्य भगवान शिवजी की प्रेरणा से लिपिबद्ध किया गया है, तब हम उसमें सुधार कैसे कर सकते हैं। हमें चौपाइयों के संदर्भित परिप्रेक्ष्य में सकारात्मक सही अर्थ की खोज करनी चाहिए। आजकल कुछ लोग श्रीरामचरितमानस की कुछ चौपाइयों का अर्थ का अनर्थ करने में लगे हैं। उनकी शंका निवारणार्थ कुछ विवेचना निम्नांकित चौपाई के संदर्भ में प्रस्तुत हैं –

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।। (5/59/6)

यह सुंदरकाण्ड के 59वें दोहे की छठवीं चौपाई है। इस पर विवेचना करने से पूर्व सिद्धांत रूप में यह समझ लेना आवश्यक है कि यह किसने कहा है, किससे और कब कहा है तथा किस परिस्थिति में कहा है। श्रीरामचरितमानस के सभी प्रसंगों में इस प्रकार वस्तुस्थिति समझने की आवश्यकता है। दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि हमारी विचारधारा का प्रभाव अर्थ समझने पर पड़ता है। यह प्राकृतिक नियम है कि जिसके मन में जैसे भाव होंगे, उसे संपूर्ण प्रकृति और समाज वैसा ही प्रतीत होगा। सुख की स्थिति में हमें चंद्रमा शीतलता प्रदान करता है, किंतु विरह की स्थिति में वही दुखमय लगता है। विरहाकुल सीताजी अपनी व्यथा व्यक्त करती हुई कहती हैं –

पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हतभागी।। (5/12/9)

उपर्युक्त चौपाई में यही भाव प्रकट है अर्थात् यदि हम सकारात्मक भाव से विचार करेंगे तो हमें श्रीरामचरितमानस की चौपाई सद्शिक्षा प्रदान करेगी और हमें सावधान करेगी कि किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। जिसके मन में जैसा भाव होता है, उसे सब कुछ अपने भाव के अनुसार दिखाई देता है। जब श्रीरामजी धनुश–यज्ञ में जाते हैं, तो भक्तजन उन्हें ईश्वर के रूप में, राक्षसगण भयानक रूप में और राजा जनक के लोग एक सगे संबंधी के रूप में उनका दर्शन करते हैं –

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी।। (1/241/4)
रहे असुर छल छोनिप बेषा। तिन्ह प्रभु प्रगट कालसम देखा।। (1/241/7)
जनक जाति अवलोकहिं कैसें। सजन सगे प्रिय लागहिं जैसें।। (1/242/2)

यही भाव श्रीरामचरितमानस की चौपाइयों के संदर्भ में भी समझना चाहिए। सर्वप्रथम इस चौपाई में 'ताड़ना' शब्द को सही अर्थ में समझना होगा। ताड़ना के कई अर्थ होते हैं। सामान्यतया इसके प्रचलित अर्थ हैं – डाटना, पीटना, सुधार हेतु कष्ट देना, समझना (जानना) आदि। पर यहाँ पर ताड़ना का अर्थ 'समझना' है। कई बार हम कहा करते हैं कि हमने तो पहले से 'ताड़' लिया था कि अमुक घटना घटित होने वाली है। दूसरा तथ्य यह है कि यह कथन समुद्र का है, जो उसने उस समय श्रीरामजी से कहा था जब उनकी तीन दिन तक की जाने वाली प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया था, जिसके कारण उन्होंने उस पर धनुष तान दिया था। इस संदर्भ में केवल एक चौपाई का नहीं, बल्कि समुद्र के पूरे कथन पर विचार करना आवश्यक है। उसने यह कहा था –

गगन समीर अनल जल धरनी। इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी।। (5/59/2)
ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।। (5/59/6)

समुद्र अर्थात् जल, प्रकृति के पंच महाभूतों में से एक है। वह कहता है कि इनको सूक्ष्मता से समझने की आवश्यकता है। यदि आपने मेरी जड़ता को पहले से ताड़ लिया होता तो आप अपने तीन दिवस मुझसे प्रार्थना करने में बर्वाद न करते, बल्कि लक्ष्मणजी के सुझाव के अनुसार पहले ही मुझ पर धनुष चढ़ा देते। इसी संदर्भ में उसने ही पंच महाभूतों की तरह दूसरों को भी भलीभाँति ताड़ने (समझने) का सुझाव दिया है। अब विचार करें कि उसने किससे किसकी तुलना की है। उपर्युक्त दोनों चौपाइयों के क्रम में देखें तो ज्ञात होगा कि ढोल की तुलना गगन (आकाश) से, गवाँर की तुलना समीर (हवा) से, शूद्र की तुलना अनल (अग्नि) से, पशु की तुलना जल से और नारी की तुलना धरनी (पृथ्वी) से की है। यदि हम सकारात्मक सोच से विचार करें तो इसका अर्थ इस प्रकार से निकलता है।

1) **ढोल** – ढोल केवल आकाश (स्पेस) में बज सकता है। ढोल बजाते समय उसे ताड़ना पड़ता है अर्थात् पहले यह देखना होता है कि वह ठीक से कसा (बँधा) है या नहीं। यदि वह ढीला होगा तो उस पर चोट पड़ते ही वह फट सकता है। ठीक से बँधा होने पर उसे इसके लिए ताड़ना (समझना) पड़ता है कि उसके किस अंग पर किस गति से चोट की जाए ताकि उससे वांछित स्वर प्राप्त हो सके। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि ढोल को केवल पीटने की बात नहीं है, उसे ताड़ कर (समझ कर) उस पर सही प्रकार से बजाने के उद्देश्य से उस पर चोट की जाती है न कि उसे फाड़ने के उद्देश्य से।

2) **गवाँर** – गवाँर उस व्यक्ति को कहते हैं जो अपनी बुद्धि का उपयोग न करके जो जैसा कहे उसकी ही बात मानकर कार्य करने लगता है। गवाँर की तुलना समीर (हवा) से की गई है। हवा कब किस दिशा में चल पड़े, आम लोगों की समझ से बाहर है, हालाँकि अब वैज्ञानिक बता देते हैं कि कहाँ कितना दबाव है और इस कारण हवा की गति और दिशा क्या होगी, इस सिद्धांत के अनुसार गवाँर के साथ व्यवहार करते समय उसके इस स्वभाव को ताड़ (समझ) लेना आवश्यक है।

3) **सूद्र** – शूद्र की तुलना अग्नि से की गई है। जिस प्रकार अग्नि शुद्ध और अशुद्ध सभी को जलाकर भस्म करके उसे पवित्र कर देती है, उसी प्रकार शूद्र भी समाज को पवित्र करता है। 'शूद्र' शब्द को समझने के लिए हमें सबसे पहले अपने शरीर को समझ लेना चाहिए। समाज के जिन चारों वर्णों का शास्त्रों में उल्लेख है, उनका समावेश हमारे शरीर में है। हम सभी मानव शूद्र रूप में ही पैदा होते हैं, पर संस्कारों के माध्यम से ही हम ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य बनते हैं। यदि उचित संस्कार न मिले, तो हम सभी शूद्र ही हैं। ब्राह्मण को द्विज कहा गया है। द्विज का अर्थ है, दूसरा जन्म अर्थात् जब ब्राह्मण बालक का जनेऊ संस्कार होता है तभी वह ब्राह्मण बनता है और तभी तक वह ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी है, जब तक वह त्रिकाल संध्या करके ब्राह्मण धर्म का पालन करता है अन्यथा वह शूद्र ही है।

4) **पसु** – पशु की तुलना जल से की गई है। जल का स्वभाव है कि वह गुरुत्वाकर्षण के कारण ऊपर से नीचे की ओर बहता है। ऊपर ले जाने के लिए उस पर यंत्र (मशीन) का प्रयोग करना पड़ता है। इसी प्रकार से पशु को ताड़ना (समझना) पड़ता है कि वह किस दिशा में जा रहा है और हमें उसे किस दिशा में ले जाने की आवश्यकता है। एक भेड़ जिस दिशा में चलती है, सभी उसका अनुसरण करके उसके पीछे–पीछे चल पड़ती हैं। इसी को 'भेड़ चाल' कहते हैं, अतः हमें पशु की इस प्रवृत्ति को ताड़ कर (समझ कर) उसके साथ व्यवहार करना चाहिए।

5) **नारी** – नारी की तुलना धरणी (पृथ्वी) से की गई है। जिस प्रकार पृथ्वी सहनशीलता की सीमा है, उसी प्रकार नारी भी सहनशील होती है, किंतु जब उन पर अत्याचार बढ़ जाता है, तब ठीक उसी प्रकार से जिस प्रकार पृथ्वी में भूकंप/भूचाल आने पर सब अस्त–व्यस्त हो जाता है, नारी भी यह सब कर सकती है, अतः हमें नारी के स्वभाव को ताड़ कर (समझ कर) उनसे व्यवहार करना चाहिए। एक बात और महत्वपूर्ण है जो समुद्र ने कही है। उसने पंच महाभूतों (गगन, समीर, अनल, जल और धरणी) को 'जड़' कहा है। 'जड़' का

अर्थ जो व्यवहार में बुद्धि का उपयोग नहीं करे।

नारी हृदय प्रधान होती है और पुरुष बुद्धि प्रधान। इसका उदाहरण श्रीरामचरितमानस में पुष्प वाटिका प्रसंग में मिलता है, जहाँ पर प्रथम बार श्रीरामजी और सीताजी एक दूसरे का दर्शन करते हैं। सीताजी के जाने पर उनकी छवि को श्रीरामजी अपने मस्तिष्क में और सीताजी उनकी छवि को अपने हृदय में धारण करती हैं। इस संदर्भ में समुद्र ने 'जड़' शब्द का प्रयोग करके हमें सावधान किया है कि नारी 'हृदय प्रधान' होती है, अतः उसके इस स्वभाव को ताड़ कर (समझ कर) उससे वैसा ही व्यवहार करना चाहिए।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त (संदर्भित) चौपाई से किसी का अनादर नहीं हुआ है। विचारणीय तथ्य है कि जिन भगवान श्रीराम ने अधम जाति की नारी शबरी के जूठे बेर खाए और निषादराज को गले से लगाया, उनके परम भक्त गोस्वामी तुलसीदासजी किसी का अपमान कैसे कर सकते हैं। लोग अपनी समझ से अर्थ का अनर्थ कर रहे हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी ने तो सारे जगत को सीताराममय समझ कर उनकी वंदना की है, फिर वे किसी का अपमान करने के उद्देश्य से ऐसा कैसे लिख सकते हैं। श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में ही उन्होंने लिखा है –

सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। (1/8/2)

मानस में वर्णित 3 भाइयों का चरित्र

श्रीरामचरितमानस में वर्णित तीन भाइयों – बालि का भाई सुग्रीव, रावण का भाई विभीषण और राम के भाई भरत के चरित्र पर विचार करने पर ज्ञात होगा कि ये जीव की तीन दशाओं की तरह हैं, विषयी, साधक और सिद्ध। **श्रीरामचरितमानस** के अनुसार –

विषई साधक सिद्ध सयाने। त्रिबिध जीव जग बेद बखाने।। (2/277/3)

सुग्रीव विषयी जीव है, उसे केवल अपने स्वार्थ और सुख की चिन्ता है, वह अपने पुरुषार्थ से कुछ हासिल नहीं कर पाता। निजी स्वार्थ के लिए अपने भाई को मरवाने में उसे संकोच नहीं होता। राम कृपा से सुख सम्पत्ति पाने के विषयी लोग आज भी यही करते हैं।

मानस का दूसरा भाई विभीषण, साधक की तरह जीता है। सुबह उठता है तो, **''राम नाम तेहि सुमिरन कीन्हा'' (5/6/3)** से दिनचर्या प्रारंभ करता है, साधु और विप्र को आदर देता है, घर को ही मन्दिर बनाकर पूजा–पाठ करता है, अपने भाई रावण के हित की बात भी करता है, सन्मार्ग पर ले जाने का असफल प्रयास करता है, राज्य पाने हेतु आतुर नहीं है, किन्तु साधकता का फल रामकृपा से पा जाता है।

तीसरा भाई भरत जो सिद्ध है केवल और केवल अपने भाई राम का ही सुख चाहता है। जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई। **करुना सागर कीजिअ सोई।। (2/269/2)**

वह यह भाव रखने में ही खुश है। उसकी अपने सुख की कोई कामना नहीं है। पिता से मिला राज्य सुख भोगने की आकांक्षा भी नहीं है। इसीलिए रामजी भी ऐसे भाई को केवल प्यार ही नहीं करते, बल्कि जपते हैं, गोस्वामीजी लिखते हैं –

भरत सरिस को राम सनेही। जग जप राम राम जप जेही।। (2/218/7)

मानस में कर्तव्य—पालन के कीर्तिमान

श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल' साहित्याचार्य, फोनः 9311384212

आहारनिद्रा भयमैथुनंच सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।

(आहार, निद्रा, भय, संभोग—ये चारों बातें पशुओं और मनुष्यों में समान होती हैं, किन्तु मनुष्यों में धर्म का एक विशेष गुण होता है, इसलिए धर्महीन मनुष्य पशु समान है।)

धर्म का ही दूसरा नाम 'कर्तव्य' है। 'कर्तव्य' शब्द का अर्थ है—करने योग्य या किए जाने योग्य कर्म। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—''यद्यपि तीनों लोकों में मुझे कोई करने योग्य कर्म नहीं है यानी मेरा कोई कर्तव्य कर्म नहीं है, फिर भी मैं लोक—कल्याण के लिए कर्तव्य—कर्म करता हूँ।''

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन।
नानवाप्तनवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि।। (गीता—3/22)

भगवान श्रीकृष्ण के इस कथन से यह सिद्ध होता है कि मनुष्य को अपना कर्तव्य कर्म करते रहना चाहिए। जो व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता, उस व्यक्ति का जीवन व्यर्थ है।

कर्म की महिमा अपार है—कर्म संसार की धुरी है और मानव—जीवन का आधार है। कर्मों का हमसे चोली—दामन जैसा नाता है। कर्म करना मानव—शरीर का धर्म है, इसलिए मनुष्य को कर्म करना अनिवार्य है। यह संसार कर्म—क्षेत्र है। अपने कर्तव्य का पालन करना ही उन्नति का मार्ग है, इसलिए कर्मनिष्ठ और कर्मठ बनकर नित्य अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए। इसी में मानव—जीवन की सफलता है।

अपने कर्तव्य का पालन करने से मनुष्य स्वस्थ, सुखी और सम्पन्न होकर मृत्यु के भय से मुक्त हो जाता है। कर्तव्य—पालन से ही मनुष्य बनता है। मानव—जीवन का उद्देश्य है कि हम प्रतिदिन अपने कर्तव्य का पालन करें और उत्तरोत्तर रात—दिन उन्नति के शिखर पर चढ़ते चले जायें। जो व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन करता है, ईश्वर भी उसी की सहायता करता है और जो दूसरों पर निर्भर रहता है, वह कदम—कदम पर ठोकर खाता है —

अपना कारज आप करे जो
देता उसका साथ विधाता।
अन्यों पर अवलम्बित है जो
पग—पग पर वह ठोकर खाता।।

कर्तव्य—पालन करने से ही मनुष्य को संसार में दूसरे प्राणियों की तुलना में सबसे ऊँचा स्थान मिला है। अपने कर्तव्य का पालन करने से ही मनुष्य उन्नति के शिखर पर पहुँचता है और समाज को भी उन्नति के शिखर पर पहुँचा सकता है। जो मनुष्य अपना कर्तव्य—पालन नहीं करता, उसका दुर्लभ मानव—जीवन निष्फल है। जो अपना कर्तव्य—पालन करता है, उसी मनुष्य का जीवन सफल है। गीता गायक भगवान श्रीकृष्ण अपने सखा अर्जुन से कहते हैं —

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। (2/47)

अर्थात् कर्तव्य करना तुम्हारे हाथ में है, परन्तु इच्छानुसार कर्तव्य का फल प्राप्त करना तुम्हारे अधिकार में नहीं है, क्योंकि कर्मों का फल तो कर्मफलदाता ईश्वर के अधीन है, वही हमारे कर्मों का फल देते हैं, जैसे—परीक्षा देने वाले परीक्षार्थी का अधिकार उत्तर—पुस्तिका में प्रश्न—पत्र में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर लिखने का तो है, लेकिन अंक देने का अधिकार नहीं है, क्योंकि अंक देने का अधिकार तो परीक्षक (उत्तर—पुस्तिका जाँचने वाले) का है। अंक प्राप्त करने के लिए परिश्रम पूर्वक परीक्षा देने का कर्तव्य—कर्म करना अनिवार्य है। जैसे बिना परीक्षा दिए परीक्षार्थी अंक प्राप्त नहीं कर सकता, वैसे ही जीवन में बिना कर्म किए मानव—कल्याण नहीं हो सकता। किनारे पर बैठा हुआ व्यक्ति नदी के उस पार नहीं पहुँच सकता। उसे नदी पार कर अपने गन्तव्य तक पहुँचने के लिए कर्तव्य—कर्म करना आवश्यक है। हे पार्थ! कर्म—फल में आसक्ति न रखते हुए यानी कर्म—फल की इच्छा न रखकर तू अपना कर्तव्य किए जा और लोकमंगल तथा दूसरों की भलाई के लिए अपने कर्तव्य—कर्म—पथ पर अपने कदम बढ़ाए जा।

इन्हीं भावों की कविता—सुंदरी के रूप में एक झलक देखिए —

चलता न कर्म—पथ पर जो नर
उसका दुर्लभ जीवन निष्फल।
जो करता निज कर्तव्य—कर्म
उसका जीवन ही धरा सफल।।
अधिकार कर्म करने में, पर
फल में तेरा अधिकार नहीं।
कर अपना कर्म कुशलता से
पर कर्म—फलों की चाह नहीं।।
बिन कर्म किये तो जीवन में
मानव—कल्याण न हो सकता।
तट पर बैठा क्या कोई नर
सरिता के पार पहुँच सकता।।
फल में आसक्ति न रखकर तू
अपना कर्तव्य निभाए जा।
जग—मंगल परहित सत्पथ पर
तू अपने कदम बढ़ाए जा।।

— सरल

अब प्रश्न यह उठता है कि सबसे बड़ा कर्तव्य कौन सा है?

ब्रह्मर्षि वसिष्ठ के अनुसार जिस साधन (कर्म) से ईश्वर की प्राप्ति हो जाये, वही मानव का सबसे बड़ा कर्तव्य है। इस विषय में उन्होंने स्वयं अपने जीवन से संबंधित घटना भगवान राम को सुनाई—हे राम! जब सत्ययुग के प्रारंभ काल में मेरे पिता ब्रह्माजी ने मुझसे सूर्यवंश का पुरोहित बनने के लिए कहा, तब मैंने सूर्यवंश का पुरोहित बनने से साफ इनकार कर दिया था, क्योंकि पुरोहिती का कर्म (पेशा) बहुत ही नीचा है। वेद—पुराण भी इसकी निंदा करते हैं —

उपरोहित्य कर्म अति मंदा। बेद पुरान सुमृति कर निंदा।। (7/48/6)

तब ब्रह्माजी ने मुझसे कहा था—हे पुत्र! सूर्यवंश का पुरोहित बनने से भविष्य (त्रेतायुग) में तुम्हें पुरोहिताई का बहुत बड़ा लाभ मिलेगा और वह लाभ यह होगा कि त्रेतायुग के अंतिम चरण में धर्म का उत्थान और पृथ्वी का भार उतारने के लिए सूर्यवंश में स्वयं सच्चिदानन्द परब्रह्म परमात्मा मनुष्य रूप में अवतार लेंगे और प्रजावत्सल एवं न्यायी राजा बनकर रामराज्य की स्थापना करेंगे। तुम उनके दीक्षा और शिक्षा गुरु बनोगे।

तब मैंने अपने मन में विचार किया कि जिन भगवान को प्राप्त करने के लिए योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत, तीर्थ, दान आदि किए जाते हैं, उन्हें मैं इसी पुरोहिती कर्म से पा जाऊँगा, तब तो इसके समान दूसरा कोई कर्तव्य—कर्म ही नहीं है —

तब मैं हृदयँ बिचारा जोग जग्य ब्रत दान।
जा कहुँ करिअ सो पैहउँ धर्म न एहि सम आन।। (7/48)

ऐसा विचार कर ही कि मुझे सहज ही उन परब्रह्म सच्चिदानंद परमात्मा के अलौकिक दुर्लभ दर्शन होंगे। मैंने भगवान के दर्शन की लालसा से ही पुरोहिती कर्म को अपने जीवन का पुनीत कर्तव्य मानकर सूर्यवंश का पुरोहित बनना स्वीकार किया था।

एक बार तारकासुर के आतंक से आतंकित देवताओं ने ब्रह्मलोक में जाकर अपनी पीड़ा बतलायी। देवगणों की करुण पुकार सुनकर ब्रह्मा बोले—उस दैत्य की मृत्यु केवल शिव—पुत्र के हाथों ही होगी। भगवती सती ने दक्ष—यज्ञ

में देह त्याग कर पुनः हिमाचल के घर पार्वती के रूप में जन्म लिया है। उनसे शिवजी का विवाह कराया जाये, परन्तु शिवजी तो अखंड समाधि लगाए बैठे हैं। पहले उनकी समाधि भंग हो, तभी विवाह सम्भव है। यद्यपि यह कार्य बड़ा कठिन है, पर उद्यम से कार्य सिद्ध होते हैं।

देवता बोले–ब्रह्मदेव! प्रलयंकर भगवान शिव की अखंड समाधि भंग कौन करे? इसका उपाय भी आप ही बतलाइये।

कामदेव को भेजकर शिव–समाधि भंग कराओ। फिर हम शिवजी को राजी करके विवाह करा देंगे। उपाय जानकर देवताओं ने कामदेव की विनती की। उनकी विनती से प्रसन्न होकर कामदेव बोला–शिवजी से वैर करने में मेरी खैर नहीं है, फिर भी परोपकार के लिए मैं यह कार्य करूँगा, क्योंकि जो दूसरों के हित के लिए अपना शरीर त्याग देता है, संत सदा उसकी बड़ाई करते हैं –

पर हित लागि तजइ जो देही। संतत संत प्रसंसहिं तेही। (1/84/2)

प्रलयंकर शिवजी से विरोध करने में कुशल न होने पर भी कामदेव ने देवकार्य के लिए भगवान शिव की अखण्ड समाधि भंग करने में प्राणोत्सर्ग करके भी अपने कर्तव्य का पालन किया।

भारतवर्ष कर्तव्य–परायण पुरुषों की कर्मभूमि है। यहाँ असंख्य पुरुषों ने कर्तव्य–पालन करते हुए हँसते–हँसते कर्तव्य–यज्ञ में अपने प्राणों की आहूति दी है। कर्तव्य–परायण व्यक्तियों के कर्तव्य–पालन के दृष्टांतों से हमारे धर्मशास्त्र भरे पड़े है। कर्तव्य–परायण व्यक्तियों की ही संसार में पूजा होती है। कर्तव्य–परायण व्यक्तियों का चरित्र मानव मात्र के लिए अनुकरणीय है।

यों तो मानस के अधिकांश पात्रों ने अपने–अपने कर्तव्य का पालन कर कीर्तिमान स्थापित किए। यहाँ उन सबका उल्लेख करना तो संभव नहीं है, लेकिन उन पात्रों में से कुछ पात्र ऐसे हैं, जिन्होंने अपना कर्तव्य–पालन कर ऐसे बेमिशाल कीर्तिमान स्थापित किए। उनकी जितनी प्रशंसा की जाये, उतनी ही कम है। उन कतिपय पात्रों में मानस के महानायक भगवान श्रीराम, महानायिका भगवती सीता, भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त हनुमान, रामचरणानुरागी भरत, अपने प्राणाधार भगवान की सेवा में तन–मन से समर्पित आराधक लक्ष्मण और भगवान के भक्त भरत को अपना आराध्य मानकर सेवा करने वाले शत्रुघ्न के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इन सब ने कर्तव्य–पालन के जो कीर्तिमान स्थापित किए, वे अनुपमेय हैं। अब यहाँ उन्हीं के कर्तव्य–पालन के स्थापित कीर्तिमानों का दिग्दर्शन कराते हैं –

कर्तव्य–पालन के कीर्तिमान स्थापित करने वालों में श्रीराम सर्वोपरि हैं। अब प्रश्न उठता है–राम कौन हैं?

राम परब्रह्म सच्चिदानन्द परमात्मा हैं। राम धर्म की साक्षात् प्रतिमा हैं–**''रामो विग्रहवान् धर्मः''**। राम सत्य हैं, राम न्याय हैं, राम नीति हैं, राम प्रीति हैं। राम ज्ञान–कर्म–भक्ति का संगम हैं। राम भक्तों का जीवन–रस हैं। राम भक्तों के सर्वस्व हैं। राम शील–रूप–बल की पराकाष्ठा हैं–उन्होंने शील से अयोध्यावासियों को, रूप से जनकपुर–वासियों को और बल से लंकावासियों को जीता।

राम मर्यादापुरुषोत्तम हैं। राम त्याग की पराकाष्ठा हैं। राम करुणा का सागर हैं। राम विनय हैं। राम साध्य और साधना हैं। राम तपस्या हैं। राम जन–मानस की आस्था हैं। राम लोक का विश्वास हैं। राम समस्त जीवों के मन–मंदिर में विराजमान हैं। राम कण–कण में समाये हैं। राम कौसल्या आनन्दबर्धन हैं। राम दशरथनन्दन हैं। राम हम सबकी आत्मा हैं। राम कर्तव्य हैं। राम कर्तव्यपालक हैं।

श्रीराम कर्मनिष्ठ और कर्तव्यपरायण थे। ईश्वर होते हुए भी मानव रूप में उन्होंने अपने सभी मानवीय कर्तव्यों का निष्ठा से पालन किया। पिता के वचन को सत्य करने के लिए अयोध्या के विपुल राज्य को ठुकरा कर सहर्ष वनगमन कर उन्होंने पिता के प्रति पुत्र के कर्तव्य का पालन किया। जिस पत्नी के अपहरण होने पर राम कितने व्याकुल हुए, कितने रोये और पागल की भाँति जड़–चेतन से पता पूछते हुए महीनों वन–वन भटके। पता लगने पर वनचर वानरों की सेना का संगठन कर अगाध दुस्तर सागर पर सेतु निर्माण कराकर त्रिलोक–विजयी राक्षसराज रावण के दुर्गम गढ़ में घुसकर उसकी ईंट से ईंट बजाकर उसका सकुल विध्वंस कर वंदिनी सीता को मुक्त कराकर

पति के कर्तव्य का पालन किया। फिर जिन सीताजी को अग्नि–परीक्षा की कसौटी पर खरी उतरने के बाद ही अंगीकार किया था, उन्हीं सीता के निष्कलंक चरित्र पर एक नागरिक के द्वारा लांछन लगाने पर राजा राम ने प्रजामनोरंजन के लिए अपनी निर्दोष, निष्पाप, निष्कलंक और गंगाजल सी पावन प्राणप्रिया का परित्याग कर राजा के कर्तव्य का पालन किया।

पत्नी सीता के परित्याग करने पर तो विरही राम के जीवन में मानो विरह का हिमालय ही टूट पड़ा था। इसका अहसास उन्हीं को हुआ होगा। राजा राम ने समस्त राजसी सुखों का परित्याग कर संन्यासी की भाँति जीवन जीकर विरह–विष पीते हुए एक पत्नी व्रती प्रेमी पति के कर्तव्य का पालन कर अपने कर्तव्य–कीर्तिमानों में और चार चाँद जड़े।

अयोध्या के राजमहल में नौकर–चाकरों की भीड़ रहते भी भगवती सीता ने स्वयं भोजन बनाकर आदर्श गृहिणी के कर्तव्य का पालन किया। उर्मिला आदि अपनी छोटी बहिनों पर स्नेह लुटाकर बड़ी बहिन के कर्तव्य का पालन किया। श्रीराम के वनगमन के समय कंटकमय पथ पर फूल बिछाने के लिए प्रियतम के साथ वन जाकर सीता ने सहचरी के कर्तव्य का पालन किया। वन के कष्ट सहकर भी प्रसन्न मन से अहिर्निशि पति–सेवा कर पत्नी का कर्तव्य निभाया। परित्यक्ता का दुखमय जीवन जीकर भी अपने पुत्र लव–कुश को उत्तम शिक्षा देकर उन्हें चरित्रवान वीर पुत्र बनाकर माता के कर्तव्य का पालन किया। स्वयं वन के असह्य कष्ट सहकर भी अपने पति की उज्ज्वल कीर्ति में कालिमा न लगने देकर माता सीता ने धर्मपत्नी के कर्तव्य का पालन किया।

विघ्नों के शिरों पर ठुमकियाँ लगाते हुए दुस्तर अगाध सागर को पार कर, समूची लंका नगरी को छान कर शान्तिमयी भक्तिस्वरूपा माता सीता का पता लगाकर रामभक्त हनुमान ने भक्तपुत्र के कर्तव्य का पालन किया। वाटिका–विध्वंस के बहाने लंका के असुर वीरों से युद्ध मोल लेकर शत्रु की शक्ति का पता लगाकर त्रिलोकविजयी राक्षसराज रावण को धर्मोपदेश देकर, लंका–दहन से रावण का अभिमान भंग कर दूत के कर्तव्य का पालन किया। लंका के समरांगण में मायावी मेघनाद द्वारा किए गए वीरघातिनी शक्ति के प्रहार से रामानुज लक्ष्मण के अचेत होने पर रात ही रात में हजारों किलोमीटर दूर हिमालय से संजीवनी बूटी लाकर रामप्राण लक्ष्मण के प्राण बचाकर हनुमानजी ने रामसेवक के कर्तव्य का पालन किया।

लक्ष्मण के तो राम प्राणाधार हैं। वे राम के बिना नहीं रहे, फिर राम के वन जाने पर वे अयोध्या में कैसे रहते। राम वनगमन का समाचार सुनते ही लक्ष्मण व्याकुल होकर दौड़े आए और राम के चरण पकड़ लिए। अन्तर्यामी राम अपने प्रिय लक्ष्मण की हार्दिक व्याकुलता और मनोदशा ताड़ कर अपने साथ ले गए। लक्ष्मण ने भी भगवान राम की सेवा में रात–दिन एक कर दिए। वे नित्य पूजा स्थल पर चौका लगाते, रसोई साफ करते, जल भर कर लाते, रसोई के लिए लकड़ियाँ काटकर लाते, खाने के लिए कन्द–मूल–फल जुटाते आदि कार्य करना उनकी दिनचर्या थी और रात्रि के समय देर रात तक भगवान राम के चरण दबाते और उनके सो जाने पर सीता–राम की कुटी के बाहर वीरासन से बैठकर हाथ में धनुष–बाण लिए सजग रहकर रात्रि भर पहरा देते। रामभक्त लक्ष्मण ने भगवान राम की भक्तिभाव से सेवाकर अपने कर्तव्य का पालन किया।

वैसे तो रामराज्य में सभी लोग कर्तव्यनिष्ठ और कर्तव्यपरायण थे, परन्तु चारों दशरथकुमारों की यानी चारों भाइयों की कर्तव्यपरायणता तो प्रशंसनीय और अनुकरणीय है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम तो कर्तव्य–पालन की पराकाष्ठा थे ही, किन्तु तीनों भाई भी कर्तव्य–पालन में पीछे नहीं थे। माता कैकेयी ने वनवास का वर तो केवल राम के लिए ही माँगा था – **''चौदह बरिस रामु बनबासी''**, लेकिन राम के साथ सीता–लक्ष्मण भी गए थे। यदि उस समय भरत–शत्रुघ्न अयोध्या में होते तो क्या वे अयोध्या में रह पाते, नहीं। वे दोनों भी श्रीराम के साथ वन अवश्य जाते या फिर राम को वन जाने ही न देते। राम, सीता, लक्ष्मण ने 14 वर्षों तक वन में रहकर दुःख झेले सो वह तो उनकी विवशता थी, क्योंकि वन में अयोध्या के राजमहल जैसे सुख–साधन नहीं थे, लेकिन भरत–शत्रुघ्न ने तो राजसी सुख–वैभव के सकल साधन होते हुए भी वन में रहने जैसा ही जीवन जिया।

ननिहाल से लौटने पर जब भरत को यह ज्ञात हुआ कि मेरे कारण ही राम, सीता, लक्ष्मण को वन जाना पड़ा,

तब उन्हें कितनी पीड़ा हुयी होगी, उसका आंकलन उनके सिवा और कौन कर सकता है। उनको अपने जीवन से इतनी ग्लानि हुयी कि उनको व्याकुल कर दिया। उन्हें अपनी पीड़ा शान्त करने की एक ही दवा सूझी और वह दवा थी–श्रीराम के चरणों का दर्शन।

देखें बिनु रघुनाथ पद जिय कै जरनि न जाइ।। (2/182)

भरत आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास के साथ राम को मनाकर अयोध्या लाने के लिए चित्रकूट गए। भक्त भरत की निर्मल भक्ति के प्रवाह में बह कर धर्मधुरंधर भगवान राम को भी यह कहना पड़ा कि भरत जो कहेगा, मैं वही करूँगा। भक्त भरत प्रभु को क्या आदेश देते, उन्होंने तो स्वामी की आज्ञा शिरोधार्य कर अयोध्या लौटकर अपने कर्तव्य का पालन किया। भरत ने अयोध्या से बाहर नन्दिग्राम में कुटी में रहकर वनवासी राम से भी कठोर संन्यासी जीवन जिया और राम–चरणों की पादुकाओं को अपना आराध्य मानकर उनकी भक्ति भाव से पूजा कर अपने कर्तव्य का पालन किया।

शत्रुघ्न भी किसी से पीछे नहीं थे। उन्होंने भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त भरत को अपना आराध्य मानकर भक्ति भाव से उनकी सेवा कर अपने कर्तव्य का पालन किया।

कर्तव्य–पालन के कीर्तिमानों के अनेकानेक उदाहरणों से समूचा मानस पटा पड़ा है, अतः मुझे यह कहने में लेश मात्र भी संकोच नहीं है कि कर्तव्य–पालन के कीर्तिमानों से मानस ऐसे दमक रहा है, जैसे टिमटिमाते तारों से नीलाकाश।

नर–जीवन कर्म प्रधान नरो
कर्मों में वसते सर्वेश्वर।
अधिकार तुम्हारा कर्मों में
तुम करो कर्म ही गुरु–ईश्वर।।

मानस में नारी का कल्याण रूप

पं. दिनेश चंद्र शर्मा, अध्यक्ष श्रीरामचरित मानस समिति, फोनः 9811056467

व्यवहार जगत में नारी के अनेक रूप देखने को मिलते हैं, किन्तु मुख्यतः छह रूपों का वर्णन किया गया है –

कार्येषु मंत्री करणेषु दासी भोज्येषु माता शयनेषु रम्भा।
धर्मानुकूला क्षमया धरित्री षाड्गण्यमेतद्धि पतिव्रतानाम्।।

घर के कार्यों में मंत्री के समान, सेवा में दासी के समान, भोजन में माता की भाँति, शयन काल में रम्भा जैसी, धर्म कार्य में पति की अनुकूलता में पूर्ण सहयोगिनी, क्षमा करने में पृथ्वी के समान व्यवहार करती हैं। ये सब गुण महाराज दशरथ की रानियों में मिलते हैं। अन्यत्र भी इनका अनेक प्रसंगों में वर्णन किया गया है –

कर्मशक्तिस्तु कैकेयी सुमित्रोपासनात्मिका।
ज्ञानशक्तिश्च कौशल्या वेदो दशरथो नृपः।।

स्वयं महाराज दशरथ वेद स्वरूप, कर्मशक्ति कैकेयी, उपासना शक्ति सुमित्रा और कौसल्या ज्ञानशक्ति स्वरूपा थीं। ज्ञानशक्ति कौसल्या से ही ज्ञानरूप रघुवंशमणि भगवान श्रीराम का प्रादुर्भाव हुआ।

कौसल्या :

मानस में माता कौसल्या का चरित्र बहुत ही उज्ज्वल और उच्चकोटि का है। वे पतिव्रता, श्रद्धामयी, करुणामयी और मंगलमयी माँ थीं। वे पूर्वकाल में स्वायंभुव मनु की पत्नी शतरूपा थीं। वही त्रेता युग में कौसल्या के रूप में उत्पन्न हुयीं। कौसल्या अयोध्यानरेश दशरथ की सबसे बड़ी रानी और भगवान श्रीराम की जननी थीं।

जब श्रीराम वन जाने के लिए अपनी माता कौसल्या से आज्ञा लेने के लिए उनके महल में गए, तब राम को देखते ही स्नेहमयी माता कौसल्या के हृदय में वात्सल्य रस उमड़ने लगा। वे पुत्र राम से कुछ खाने के लिए कहने लगीं, किन्तु उन्हें यह पता नहीं था कि राम तो दूसरे ही काम से आया है। राम ने कहा– माते! मुझे माता–पिता ने वन का राज्य दिया है, जहाँ मेरा सभी प्रकार से कल्याण होगा। आप मुझे वन जाने के लिए आज्ञा दीजिए। चौदह वर्ष वन में रहकर पिताजी के वचनों को सत्य कर पुनः लौट कर आपके चरणों का दर्शन करूँगा।

राम के वचनों को सुनकर माता कौसल्या को अपार दुख हुआ, परन्तु धर्मपरायणा, त्यागमूर्ति कौसल्या ने यह सोचकर कि यदि मैं राम को हठ पूर्वक वन जाने से रोकूँगी तो धर्म तो जाएगा ही, साथ ही दोनों भाइयों में मनमुटाव भी हो सकता है, उन्हें वन जाने की आज्ञा दे दी।

महाराज दशरथ प्राणाधार राम के वियोग में व्याकुल थे। खाना–पीना छोड़ दिया था। वे मरणासन्न स्थिति में थे। नगर और महलों में हाहाकार मचा हुआ था। ऐसी अवस्था में माता कौसल्या अपने दुख को भुलाकर अपने उत्तरदायित्व और कर्तव्य को समझ कर महाराज को धैर्य बँधाती हुयी बोलीं– हे नाथ! राम का वियोग अपार समुद्र है। अयोध्या जहाज है और आप उसके कर्णधार हैं। कुटुम्भी और प्रजा यात्री हैं। आप धीरज धरिएगा तो सब पार पहुँच जाएँगे, नहीं तो जहाज डूब जाएगा–

करनधार तुम्ह अवध जहाजू। चढ़ेउ सकल प्रिय पथिक समाजू।।
धीरजु धरिअ त पाइअ पारू। नाहिं त बूड़िहि सबु परिवारू।। (2/154/6–7)

माता कौसल्या जब चित्रकूट पर सीताजी को देखती हैं, तब बहुत दुखी होकर कहती हैं– "बेटी! तेरा मलिन मुख देख कर मुझे बहुत दुख हो रहा है।" यदि आज सभी सासों का बर्ताव पुत्रवधुओं के साथ ऐसा हो जाये तो घर–घर सुख का स्रोत बहने लगे। संतप्रवर तुलसीदासजी माता कौसल्या के विषय में लिखते हैं –

बंदउँ कौसल्या दिसि प्राची। कीरति जासु सकल जग माची।।
प्रगटेउ जहँ रघुपति ससि चारू। बिस्व सुखद खल कमल तुसारू।। (1/16/4–5)

श्रीराम द्वारा विश्वभर को आधिदैविक, आधिदैहिक, आधिभौतिक सभी प्रकार की शिक्षायें मिलीं, जिसकी आधारशिला महारानी कौसल्या ही बनीं।

कैकेयी :

लोक में कैकेयी का नाम सबसे अधिक बदनाम है। जिसने समस्त प्राणियों के सुखधाम राम को बिना अपराध के वन भेजने का पाप किया, उसे पापिनी, कलंकिनी, कुलनाशिनी न कहा जाये तो और क्या कहा जाये। जिसे उसके ही बेटे भरत ने त्याग दिया हो, उसे कौन व्यक्ति सम्मान देगा। लाखों वर्ष बीत जाने पर आज भी कैकेयी का नाम सुनते ही लोग नाक–भौं सिकोड़ लेते हैं और गाली देने से बाज नहीं आते, परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि कैकेयी अवगुणों की खान थी।

सत्य बात तो यह है कि माता कैकेयी भगवान राम की अनन्य भक्त थीं। वे परम सुंदरी ही नहीं, अपितु पतिव्रता और वीरांगना भी थीं। उनमें सरलता, दयालुता आदि गुण मौजूद थे। जब उन्होंने अपने परम प्रिय राम के राज्याभिषेक का समाचार सुना तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई और खुशी में मंथरा दासी को अपना अमूल्य हार देकर कहा था– मंथरे! तूने मुझे बड़ा ही प्रिय समाचार सुनाया है। इसके बदले तू और भी मनचाहा पुरस्कार माँग ले। मेरा राम धर्मात्मा, गुणी और न्यायप्रिय है, वही राज्याभिषेक का अधिकारी है, भरत नहीं।

जब मंथरा रानी कैकेयी को भड़काती है, तब वे क्रोधित होकर मंथरा को घरफोड़ी कहकर उसकी जीभ कटवाने की बात कहती हैं। इससे लगता है कि कैकेयी राम को अत्यधिक प्रेम करती थीं, फिर वे राम को वनवास क्यों देतीं?

वह तो उन्होंने भगवान राम की प्रेरणा से प्रेरित होकर ही वनवास दिलाया था और राम कार्य के लिए उन्होंने सदा के लिए बदनामी के जहर का घूँट पिया था। यदि वे राम को वनवास न दिलातीं तो न राम वन जाते और न रावण मारा जाता। जिस देवी ने भक्त भरत जैसे पुत्र को जन्म दिया, वे पापिनी, अपराधिनी कैसे हो सकती हैं। वे देवी राम वनगमन में निर्दोष थीं, अतः वे तिरस्कार के योग्य नहीं, अपितु परम आदरणीय हैं। इस संदर्भ में स्वयं श्रीराम ने कहा है –

दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई।। (2/263/8)

महारानी कैकेयी कर्मशक्ति थीं। समस्त विश्व को स्वकर्म–स्वधर्म की शिक्षा देने वाले इनके पुत्र श्रीभरत हुए, जो –

नित पूजत प्रभु पाँवरी प्रीति न हृदयँ समाति।
मागि मागि आयसु करत राज काज बहु भाँति।। (2/325)

माता, पिता, गुरु, बन्धु, पूज्यजनों की आज्ञा मानकर समस्त राष्ट्र की व्यवस्था को सँभालते हुए **'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धि लभते नरः,** की शिक्षा श्रीभरतजी ने दी। तभी तो वसिष्ठजी को कहना पड़ा –

भरत बिनय सादर सुनिअ करिअ बिचारु बहोरि।
करब साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि।। (2/258)

श्रीभरत की विनय में साधुमत, लोकमत, नृपनय, निगम का सार तो है ही, परमार्थ के रूप में भी इनमें सर्वगुण सम्पन्नता है। त्रिवेणी ने कहा है –

तात भरत तुम्ह सब बिधि साधू। राम चरन अनुराग अगाधू।। (2/205/7)
इतना ही नहीं गोस्वामीजी को कहना पड़ा कि –
जौं न होत जग जनम भरत को। सकल धरम धुर धरनि धरत को।। (2/233/1)
भरत चरित कीरति करतूती। धरम सील गुन बिमल बिभूती।।
समुझत सुनत सुखद सब काहू। सुचि सुरसरि रुचि निदर सुधाहू।।(2/288/7–8)
निरवधि गुन निरुपम पुरुषु भरतु भरत सम जानि। (2/288)

श्रीभरत के समस्त गुणों की आधारशिला तो इनकी माता कर्मशक्ति महारानी कैकेयी ही थीं। उन्होंने राम वनगमन का सारा कलंक अपने सिर पर लिया। महाराज दशरथजी के सत्य–प्रेम–राजधर्म पालन का, श्रीराम–लक्ष्मण–भरत–शत्रुघ्न चारों भाइयों के स्नेह, कर्तव्य एवं धर्मपालन का, महारानी कौसल्या के विशुद्ध प्रेम एवं

राजमातृत्व का, प्रजा–पुरवासियों के राष्ट्र प्रेम, धर्मरक्षण का, गोमाता, पृथ्वी, वेद, ब्राह्मण और संत रक्षण के साथ ही साथ अभूतपूर्व रामराज्यादर्श का मूलाधार स्वयं महारानी कैकेयी ही थीं। सभी के यश का विस्तार एवं अपने सिर पर कलंक लेकर कैकेयी ने विश्व का परम कल्याण किया। विश्व के इतिहास में परम सावधानी एवं दृढ़ता के साथ सब प्रकार का आदर्श करने कराने वाली महारानी कैकेयी जैसी कोई आदर्श नारी अब तक नहीं हुई, अतः वे समस्त नारी जाति के लिए अनुकरणीय ही नहीं, माननीय हैं।

सुमित्रा :

संसार में उसी स्त्री का जीवन सफल है, जिसका पुत्र भगवान का भक्त हो। माता सुमित्रा ऐसे ही दो पुत्रों की जननी थीं। उनका एक पुत्र भगवान राम का भक्त था तो दूसरा पुत्र रामभक्त भरत का भक्त था। यों तो चारों राजकुमारों के लालन–पालन और उनकी सुख सुविधा का ध्यान सुमित्रा ही रखती थीं। इसके साथ–साथ राजभवन के प्रबंध की देखभाल, नौकर–नौकरानियों को काम पर लगाना, अतिथियों की सुख–सुविधा का ध्यान रखना आदि कार्यों में वे व्यस्त रहती थीं। माता कौसल्या अपने पुत्र राम को वन जाने से रोक कर कैकेयी से विरोध नहीं कर सकती थीं, किन्तु माता सुमित्रा न्याय के पक्ष में अड़ सकती थीं और राम को वन न जाने की आज्ञा दे सकती थीं। इस स्थिति से बचने के लिए ही राम माता सुमित्रा से वन जाने की आज्ञा लेने नहीं गए थे।

जब अपने पुत्र लक्ष्मण से राम वनगमन का समाचार सुना, तब माता सुमित्रा कहती हैं–लक्ष्मण! तुम्हारे कार्य से ही राम वन जा रहे हैं, अतः अयोध्या में तुम्हारा कोई काम नहीं है। तुम उनके साथ जाओ और वन में उन दोनों की सेवा करना। माता सुमित्रा का विशाल हृदय था। जब हनुमान से लंका के युद्ध में लक्ष्मण के मूर्च्छित होने का समाचार सुना तो खुशी से इनका रोम–रोम खिल उठा। फिर यह सोचकर कि मेरा राम अकेला युद्ध कर रहा है, तब वे अपने छोटे बेटे शत्रुघ्न को आज्ञा देती हैं–बेटा शत्रुघ्न! तुम हनुमान के साथ लंका जाओ।

विश्व को पूर्ण मातृप्रेम, राष्ट्र रक्षार्थ जागरूकता, स्वार्थ–परमार्थ, नीति–प्रीति की परमोच्च शिक्षा अपने नैष्ठिक कर्तव्य द्वारा देने वाले लक्ष्मण एवं बड़ों की आज्ञापालन को जीवन में पूर्णरूप से क्रियान्वित करने वाले शत्रुघ्न हुए। इन दोनों की जन्मदात्री महारानी सुमित्रा ही थीं। वास्तव में ये सु+मित्रा (सुन्दर सलाह देने वाली) हैं। राष्ट्र कल्याण के लिए ही माता को सुयोग्य राष्ट्र रक्षक, राष्ट्रभक्त एवं भगवद्भक्त संतान देनी चाहिए, तभी उसका जीवन सफल माना जा सकता है –

जनय तो जननी भक्त जन या दाता या सूर।
नहीं तो जननी बांझ रह क्यों खोती है नूर।।

माता सुमित्रा अपने को इसी कोटि में मानती हैं। वे लक्ष्मण से श्रीराम वनगमन काल में कहती हैं–वत्स लक्ष्मण! राम सीता दोनों राष्ट्र रक्षार्थ, दुष्टदमनार्थ, धर्मरक्षणार्थ वन में जा रहे हैं तुम भी इस कार्य के लिए इनके साथ वन जाओ। तभी मैं अपने को पुत्रवती समझूँगी।

भूरि भाग भाजनु भयहु मोहि समेत बलि जाउँ।
जौं तुम्हरें मन छाड़ि छलु कीन्ह राम पद ठाउँ।। (2/74)
पुत्रवती जुबती जग सोई। रघुपति भगतु जासु सुतु होई।।
नतरु बाँझ भलि बादि बिआनी। राम बिमुख सुत तें हित जानी ।। (2/75/1–2)
जौं पै सीय रामु बन जाहीं। अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं।। (2/74/4)
सकल सुकृत कर बड़ फलु एहू। राम सीय पद सहज सनेहू।। (2/75/4)
जेहिं न रामु बन लहहिं कलेसू। सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू।। (2/75/8)

समस्त राष्ट्र का पूर्णरूप से कल्याण कराने वाली एवं पुत्र को उसी दिशा में ही प्रेरणा देने वाली उपासना

शक्ति महारानी सुमित्रा का ये आदर्श विश्व में परम दुर्लभ है। इसी प्रकार पुत्र को कल्याण के मार्ग पर लगाने वाली ही माताओं का जीवन गौरवपूर्ण एवं धन्य है। महारानी कौसल्या ने श्रीराम को जन्म देकर विश्व को समस्त ज्ञान, कैकेयी ने भरत को जन्म देकर समस्त मानव कर्तव्य, सुमित्रा ने श्रीलक्ष्मण एवं शत्रुघ्न को जन्म देकर समस्त भ्रातृप्रेम, गुरुजनों की आज्ञापालन, ईश्वर भक्ति एवं राष्ट्र के प्रति वास्तविक कर्तव्य की शिक्षा दी।

इसी कारण गोस्वामी तुलसीदासजी ने तीनों रानियों एवं महाराज श्रीदशरथजी की वंदना बड़े ही गौरवपूर्ण रूप में की है, यथा –

दसरथ राउ सहित सब रानी। सुकृत सुमंगल मूरति मानी।।
करउँ प्रनाम करम मन बानी। करहु कृपा सुत सेवक जानी।।
जिन्हहि बिरचि बड़ भयउ बिधाता। महिमा अवधि राम पितु माता।। (1/16/6–8)

उर्मिला :

रामकथा के नारी पात्रों में श्रीरामभक्त लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला देवी का चरित्र बड़ा ही अनूठा है, किन्तु यहाँ यह प्रश्न उठता है कि मानस में उर्मिला के चरित्र का तो कहीं वर्णन ही नहीं है, तो फिर उर्मिला का चरित्र अनूठा कैसे है? वास्तव में उर्मिला के चरित्र का वर्णन करने में तुलसीदासजी का मौन रहना ही उर्मिला के चरित्र की महानता का सूचक है।

उर्मिला मिथिलानरेश जनक की औरस पुत्री और सीता की छोटी बहिन थीं। उर्मिला भी सीताजी की तरह पतिव्रता थीं। वे भी अपने पति लक्ष्मण की निष्काम भाव से सेवा करती थीं। जैसे रावण–वध के लिए सीता का वन जाना आवश्यक था, वैसे ही मेघनाद–वध के लिए उर्मिला का घर रहना आवश्यक था, क्योंकि मेघनाद को यह वरदान था कि जो पुरुष बारह वर्ष तक अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करेगा, उसी के हाथ से मेघनाद की मृत्यु होगी। यदि उर्मिला वन जातीं तो लक्ष्मण को अखंड ब्रह्मचर्य पालन में कठिनाई होती।

उर्मिला साधारण स्त्री नहीं थीं। वे शेषनाग के अवतार लक्ष्मण की पत्नी थीं। विवाह के बाद उर्मिला को पति के साथ रहते बारह वर्ष बीत गए थे। इतने दिनों में वे अपने पति के स्वभाव और धर्म–कर्तव्य को भलीभाँति समझ गयी होंगी, इसलिए पति के मन के भाव को समझने वाली उर्मिला ने लक्ष्मण के साथ वन जाने को नहीं कहा। आजकल की स्त्रियों की तरह उर्मिला सुख–भोग की तो भूखी थी नहीं। पति के कर्तव्य–पालन में सहायक होना ही पत्नी का धर्म है। इस बात को वे अच्छी तरह समझती थीं और उन्होंने पत्नी–धर्म निभाया भी। उन्होंने भी अपने पति की भाँति अयोध्या में रहकर चौदह वर्षों तक अखंड ब्रह्मचर्य का पालन किया। जिन दम्पती के जीवन का उद्देश्य ही धर्म–पालन रहा, फिर उनमें परस्पर शिकायत की गुंजाइश ही नहीं थी। लोग अज्ञानता के कारण उन पर व्यर्थ की यह शंका करते हैं कि लक्ष्मण अपनी पत्नी उर्मिला से मिलकर वन क्यों नहीं गए? ऐसी पति–अनुगामिनी पतिव्रता उर्मिला देवी को शतशः प्रणाम।

मंदोदरी :

मंदोदरी निस्संदेह उच्चकोटि की महिला थीं। वे एक सहृदया, संवेदनशील, सुशीला और संस्कारी नारी थीं। वे मय दानव की पुत्री और त्रिलोकविजयी लंकापति रावण की धर्मपत्नी और पटरानी थीं। मंदोदरी में अद्‌भुत आकर्षक और उनका भव्य व्यक्तित्व था। सच्चरित्र, सरल स्वभाव, धर्मपरायण, पतिव्रता आदि गुण होने के कारण ही उनकी पंचकन्याओं में गणना होती है। नित्य प्रातःकाल में उनके नाम (मंदोदरी) का स्मरण करने से महापातकों का नाश होता है –

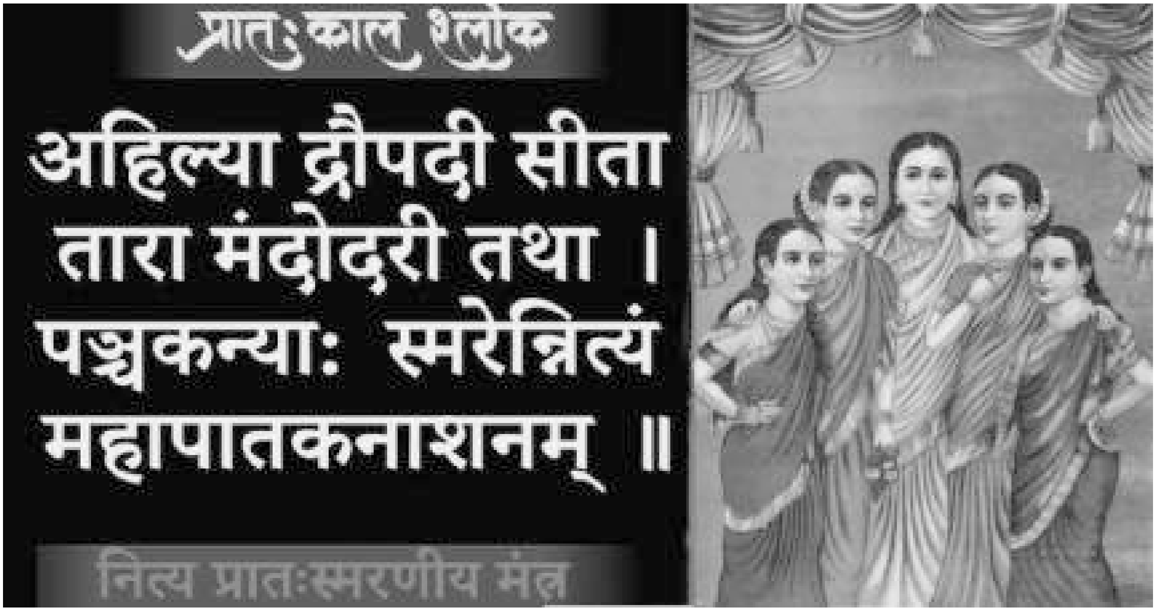

अहिल्या द्रौपदी कुंती तारा मन्दोदरी तथा।
पंचकन्या स्मरेन्नित्यं महापातक नाशनम्।।

मंदोदरी का स्वभाव रावण के स्वभाव से बिल्कुल विपरीत था। उन्होंने सीता–हरण का कभी समर्थन नहीं किया, अपितु उसे सदा गलत ही ठहराया। वे बुद्धिमती, समझदार और कर्तव्य–परायण नारी थीं। पतिव्रता पत्नी का परम धर्म और कर्तव्य है कि वह अपने भटके पति को मधुर वाणी में प्रेम भरे वचनों से समझा कर सन्मार्ग पर लाए, इसलिए उन्होंने मधुर वाणी में अपने पति लंकापति रावण को चार बार समझाने का भरसक प्रयास किया।

पहली बार लंका–दहन के बाद, दूसरी बार श्रीराम द्वारा सागर पर पुल बनवाये जाने के बाद, तीसरी बार श्रीराम द्वारा एक ही बाण से रावण के छत्र–मुकुट और मंदोदरी के कुंडल काट गिराये जाने पर तथा चौथी बार लंका के किसी वीर से अंगद का पैर न हटाए जाने पर। मंदोदरी ने अपने प्राणप्रिय लंकापति रावण को बहुत समझाया, परन्तु रावण अपने निश्चय से टस से मस न हुआ। आखिरकार वही हुआ, जिसकी आशंका थी। यद्यपि विधि के विधान को बदला नहीं जा सकता, परन्तु प्राणी का कर्तव्य है कि वह अपने कर्तव्य का पालन करे और अंत तक लोक–कल्याण के लिए प्रयासरत रहे। कर्तव्यपरायण मंदोदरी ने अपने पत्नी–धर्म को निभाने का भरसक प्रयास किया। उन धर्मपरायणा प्रातः स्मरणीया देवी मंदोदरी को कोटि–कोटि नमन्।

गहनों के स्वरूप

मस्तक का गहना नमन करना,
कान का गहना भगवत्कथा सुनना।
मुख का गहना सत्य बोलना,
आँख का गहना लाज रखना।।
गले का गहना मधुर बोलना,
दिल का गहना गंभीर रहना।
पेट का गहना बात पचाना,
हाथों का गहना दान देना।

भारतीय संस्कृति में नारी–सम्मान

श्री देवेन्द्र शर्मा, गुरुग्राम, फोनः 9810199441

यद्यपि महिलाओं का समाज के प्रति सभी प्रकार के योगदान का इतिहास तो सृष्टि के आदि काल से ही जुड़ा हुआ है, लेकिन सुना और पढ़ा जाता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने दिनांक 8 मार्च 1977 को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में घोषित किया। निवेदन है कि किसी विशेष समाज के ही प्रति नहीं, अपितु महिलाओं का संसार के प्रति अनुपम योगदान तो यह है कि वे स्वयं को सर्वश्रेष्ठ और समर्थ मानने वाले पुरुष को जन्म देती हैं और साथ ही साथ अपने वर्ग की वृद्धि भी करती हैं, इसीलिए जो भी महिलाओं के इस योगदान को सदा स्मरण नहीं रखते, वे महिलाओं के प्रति हर प्रकार से अपराधी माने जाने चाहिए। अल्प ज्ञान और निहित राजनीतिक स्वार्थों से युक्त कुछ लोग नारी और अन्य विषयों को लेकर अनेक प्रकार की अनर्गल आपत्तियाँ उठाकर समाज व्यवस्था की सशक्त सनातन नीति से युक्त प्राचीन ग्रन्थ ''मनुस्मृति'' का भी विरोध करते हैं। ऐसे लोगों को नारी–सम्मान के विषय पर आगे लिखे ''मनुस्मृति' के वचन अवश्य पढ़ने और समझने चाहिए, यथा –

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।। (मनुस्मृति 3/56)
शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा।। (मनुस्मृति 3/57)

अर्थात् जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ स्त्रियों की पूजा नहीं होती, उनका सम्मान नहीं होता, वहाँ किए गए समस्त अच्छे कर्म निष्फल हो जाते हैं। जिस कुल में स्त्रियाँ कष्ट भोगती हैं, वह कुल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है और जहाँ स्त्रियाँ प्रसन्न रहती हैं, वह कुल सदैव फलता–फूलता है और समृद्ध रहता है। पंचम वेद माने जाने वाले महान ग्रन्थ महाभारत में वर्णित, जगत प्रसिद्ध विदुर नीति भी यही कहती है कि –

पूजनीया महाभागाः पुण्याश्च गृहदीप्तयः।
स्त्रियः श्रियो गृहस्योक्तास्तस्माद् रक्ष्या विशेषतः।। (उद्योगपर्व/प्रजागरपर्व/38/11)

अर्थात् स्त्रियाँ घर की लक्ष्मी कही जाती हैं। ये अत्यन्त सौभाग्य शालिनी, आदर के योग्य, पवित्र तथा घर की शोभा हैं, अतः इनकी विशेष रूप से (सम्मान सहित) रक्षा करनी चाहिए।

ब्राह्मणेषु च ये शूराः स्त्रीषु ज्ञातिषु गोषु च।
वृन्तादिव फलं पक्कं धृतराष्ट्र पतन्ति ते।। (उद्योगपर्व/प्रजागरपर्व/36/61)

अर्थात् हे धृतराष्ट्र! जो लोग ब्राह्मणों, स्त्रियों, जाती वालों और गौओं पर शूरता प्रकट करते हैं, वे डंठल से पके हुए फलों की भाँति नीचे गिरते हैं।

पूरे वर्ष में दिनांक 8 मार्च, अर्थात् अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस, महिलाओं के सम्मान का प्रतीक दिवस भी बन चुका है, जिसका उद्भव पश्चिमी देशों की सभ्यता से हुआ है, जबकि सृष्टि के आदिकाल से चली आ रही हमारे देश भारत की शाश्वत सनातनी परम्परा में तो देश, काल और पात्र की अति विशिष्ट अपवाद स्वरूप, स्थिति–परिस्थितियों को छोड़कर, महिला/नारी नित्य–प्रति ही पूजनीय और सम्माननीय है, क्योंकि –

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः।
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।। (श्रीदुर्गासप्तशती 11/6)

अर्थात् संसार की सभी स्त्रियाँ (विभिन्न अवस्थाओं अथवा संदर्भों में) भगवती श्रीदुर्गा का ही स्वरूप हैं। हमारे ग्रन्थ कहते हैं कि चाहे देवता हों या फिर मनुष्य, नारी ही उनकी शक्ति रूपा मानी गई है और उनकी प्रतिष्ठा का स्थान, देवताओं और पुरुष दोनों के ही वाम–भाग में प्रतिष्ठित किया गया है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

माता श्रीपार्वती और भगवान श्रीशिव –
जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा। बाम भाग आसनु हर दीन्हा।। (1/107/3)

परब्रह्म स्वरूप में भगवती श्रीसीताजी और प्रभु श्रीराम –

जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी।।

भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई।। (1/148/3–4)
महाराज जनक और महारानी सुनयना तथा गिरिराज हिमालय और धर्मपत्नी मयना...
जनक बाम दिसि सोह सुनयना। हिमगिरि संग बनी जनु मयना।। (1/324/4)
राजा रूप में प्रभु श्रीराम और जगज्जननी श्रीसीताजी –
राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जन्म सुफल निज जानि।। (7/11ख)

और यह भी ध्यान रहे कि हमारी लेखनी भी शक्ति के स्थान बायीं दिशा से वामांग से ही शक्ति लेकर दाईं ओर चलती है और अपनी रचना का सृजन करती है। तब फिर ऐसी स्थिति में कोई भी लेखनी समाज–व्यवस्था की असाधारण अपवाद–ग्रस्त अवस्थाओं को छोड़कर, शक्ति रूपा नारी का अपमान कैसे कर सकती है?

नारी के संदर्भ में पावन ग्रन्थ श्रीरामचरितमानस पर आपत्ति उठाने वाले बुद्धिमान जनों को भी इस पावन ग्रन्थ को सचेत होकर पढ़ना चाहिए और समझना चाहिए कि श्रीरामचरितमानस में ईश्वर के अवतार प्रभु श्रीराम जब अपनी तुलना (नारी रूप में) माता से करते हैं, तब फिर नारी सम्मान के संदर्भ में इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है, यथा–

सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा।।
करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी।। (3/43/4–5)

निश्चित तौर पर इसीलिए हमारे सभी देवों के नाम के पहले उनकी शक्ति/ अर्धांगिनी/धर्मपत्नियों के नाम का उच्चारण होता है, जैसे– **श्रीलक्ष्मीनारायण, श्रीसीताराम, श्रीउमाशंकर, श्रीउमामहेश्वर, श्रीराधाकृष्ण आदि।**

समाज के सभी नर–नारियों को विवेकयुक्त होकर पढ़ना और समझना चाहिए कि श्रीरामचरितमानस में नारी माता के रूप में सर्वप्रथम पूजनीय है, यथा –

1. **प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।। (1/205/7)**
   अर्थात् राजकुमार के रूप में ईश्वर श्रीराम प्रातःकाल उठकर सबसे पहले अपनी माता को प्रणाम करते हैं और उसके बाद ही वे अपने पिता और गुरुदेव को प्रणाम करते हैं।
2. **राजकुमारि सिखावनु सुनहू। आन भाँति जियँ जनि कछु गुनहू।। (2/61/2)**
   सब बिधि भामिनि भवन भलाई।। (2/61/4)
   अर्थात् राजकुमार श्रीराम अपनी भार्या/पत्नी की अवस्था में (नारी) श्रीसीताजी को परामर्श वार्ता के अवसर पर भी राजकुमारी और भामिनि जैसी सम्माननीय संज्ञाओं से सम्बोधन करते हैं।
3. **जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा। बाम भाग आसनु हर दीन्हा।। (1/107/3)**
   अर्थात् भगवान श्रीशिव अपनी अर्धांगिनी श्रीपार्वतीजी का वामांग में आसन देकर अत्यंत आदर करते हैं।
4. **तबहिं रायँ प्रिय नारि बोलाईं। कौसल्यादि तहाँ चलि आईं।। (1/190/1)**
   अर्थात् महाराज दशरथ अपनी प्रिय पत्नियों (रानियों) के साथ सदा प्रेमपूर्वक व्यवहार करते हैं।
5. **सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि। भरत कथा भव बंध बिमोचनि।। (2/288/3)**
   अर्थात् महाराज जनक, आपसी चर्चा के दौरान भी अपनी पत्नी महारानी सुनयनाजी को सुमुखि–सुलोचन जैसे प्रेम–प्रणय–युक्त वचनों से सम्बोधित करते हैं।
6. **प्रिया सोचु परिहरहु सबु सुमिरहु श्रीभगवान।**
   पारबतिहि निरमयउ जेहिं सोइ करिहि कल्यान।। (1/71)

अर्थात् श्रीपार्वतीजी के पिता गिरिराज हिमालय अपनी भार्या मैना का सम्बोधन ''प्रिया'' जैसे मधुर शब्दों के माध्यम से करके उनसे वार्ता करते हैं।

7. महासती के रूप में महर्षि अत्रि की पत्नी अनुसुइयाजी को जगत के कर्ता–धर्ता श्रीब्रह्मा–श्रीविष्णु–श्रीमहेश

त्रिदेवों को विशेष परिस्थिति में शिशु रूप में परिवर्तित करने का सामर्थ्य और श्रेष्ठतम सम्मान प्राप्त है। अनुसुइयाजी के इसी महत्व को जानते–समझते हुए श्रीसीताजी बहुत ही आदर पूर्वक उनके चरण पकड़कर प्रणाम करते हुए उनसे मिलती हैं–

अनुसुइया के पद गहि सीता। मिली बहोरि सुसील बिनीता।। (3/5/1)

8. **जननी सम जानहिं परनारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी।। (2/130/6)**

अर्थात् समाज में पराई नारी (पत्नी) को अपनी जननी (माता) के समान मानने और तदनुसार सम्मान देने तथा दूसरे के धन को विकट से विकट विष मानने की शिक्षा तो हमें श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ ही देता है।

9. यह भी ध्यान रहे कि श्रीरामचरितमानस में प्रभु श्रीराम की परछाईं माने जाने वाले श्रीभरतजी जैसे पात्र को भी अपनी माता की निंदा करने पर चित्रकूट की भरी सभा में प्रभु श्रीराम की झिड़की सुननी पड़ती है, जिसमें प्रभु श्रीराम श्रीभरतजी के प्रति कहते हैं कि–

दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई।। (2/263/8)

10. श्रीविभीषणजी भी लंकेश रावण को समझाते हुए यही कहते हैं कि –

जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना।।
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाईं।। (5/38/5–6)

11. **अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।। (4/9/7)**

अर्थात् घर–परिवार में रहते हुए छोटे भाई की पत्नी, अपनी बहिन, पुत्र–वधु और अपनी पुत्री को एक समान समझने और तदनुसार उन्हें सम्मान और सुरक्षा प्रदान की शिक्षा भी श्रीरामचरितमानस से ही मिलती है।

12. **सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना। जग जोधा को मोहि समाना।। (6/8/2)**

अर्थात् और तो और राक्षसराज रावण भी अपनी पत्नी मंदोदरी का सम्बोधन प्रणय युक्त वचन ''प्रिया'' की संज्ञा के माध्यम से करता है।

13. शिक्षा–संस्कारों के सब साधनों से हीन, लेकिन भक्ति–भाव युक्त भील जाति की एक अबला नारी, भक्तिमती शबरी को केवल उसके भक्तिभाव युक्त से होने के आधार को श्रेष्ठतम बताकर प्रभु श्रीराम जिस प्रकार का आदर–सम्मान उसे देते हैं, वह तो संसार में अद्वितीय है, यथा –

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता।। (3/35/4)

क्योंकि –

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।।
भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा।। (3/35/5–6)
जोगि बृंद दुरलभ गति जोई। तो कहुँ आजु सुलभ भइ सोई।। (3/36/8)

नारी को ऐसा सम्मान तो संसार में अद्वितीय है।

14. नारी समाज प्रत्येक वर्ग के कुल वर्धन का शास्त्र–सम्मत माध्यम है।

15. **इस लेखन सेवा के समापन में निवेदन है कि –**

पूज्य श्रीगोस्वामीजी न तो नारी विरोधी थे और न किसी वर्ग विशेष के, लेकिन यदि सूर्पणखा जैसी नारी, जो वैधव्य को प्राप्त होने पर भी दुराचरण में आसक्त और लिप्त है, तब फिर ऐसी नारी हो या फिर समरूप आचरण से युक्त कोई भी अन्य पात्र हो, तब उसकी ताड़ना/सीख/शिक्षा देने के विधान रूप में ही लिखा गया है कि –

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।। (5/59/6)

श्रीरामचरितमानस की उपर्युक्त पंक्ति एक सूत्र रूप में मान्य है, अतः इस पंक्ति पर सारे विवाद अनर्गल हैं। (इस संदर्भ में एक लेख इसी अंक में (पृष्ठ 50 प्रकाशित है, निवेदन है कि पाठक गण उसका भी अवलोकन करें)

16. पुनः निवेदन है कि –

नर+ई = नारी पुरुष की शक्ति है।

न+अरि = नारी शत्रुता के भाव से रहित है।

नार+इ = नारी जल के समान स्वच्छ और सरल–तरल है।

इस प्रकार उपर्युक्त विधान से भी नारी सदैव ही सम्माननीय है।

पूज्य गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज के द्वारा श्रीरामचरितमानस में जो कुछ भी लिखा गया है, वह देश–काल–पात्र की अनुकूल–प्रतिकूल मर्यादाओं के अनुसार अथवा उनके अनुरूप, सम्पूर्ण समाज के नीति–युक्त, सदाचार–युक्त अनुशासन और व्यावहारिक– सत्य को दृष्टिगत रखकर ही लिखा गया है, अन्यथा श्रीरामचरितमानस में वर्णित उपर्युक्त सभी उद्धरण सिद्ध करते हैं कि हमारी भारतीय संस्कृति में और विशेषकर श्रीरामचरितमानस में समाज के अनुशासन की अतिविशिष्ट प्रतिकूल अवस्थाओं को छोड़कर नारी सर्वदा–सर्वथा

निर्बल कोउ न सहाय

देवन्ह प्रभुहि पयादें देखा। उपजा उर अति छोभ बिसेषा।।
सुरपति निज रथ तुरत पठावा। हरष सहित मातलि लै आवा।।

(मानस 6/89/1–2)

यदि इसे सीधे और सरल भाव से लें तो लगता है कि देवताओं में बहुत दया है, वे बहुत दयालु हैं, इसलिए उन्होंने ज्यों ही रामजी को युद्धभूमि में पैदल देखा कि देवराज इन्द्र ने तुरंत अपना रथ भेज दिया, किन्तु बात कुछ और है जो हमें सीखने को मिलती है, वह यह कि ऐसे लोग हमारी मदद करने को कब तत्पर होते हैं। राम–रावण युद्ध कई दिनों से चल रहा था और रामजी बहुत पहले से पैदल नंगे पांव रहे कि नहीं? देवतागण युद्ध को पहले दिन से ही देख रहे थे, किन्तु वे तब तक मदद करने को आगे नहीं आए, जब तक उन्होंने रामजी के सामर्थ्य का पलड़ा भारी नहीं देखा। देवन्ह प्रभुहि प्यादें देखा–'प्रभुहि' अर्थात् समर्थ को, सक्षम को देखा और युद्ध के इस पड़ाव पर जब देख लिया कि रामजी की विजय अब निश्चित है तब सहयोग को आगे आए।

जब मेघनाद–कुंभकर्ण सहित रावण की सारी सेना मारी गई और रावण अकेला बच गया तब :–

रावन हृदयँ बिचारा भा निसिचर संघार।
मैं अकेल कपि भालु बहु माया करौं अपार।। (6/88)

इसके बाद देवताओं ने – **देवन्ह प्रभुहि पयादें देखा।**

इसलिए कहा गया है कि :–

सबहिं जगावत सबल को निर्बल कोउ न सहाय।
पवन जगावत आग को दीपहिं देइ बुझाय।।

अर्थात् हवा सबल आग को जगा देती है और निर्बल दीपक को बुझा देती है।

निर्बल की, असमर्थ की, भला कौन सहायता करता है? जी हाँ, इसलिए सबल बनें

क्योंकि :–**निर्बल कोउ न सहाय।**

मानस में मर्यादा

श्री सचिन शर्मा, नोएडा, फोनः 9310555665

यों तो जगन्निर्माता जगन्नियंता जगदीशवर के इस धराधाम पर असंख्य अवतार हुए हैं, परन्तु हमारे धर्मशास्त्रों में ईश्वर के चौबीस अवतारों की गणना मिलती है। उन चौबीस अवतारों में दश अवतार मुख्य माने गए हैं और उन दशावतारों में भी भगवान श्रीराम और भगवान श्रीकृष्ण के अवतार प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्हीं दोनों अवतारों की मधुर पावन लीलाओं से हमारे धर्म–ग्रन्थ भरे पड़े हैं।

भगवान श्रीराम और भगवान श्रीकृष्ण लोकचर्चित हैं और दोनों के ही नामों को बड़ी श्रद्धा–भक्ति और आदर से लिया जाता है। यद्यपि श्रीराम और श्रीकृष्ण दोनों एक ही हैं यानी त्रेतायुग के श्रीराम ही द्वापर युग में श्रीकृष्ण बने थे, परन्तु एक होने पर भी इन दोनों के स्वभाव और कर्मों में जमीन–आसमान का अन्तर है–भगवान श्रीराम ने अपने को मर्यादाओं के बंधन में जकड़े रखा, इसलिए वे मर्यादा पुरुषोत्तम कहे जाते हैं, परन्तु भगवान श्रीकृष्ण ने तो सामाजिक मर्यादाओं तक को तार–तार कर दिया था। उनकी अधिकांश लीलायें गूढ़ और अलौकिक हैं, इसलिए उन्हें लीला पुरुषोत्तम कहा जाता है।

भगवान श्रीराम धर्म–चक्र की धुरी, मानवता की रीढ़ और भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि हैं। उन्होंने अपने जीवन में चमत्कार नहीं दिखाए। वास्तव में तो श्रीराम अलौकिक ही हैं और उनकी लीलायें भी अलौकिक ही हैं, परन्तु उनकी लीलायें अलौकिक होते हुए भी लौकिक हैं, इसलिए साधारण मनुष्य तक के लिए सहज ग्राह्य हैं। श्रीराम ने अपने जीवन में चमत्कार नहीं दिखाए, अपितु एक आम मानव की तरह जीवन के झंझावातों का सामना करते हुए यानी संघर्ष झेलते हुए सदैव धर्म–मार्ग पर चलकर लोक को धर्म–पालन की शिक्षा दी। स्वयं मर्यादा में रहकर लोक को मर्यादाओं के पाठ पढ़ाये।

अब प्रश्न उठता है–मर्यादा किसे कहते हैं?

'मर्यादा' शब्द का अर्थ है– सीमा। 'मर्यादा–पालन' का अर्थ है–संसार के जड़–चेतन को अपनी मर्यादा की सीमा में रहना। मर्यादा का पालन केवल प्राणी ही नहीं करते, अपितु जड़ पदार्थ भी अपनी मर्यादा का पालन करते हैं, फिर मनुष्य की तो बात ही क्या है, क्योंकि समस्त जड़–चेतनों में मनुष्य का सर्वोपरि स्थान है, अतः मनुष्य को मर्यादा का पालन करना नितान्त आवश्यक है।

जब कोई कर्म मर्यादा के दायरे में होता है तो वह धर्म (पुण्य) कहलाता है और जो कर्म अपनी मर्यादा (सीमा) लाँघ जाता है तो वही अपराध बन जाता है, जैसे–जब सरिता अपनी सीमा (अपने दोनों किनारों के बीच में) रहकर बहती है, तब वह जगत का हित करती है, इसलिए जगत उसकी पूजा करता है, किन्तु जब वही सरिता यौवन–मद में चूर होकर (बाढ़ के समय) अपनी सीमा को लाँघकर (तटबंध तोड़कर) अमर्यादित बहती है, तब वह जगत का अहित करती है, विनाश करती है, बस्तियों की बस्तियाँ उजाड़ देती है, गाँव–शहरों में तबाही मचा देती है, तब विश्व उसकी निंदा करता है। सरिता की तरह मनुष्य जब सामाजिक मर्यादाओं में रहते हैं, तब वे लोकप्रिय होते हैं, किन्तु जब वे अपनी मर्यादा पार कर समाज में अनाचार, भ्रष्टाचार, व्यभिचार करते हैं, तब वे लोक–निंदित और घृणा के पात्र बनते हैं।

मानव–यौवन ज्येष्ठ मास का तपता हुआ वह दोपहर है, जिसके आतप से संतप्त तृषित मन–मृग नीर के लिए व्याकुल भटकता है। यौवन वह समुद्री तूफान है, जो अपने तटवर्ती बस्तियों को उजाड़ देता है। यौवन वह उफनता हुआ नद है, जो ग्राम–नगरों में तबाही मचा देता है और सज्जन लोगों का जीना दूभर कर देता है, समाज की शान्ति–भंग कर समाज को अशान्त कर देता है। यौवन उस मधुलोलुप मधुकर की तरह है, जो सुकुमारि कलियों के मधुकोष लूटता फिरता है। अमर्यादित और अनियंत्रित काम यौवन को और उन्मत्त बना देता है, अतः काम–वासना पर नियंत्रण रखकर अपनी मर्यादा में रहना अत्यावश्यक है।

इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए समाज के शुभचिंतकों और समाज–शास्त्रियों ने समाज–हित के लिए कुछ नियम बनाए हैं, कुछ मर्यादाओं की रेखायें खींची हैं, जिससे मनुष्य मर्यादा में रह सकें। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, अतः समाज के नियमों का पालन करते हुए मर्यादा में रहना मानव का परम कर्तव्य ही नहीं, अपितु नैतिक उत्तरदायित्व

भी है।

मर्यादा की जितनी शिक्षा हमें संतशिरोमणि तुलसीदासजी द्वारा रचित मानस (श्रीरामचरितमानस) से मिलती है, उतनी शिक्षा किसी अन्य धर्मग्रंथ से नहीं मिलती, क्योंकि मानस महाकाव्य के महानायक मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम हैं। वे स्वयं तो मर्यादा–पालक रहे ही, साथ ही वन में रहकर भी उन्होंने वनवासी चोर–लुटेरे भील आदि लोगों को मर्यादा के पाठ पढ़ाकर मर्यादा में रहना सिखाया, यहाँ तक कि वनचर व्यवहार शून्य वानरों को भी, जिनको यह तक पता नहीं था कि बड़ों का अभिवादन और उनका सम्मान कैसे किया जाता है। जरा देखिए–वानरों के आराध्य स्वामी भगवान श्रीराम तो पेड़ के नीचे बैठे हैं और उनके सेवक वानर उनके ऊपर उसी पेड़ की डाल पर बैठे हैं–यह व्यवहार शून्य उद्दंडता नहीं तो और क्या है –

''प्रभु तरु तर कपि डार पर।'' (1/29(क)

उन व्यवहार शून्य उद्दंड वानरों तक को भी मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ने मर्यादा, लोकव्यवहार, सदाचार के पाठ पढ़ाकर अपनी तरह मर्यादा में रहना सिखाया।

किष्किंधापति वानरराज बालि, जिसने अपने छोटे भाई सुग्रीव को मार–पीट कर नगर से बाहर निकाल दिया था और उसकी पत्नी को अपनी दासी बनाकर उसके साथ व्यभिचार करता था, भगवान श्रीराम के द्वारा बाण से मारे जाने पर वह मरणासन्न स्थिति में प्रभु से प्रश्न करता है–यदि आपको मेरा अनुज सुग्रीव प्रिय है तो ठीक है, मगर मैं आपका प्रिय नहीं हूँ तो शत्रु भी नहीं हूँ और मैं आपसे युद्ध भी नहीं कर रहा था, फिर आपने जंगली पशु की भाँति मुझ निरपराधी को शिकारी की तरह छिपकर क्यों मारा? आप तो समदर्शी भगवान हैं, फिर आपने मेरे साथ पक्षपात का व्यवहार क्यों किया?

मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा।। (4/9/6)

मरणासन्न बालि के प्रश्न के उत्तर में भगवान श्रीराम ने मर्यादा की शिक्षा देते हुए कहा–रे मूर्ख बालि! तू पत्नी के होते हुए भी अपनी अनुज–वधू के साथ व्यभिचार करता है और अपने को निरपराध कहता है और ऊपर से लोक–व्यवहार की बात करता है तो सुन–छोटे भाई की स्त्री, बहिन, पुत्र की पत्नी और कन्या–ये चारों समान हैं। इनको जो कोई बुरी दृष्टि से देखता है यानी इनके साथ व्यभिचार करता है तो उस व्यभिचारी को मारने में कोई पाप नहीं होता –

अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।। (4/9/7–8)

मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ने मर्यादा की शिक्षा देकर वनचर वानरों को संयम से रहना सिखाया। इतना ही नहीं दिगम्बर रहने वाले वानरों को त्रिलोकविजयी रावण का कुल–संहार कर लंका–विजय के बाद लंकापति विभीषण से गगनचारी पुष्पक विमान से वस्त्र और आभूषणों की वृष्टि कराकर उन्हें वस्त्र धारण कराकर लज्जा का पाठ पढ़ाया –

नभ पर जाइ बिभीषन तबही। बरषि दिए मनि अंबर सबही।।
जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं। (6/117/6–7)

वानरों को अयोध्या ले जाकर तो उन्हें प्रणाम करना सिखाया। जब विमान से उतर कर भगवान श्रीराम ने कुलगुरु वसिष्ठ को देखते ही अपने धनुष–बाण पृथ्वी पर रखकर छोटे भाई लक्ष्मण सहित दौड़ कर गुरुजी के चरण–कमलों में भक्तिभाव से प्रणाम किया। सभी ब्राह्मणों को प्रणाम किया और तीनों माताओं को प्रणाम कर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। भक्त भरत–शत्रुघ्न ने भगवान राम और माता सीता के चरणों में प्रणाम किया। फिर श्रीराम सभी अयोध्यावासियों के गले मिले। यह सब देख कर वानर आश्चर्य चकित अवाक् खड़े थे, तब भगवान श्रीराम ने अपने सभी वानर सखाओं को बुलाया और उन सबको गुरुजनों को प्रणाम करने का शिष्टाचार सिखा कर कहा–ये हमारे पूज्य कुलगुरु ब्रह्मर्षि वसिष्ठ हैं, आप सभी गुरुदेव के चरण–कमलों में भक्तिभाव से प्रणाम करो–

पुनि रघुपति सब सखा बोलाए। मुनि पद लागहु सकल सिखाए।।
गुर बसिष्ट कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपाँ दनुज रन मारे।। (7/8/5–6)

राज्याभिषेक के बाद वानरों की विदाई के समय राजा राम ने अपने वानर सखाओं को सुंदर–वस्त्राभूषण भेंट किए। स्वयं राम, भरत और लक्ष्मण ने अपने हाथों से पहना कर उनका भव्य स्वागत कर उन्हें विदा किया –

तब प्रभु भूषन बसन मगाए। नाना रंग अनूप सुहाए।।
सुग्रीवहि प्रथमहिं पहिराए। बसन भरत निज हाथ बनाए।।
प्रभु प्रेरित लछिमन पहिराए। लंकापति रघुपति मन भाए।। (7/17/5–8)
जामवंत नीलादि सब पहिराए रघुनाथ।
हियँ धरि राम रूप सब चले नाइ पद माथ।। (7/17क)

इस तरह मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ने वनचर–वानरों तक को वस्त्राभूषण भेंट कर उन्हें सभ्य नागरिकों की तरह मर्यादा में रहकर जीवन जीने की शिक्षा दी।

माता कैकेयी ने राम के वनवास के लिए जो मर्यादा की रेखायें (राज्य, कुटुम्ब, गाँव, नगरादि की ओर से भलीभाँति उदासीन होकर विरक्त मुनियों की तरह तपस्वियों के वेश में राम चौदह वर्ष तक वन में निवास करे) खींची थीं, उनका कभी उल्लंघन नहीं किया, बल्कि वन के घोर कष्ट सहकर भी राम ने सदा उन मर्यादाओं का पालन किया, उदाहरणार्थ –

वनगमन के समय वनमार्ग में जब सीता, लक्ष्मण और सुमंत्र सहित श्रीराम शृंगवेरपुर पहुँचे, तब निषादराज गुह्य ने उनकी यथायोग्य सेवा की और भक्तिभाव से करबद्ध प्रार्थना की–हे नाथ! मुझ सेवक पर कृपा करके शृंगवेरपुर में पधारिए और वहाँ निवास कीजिए। यह दास आपकी तन, मन, धन से सेवा कर अपने जीवन को धन्य समझेगा।

कृपा करिअ पुर धारिअ पाऊ। थापिय जनु सबु लोगु सिहाऊ।। (2/88/7)

केवटराज की भक्तिभाव भरी हार्दिक विनय सुन कर पितृभक्त राम ने माता कैकेयी के उस वर –

तापस बेष बिसेशि उदासी। चौदह बरिस रामु बनबासी।। (2/29/3)

का स्मरण कर मर्यादापालक श्रीराम बोले–''हे सखा! तुम्हारा प्रेम भरा कथन सत्य है, परन्तु मुझे पिताजी की आज्ञानुसार मुनियों का व्रत और वेश धारण कर चौदह वर्ष वन में रहना है, इसलिए मैं तुम्हारे नगर में नहीं जा सकता।'' शृंगवेरपुर में जाने से इनकार कर राम ने मर्यादा का पालन किया।

किष्किंधा के सिंहासन पर आसीन होने पर वानरराज सुग्रीव के प्रार्थना करने पर भी श्रीराम किष्किंधा नगरी में नहीं गए। बोले–हे सखा! मैं चौदह वर्ष नगर–बस्ती में नहीं जाऊँगा, इसलिए प्रवर्षण पर्वत पर रहकर ही वर्षाकाल बिताऊँगा–

कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा। पुर न जाउँ दस चारि बरीसा।।
गत ग्रीषम बरषा रितु आई। रहिहउँ निकट सैल पर छाई।। (4/12/7–8)

मित्र सुग्रीव के नगर में जाने से भी इनकार कर श्रीराम ने मर्यादा का पालन किया।

लंकापति बनने पर विभीषण ने भी भगवान श्रीराम से भक्तिभाव से प्रार्थना की–हे प्रभु! अब इस दास के घर को भी पवित्र कीजिए और वहाँ चलकर स्नान कर युद्ध की थकान दूर कीजिए। फिर मुझे भी अपने साथ अयोध्या ले चलिए, लेकिन श्रीराम ने वही बात कही–मित्र! मैं पिताजी के वचन के कारण नगर में नहीं जा सकता –

पिता बचन मैं नगर न आवउँ। आपु सरिस कपि अनुज पठावउँ।। (6/106/4)

उक्त तीनों प्रिय भक्तों के प्रार्थना करने पर भी उनके नगर में न जाकर मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम ने मर्यादा का पालन किया।

वैसे तो रामराज्य में सभी लोग कर्तव्यनिष्ठ और मर्यादा–पालक थे, परन्तु चारों भाइयों की तो बात ही कुछ

और थी। उनमें भी भगवान श्रीराम मर्यादा–पालन में सबसे आगे थे। वे मर्यादा की मूर्ति और पराकाष्ठा थे, तभी तो श्रीराम को मर्यादापुरुषोत्तम कहा जाता है। तीनों भाई भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न भी मर्यादा–पालन में तत्पर थे। माता कैकेयी ने वनवास का वर तो केवल राम को ही माँगा था, लेकिन उनके साथ में सीता और लक्ष्मण भी गए थे। यदि उस समय भरत और शत्रुघ्न भी अयोध्या में होते तो वे भी राम के साथ वन अवश्य जाते या राम को वन ही न जाने देते।

राम, सीता, लक्ष्मण ने चौदह वर्ष तक वन में रह कर घोर दुख झेले सो वे तो दुख झेलने को विवश थे, क्योंकि वन में महल जैसे सुखों का अभाव था, परन्तु भरत–शत्रुघ्न ने तो राजसी सुख–वैभव के सकल साधन होते हुए भी राजमहल में रह कर वन में रहने जैसा जीवन जिया। भरत ने अयोध्या से बाहर नन्दिग्राम में रह कर राम की तरह क्या, राम से भी अधिक दुखद और कठोर संन्यासी का जीवन जिया और साथ ही विपुल राज्य के सभी शासन–कार्य व्यवस्थित ढंग से करते रहे। शत्रुघ्न भी किसी से पीछे नहीं थे। राजमहल में रहते हुए भी महलों के सुख से दूर थे और उन्होंने भगवान के भक्त भरत को अपना आराध्य मानकर उनकी सेवा में तत्पर रहकर मर्यादा का पालन किया।

रामराज्य में सभी मनुष्य आपस में प्रेम करते थे और वेदों में बतायी हुयी मर्यादा में रहकर अपने–अपने धर्म का पालन करते थे –

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)

रामराज्य में प्राणियों की तो चले क्या, जड़ पदार्थ (सर, सरिता, समुद्र आदि) तक भी अपनी मर्यादा (सीमा) में रहते थे और परोपकार करते थे, जैसे–रत्नाकर अपनी मर्यादा में रहता था और दूसरों की भलाई के लिए अपनी लहरों के द्वारा किनारों पर रत्न डाल देता था, जिन्हें मनुष्य उठा लेते थे –

सागर निज मरजादाँ रहहीं। डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं।। (7/23/9)

बादल तक अपनी मर्यादा में रहते थे, इसलिए रामराज्य में अनावृष्टि (सूखा) और अतिवृष्टि (बाढ़) कहीं नहीं होती थीं। लोगों की आवश्यकतानुसार बादल समय पर जहाँ जितने जल की आवश्यकता होती थी, उतनी ही जल–वृष्टि करते थे –

मागें बारिद देहिं जल रामचंद्र कें राज। (7/23)

मित्र विभीषण के कहने पर श्रीराम ने समुद्र से पार जाने का उपाय जानने के लिए समुद्र से तीन दिन तक विनय की, लेकिन जब जड़ समुद्र ने विनय की भाषा नहीं समझी अर्थात् भगवान राम के विनय करने पर भी उसका हृदय नहीं पिघला, तब राम ने उसे सुखाने के लिए धनुष पर अग्नि–बाण चढ़ाया तो समुद्र का जल खौलने लगा, तब रत्नाकर विप्रवेश धारण कर रत्नों से भरा स्वर्ण थाल लेकर भगवान राम की शरण में आकर बोला–प्रभु! क्षमा कीजिए। मैं तो स्वभाव से ही जड़ हूँ। आपने मुझे शिक्षा देकर अच्छा किया, परन्तु आपके प्रताप से मैं सूख तो जाऊँगा और आपकी सेना पार उतर जाएगी, परन्तु इसमें मेरी मर्यादा नहीं रहेगी –

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही। मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही।।
प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई। उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई।। (5/59/5,7)

इस प्रकार से मर्यादा–पालन के उदाहरणों से समूचा मानस भरा पड़ा है।

हमारे भीतर जो सांस चल रही है वही परमेश्वर का सबसे बड़ा उपहार है कृपया कृतज्ञ हो जाएँ, जिंदगी ही समस्या है और जिंदगी ही निदान है।

मानस के लोकोपयोगी सूत्र

श्री अवध किशोर दूबे, झारखण्ड, फोनः 8409925271

श्रीरामचरितमानस में भक्ति–ज्ञान–वैराग्य आध्यात्मिक तत्वों के साथ–साथ हर प्रसंग में कोई न कोई लोकोपयोगी सूत्र छिपा हुआ है। ऐसे सूत्र लोक–कल्याण हेतु बहुत उपयोगी हैं। इन सूत्रों में संनिहित शिक्षा सम्पूर्ण मानव समाज के लिए कल्याणकारी है। ऐसे ही दो प्रसंगों में विद्यमान लोकोपयोगी सूत्रों का वर्णन इस आलेख में प्रस्तुत है।

(1) मोर अहार जहाँ लगि चोरा

सीता माता का पता लगाने श्री हनुमानजी अति लघु रूप (मसक समान) धारण करके रात्रि के समय में लंका में प्रवेश करते हैं, किंतु लंका की सुरक्षा व्यवस्था इतनी मजबूत थी कि रात्रिकाल में अति सूक्ष्मरूप धारी को भी लंकिनी टोकती है और कहती है कि तुम एक चोर की भाँति मेरे होते हुए लंका में प्रवेश कर रहे हो। अरे सठ! तुम नहीं जानते मेरा आहार ही ''चोर'' है –

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा। मोर अहार जहाँ लगि चोरा।। (5/4/3)

लंकिनी लंका के प्रवेश द्वार पर नियुक्त है। उसका कर्तव्य के साथ–साथ आहार (भोजन) निर्धारित है कि संसार में जितने भी चोर हैं, तुम उन्हें खा सकती हो, किंतु सत्य यह है कि उसे चोर की परिभाषा ही ज्ञात नहीं है कि चोर किसे कहते हैं। वह यह मानकर चल रही थी कि जो चुपके से प्रवेश करने का प्रयास करेगा वही चोर है, पर विचार करें कि चोर को पकड़ने वाली पुलिस भी तो उसी शैली में चोर का पीछा करती है/पकड़ती है और रावण ने सीता–हरण में जिस युक्ति का प्रयोग किया वह अन्य को छोड़िए रावण की पत्नी, भाई एवं प्रजा की दृष्टि में भी चोर ही नहीं है, तो वास्तविकता यही है कि चोर, चोरी करके भाग गया है और हनुमान रूपी पुलिस उस चोर का पता करते हुए चोर के निकट पहुँचने जा रही है और ये लंकिनी रोक रही है। विचार करें कि ये चोर को पकड़ने वाली प्रहरी है या चोर की सुरक्षा के लिए प्रहरी है। विद्वज्जन! बिना गुरु के अधूरे ज्ञान में यही होता है। कौन चोर है और कौन पुलिस, इसका ज्ञान नहीं और पहरा दे रही है, इसीलिए हनुमानजी ने उसे उसकी इस सजगता के पुरस्कार स्वरूप एक मुक्का जड़ दिया।

मुठिका एक महा कपि हनी। रुधिर बमत धरनीं ढनमनी।। (5/4/4)

कौन चोर है इसका भी ज्ञान नहीं और प्रहरी बनी हो। ऐसा श्री हनुमानजी ने लंकिनी से कहा तथा समझाया कि तुम जिससे निष्ठा रखती हो वही तो विश्व का सबसे बड़ा चोर है (चोरा)। वह सुनसान का लाभ उठाकर (जब स्वामी रामजी या प्रहरी लक्ष्मणजी नहीं थे) चोरी करके लंका की ओर भागा आ रहा था, उस समय तुम्हारी सजगता नहीं रही और जो चोर का पता करने आ रहा है उसी को पकड़ रही हो। मैं मच्छर सा छोटे आकार में और रात्रि के अँधरे में प्रवेश कर रहा हूँ, फिर भी देख लिया और तुम्हें बड़े आकार वाला रावण दिन में चोरी करके आते हुए दिखाई नहीं दिया। रावण चुपचाप भी हो, किन्तु सीताजी का करुण–क्रंदन प्रमाण भी दिखाई नहीं दिया कि पर स्त्री की चोरी कर आ रहा है?

सुधिजन! इस कलियुग में उच्च पदस्थ भ्रष्ट आचार युक्त के कुछ प्रहरियों की भी लंकिनी वाली स्थिति रहती है। जैसे वह समर्थ को (जब रावण चोरी करके आता तो) नहीं, बल्कि असमर्थ को पकड़ती थी (मसक समान अर्थात् असमर्थ/साधारण से दिखाई देने वाले हनुमानजी), क्योंकि लंकिनी ने मच्छर सा आकार बनाए हनुमानजी को तुच्छ समझा। आज भी कई जगह यही होता है, अतः चोर से पहले ऐसे प्रहरी पर प्रहार शुचिता के शुभारंभ का श्रीगणेश है।

ऐसे प्रहारों से ही समाज में सुख–शान्ति स्थिर रह सकती है।

(2) सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती।

श्रीहनुमानजी सीतान्वेषण–कार्य विभीषणजी के सहयोग से पूर्ण कर सके। उन्होंने विभीषणजी को समझाया कि तुम अनीति का साथ क्यों दे रहे हो। इस शिक्षा (मंत्र) को प्राप्त कर उन्होंने भाई रावण को समझाया, किंतु वह नहीं समझा, बल्कि कहता है –

मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती। सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती।। (5/41/5)

गंभीरता पूर्वक विचार करें कि रावण विभीषण की भलाई कर रहा है या बुराई? तुम्हें जिनसे प्रेम है उनसे मिल लो – ''सठ मिलु जाइ'', तो मन ही मन विभीषण ने सोचा कि वहाँ मेरा क्या काम? कुछ रोजगार मिलेगा कि नहीं। रावण क्या कहता देखिए–सठ मिलु जाइ और ''तिन्हहि कहु नीती'' अर्थात् तुम यहाँ नीति की बात कहते आए हो, बस अब यह वहाँ करना, यही तुम्हारे योग्य रोजगार है और स्थाई भी तथा नियमतः भी ये उचित है क्योंकि –

नीति धर्म के चरन सुहाए। अस जियँ जानि राम पहिं आए।। (6/38/10)

रावण ही नहीं, बल्कि रावण के माता–पिता के मंत्री रह चुके माल्यवंत भी भरी सभा में रावण से यही कहते हैं कि आपके अनुज विभीषण नीति विभूषण हैं –

तात अनुज तव नीति बिभूषन। सो उर धरहु जो कहत बिभीषन।। (5/40/2)

सभी जानते हैं कि रामजी धर्म के साक्षात् विग्रह हैं, इसलिए यही उचित है कि नीति धर्म (राम) के आश्रय में रहे, अधर्मी के नहीं और रावण ने वही कर दिया जो विभीषण के लिए उचित था, अतः ये ऐसे हैं कि जैसे किसी कंपनी का अब बंद होना निश्चित है और उस कंपनी का स्वामी किसी कर्मचारी के लिए दूसरी कंपनी में नौकरी पक्की कर रहा हो। उसने एक पत्र भी बना दिया और उस पर अपने हस्ताक्षर एवं मुहर लगाकर भेज दिया हो कि जाओ वहाँ इसे दिखाना, तो वह संदेश क्या है और मुहर क्या है?

नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता।। (5/45/7)

मैं रावण का भाई हूँ, ये संदेश/पैरवी है और राक्षसी स्वभाव अनुसार रावण ने विभीषण की छाती पर लात मारकर मानो मुहर भी लगा दी है और ये पैरवी इतनी तगड़ी निकली कि श्रीराम ने मित्र सुग्रीव की बात भी किनारे कर विभीषण को उसी पद (नीति–विचारक) पर रख लिया जो रावण ने बताया था।

दूसरी बात यह है कि रामजी की इच्छा पर निर्भर है कि कौन सा कार्य कब किससे करा लें। हनुमानजी ने विभीषण से कहा था कि जब आपको रामजी से इतना स्नेह है कि–

तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा।। (5/7/2)

तो तुम आगे बढ़ो न? तुम एक पग बढ़ोगे, तो प्रभु सात पग, लेकिन जब विभीषण आगे नहीं बढ़े तो रामजी ने हनुमानजी वाला कार्य (संत को असंत की मंडली से निकालने का कार्य) घोर विरोधी रावण से ही करा लिया–सठ मिल जाइ।

इस प्रसंग में यह सूत्र उभर कर आता है कि जीव 'संत की बात और संसार की लात' से ईश्वरोन्मुख हो सकता है और विभीषण को यह दोनों प्राप्त हुए, जिससे उनका लोक–परलोक सुधर गया। श्रीहनुमान चालीसा के अनुसार –

तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना। लंकेस्वर भए सब जग जाना।।

(1) मनुष्य शरीर मल–मूत्र पैदा करने की फैक्ट्री है, परन्तु इसमें एक गुण है कि जीव अपना उद्धार कर सकता है। यह गुण देवताओं में भी नहीं है, जबकि देवताओं का शरीर दिव्य होता है। उनको मनुष्य शरीर से दुर्गन्धि आती है। गाय का शरीर बहुत पवित्र है, उसका गोबर–गोमूत्र भी पवित्र है, पर उसमें भी उसका कल्याण नहीं होता।

(2) जो जिस वस्तु का दुरुपयोग करता है, उसे यह वस्तु पुनः नहीं मिलेगी। सदुपयोग करने से पुनः वह वस्तु मिलती है। यदि कोई मनुष्य शरीर का दुरुपयोग करेगा तो उसे मनुष्य शरीर नहीं मिलेगा। मनुष्य शरीर दुरुपयोग करने के लिए नहीं मिला है।

(3) वास्तव में अच्छाई सब भगवान की है, बुराई हम लोगों की है। जैसे पानी नल में दीखता है, पर वह वहाँ से नहीं आता, टंकी से आता है, ऐसे ही अच्छी बातें भगवान की कृपा से आती हैं।

(4) बीज को उबाल दिया जाय या भून दिया जाए तो फिर बीज से कुछ पैदा नहीं होता। ऐसे ही मदिरा धर्म के अंकुर को जला देती है। मदिरा पीने वाला तत्त्वचिन्तन नहीं कर सकता।

अंगद की दृढ़ भक्तिनिष्ठा

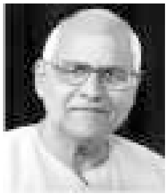

श्री राम जन्म सिंह, ग्राम/पोस्ट–दामा, जिला–आजमगढ़ (उ.प्र.), फोनः 9839453851

ईश्वर की महिमा (सत्ता) पर अडिग विश्वास ही भक्ति की पराकाष्ठा है। मानस में पग–पग पर विश्वास की महिमा का गायन मिलता है। इसी विश्वास के बल पर लक्ष्मणजी ने राजा जनक की सभा में घोषणा की थी –

तोरौं छत्रक दंड जिमि तव प्रताप बल नाथ। (1/253)

और वैसा ही विश्वास था श्रीहनुमानजी के मन में जिसके बल पर सौ योजन समुद्र लाँघ गए थे, पर अंगद ने अपने विश्वास को जो रूप दिया, उसकी तुलना इन दोनों प्रसंगों से भी नहीं की जा सकती है। लंका के युद्ध में जिस पराक्रम का परिचय अंगद ने दिया उसकी तुलना केवल हनुमानजी के अतुलनीय पराक्रम से ही की जा सकती है। अंगद चरित्र में कुछ उत्कृष्ट गुण हैं। इस लेख में अंगद के चरित्र और उनकी भक्तिनिष्ठा पर चर्चा की जा रही है। सर्वप्रथम किष्किन्धा काण्ड का वह प्रसंग विचारणीय है, जिसमें राघवेन्द्र बालि के ऊपर बाण चलाते हैं। बालि गिर जाता है, तब प्रभु आकर बालि के सामने खड़े हो जाते हैं। बालि भगवान को कुछ उलाहना देता है और कुछ प्रश्न करता है कि प्रभु आप तो समदर्शी हैं –

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं।। (4/9/5)

प्रभु राम ने उत्तर में कहा –

अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।। (4/9/7–8)

भगवान बालि के मस्तक पर हाथ रखकर प्रस्ताव करते हैं कि वह जीवित रहना चाहता है या मरना? बालि ने मृत्यु का वरण करते हुए कहा – आप मेरे नेत्रों के सामने हैं, ऐसा संयोग क्या फिर कभी बन पड़ेगा?

जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं।। (4/10/3)

बालि ने प्रभु को पहचान कर अपना जन्म सफल माना। प्रभु ने बालि को अपने परमधाम भेज दिया और सुग्रीव को किष्किन्धा का राज्य देकर कहा –

अंगद सहित करहु तुम्ह राजू। संतत हृदयँ धरहु मम काजू।। (4/12/9)

जीवन के अंतिम क्षणों में बालि ने अपने पुत्र अंगद को बुलाकर उसे प्रभु के हाथों में सौंपते हुए निवेदन किया, प्रभो! आप अंगद का हाथ पकड़ लीजिए, उसे अपने चरणों में स्थान दीजिए, सेवा का सौभाग्य दीजिए। प्रभु! मेरा पुत्र मेरे समान बलवान है, पर एक अन्तर है, मुझमें बल के साथ अभिमान था, इसमें बल के साथ विनम्रता है।

यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिऐ।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिऐ।। (4/10 छंद)

बालि की मृत्यु अंगद के समक्ष हुई, अंगद के मन में श्रीराम के प्रति विरोध आ सकता था, पर अंगद रामजी के ईश्वरत्व के प्रति पूर्ण आस्थावान था, बालि तो केवल शरीर का पिता था, शरीर का नाता एक जन्म का है, पर ईश्वर का नाता तो जन्म–जन्म का और शाश्वत है। श्रीराम ने अंगद को अपनी शरण में ले लिया। बालि की चतुराई देखें उसने यह नहीं कहा कि अंगद तुम प्रभु का चरण पकड़ लो, बल्कि भगवान से कहा, आप इसका हाथ पकड़ लो, क्योंकि पकड़ा हुआ चरण तो छूट सकता है, पर प्रभु ने जिसका हाथ पकड़ लिया वह तो उनका हो गया, इसमें कोई संदेह नहीं है।

ब्रह्माजी से प्राप्त वरदान के अनुसार रावण का संहार ईश्वरीय पद्धति से न करके मानवीय पद्धति से करने का निर्णय था। भगवान नर रूप में अवतार लेने वाले हैं, इसलिए देवता भी वानर–भालू रूप में अवतरित हुए। विभिन्न देवताओं ने अपने विभिन्न अंशों से अलग–अलग बन्दरों के रूप में जन्म लिया। हनुमानजी शंकरावतार हैं। ब्रह्मा स्वयं जाम्बवानजी और देवराज इन्द्र के अंश से बालि का जन्म हुआ। सुग्रीव का जन्म सूर्य के अंश से हुआ। उल्लेखनीय है कि महाभारत काल में भी कर्ण सूर्य पुत्र था तथा अर्जुन इन्द्र के अंश से पैदा हुए थे, दोनों सगे भाई थे।

सुबेल पर्वत पर प्रातः मंत्रियों को बुलाकर प्रभु ने सलाह पूछी कि आगे क्या किया जाए। जाम्बवन्त ने कहा, हे सर्वज्ञ, हे अन्तर्यामी, हे बुद्धि, बल, तेज, धर्म आदि गुणों की राशि सुनिए–बालिकुमार अंगद को संधि प्रस्ताव के साथ

दूत बनाकर भेजा जाए। प्रभु ने अंगद से कहा, तुम मेरे काम के लिए लंका जाओ और संकेत स्वरूप कहा –

बहुत बुझाइ तुम्हहि का कहऊँ। परम चतुर मैं जानत अहऊँ। (6/17/7)

प्रभु की आज्ञा शिरोधार्य कर और उनके चरणों में सिर नवाकर युवराज अंगद अत्यन्त हर्षित होकर रावण की सभा में गए। अंगद को भेजने का अर्थ यह है कि बालिपुत्र को देखते ही रावण को बालि की याद आ जाएगी, जिसने रावण को पराजित किया था। श्रीराम द्वारा राजदूत के रूप में रावण की सभा में अंगद जाते हैं। रावण से उनका जो संवाद हुआ, वह बड़ा ही लोकप्रिय है। मानस में दो ऐसे संवाद हैं, जिनमें साधारण जन को बड़े आनंद की अनुभूति होती है। उनमें एक है, लक्ष्मण–परशुराम–संवाद और दूसरा संवाद लंकाकाण्ड में अंगद–रावण–संवाद है। रावण पूछता है–

कह दसकंठ कवन तैं बंदर। मैं रघुबीर दूत दसकंधर।। (6/20/1)

अंगद कहते हैं, हे भाई! मेरे पिता से तुम्हारी मित्रता थी, इसलिए मैं तुम्हारी भलाई के लिए आया हूँ। राजमद में या मोहबस तुम जगज्जननी सीता को हर लाए। मेरी हितकारी सलाह सुनो, उन्हें लौटा दो। श्रीराम शरणागत के रक्षक हैं। रावण ने कहा, अरे बंदर! क्या कहते हो, पहले अपना परिचय बताओ। अंगद कहते हैं –

अंगद नाम बालि कर बेटा। तासों कबहुँ भई ही भेटा।। (6/21/3)

रावण ने कहा, अरे कुलनाशक बंदर! तुम निर्लज्ज और स्वाभिमान रहित हो। तुम जिसके राजदूत बनकर आए हो उन्होंने ही तुम्हारे पिता का वध किया। रावण ने अंगद को छेड़ने का प्रयास किया। तत्पश्चात् रावण आँखें तरेर कर बोला– मैंने कैलाश पर्वत उठाया, महादेव को सिर रूपी पुष्प चढ़ा कर पूजा की, मेरे चलने से धरती हिलती है। कुम्भकर्ण जैसा भाई और इन्द्रजीत मेघनाद जैसा पुत्र है मेरा। राम तो स्त्री वियोग में बलहीन हो रहा है, उसे मेरा डर सता रहा है, गुणहीन समझकर पिता ने उसे वनवास दे दिया। लक्ष्मण उसी के दुख से दुखी है। विभीषण डरपोक है, जाम्बवन्त बूढ़ा है। नल–नील मात्र शिल्पी हैं। हाँ, उनकी सेना में एक वानर बलवान है, जिसने लंका जलाई, अशोक वाटिका उजाड़ी। मैं विश्व विजेता रावण हूँ। यह सुनकर अंगद सभी पुरानी कथाएँ दोहराते हैं और पूछते हैं कि तुम इनमें कौन से रावण हो–

बलिहि जितन एक गयउ पताला। राखेउ बाँधि सिसुन्ह हयसाला।।
खेलहिं बालक मारहिं जाई। दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई।।
एक बहोरि सहसभुज देखा। धाइ धरा जिमि जन्तु बिसेषा।।
कौतुक लागि भवन लै आवा। सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा।।
(6/24/13–16)

और अंत में अंगदजी ने व्यंग्यात्मक भाषा में कटाक्ष करते हुए पूछा –

एक कहत मोहि सकुच अति रहा बालि की काँख। (6/24)

रावण यह सुनकर तिलमिला उठा। तत्पश्चात् रावण पुनः अपने यश का बखान करने लगा। रावण की अहंकारयुक्त वाणी सुन कपिश्रेष्ठ युवराज अंगद ने क्रोधित होकर जोर से तमक कर दोनों भुजदण्डों को पृथ्वी पर दे मारा। पृथ्वी हिल उठी, रावण सिंहासन से नीचे गिर गया, उसके मुकुट नीचे गिर गये। चार मुकुट अंगद ने उठाकर प्रभु के पास भेज दिए। इधर रामदल में इसे उल्कापात या वज्र समझा। हनुमानजी ने उछल कर उन्हें पकड़ लिया। लंका से वापिस आने पर प्रभु ने पूछा–अंगद तुमने मुकुट कैसे पाए? अंगद बोले–प्रभु! वे मुकुट नहीं थे, वे राजा के चार गुण थे और रावण इनका दुरुपयोग करता था, इसीलिए वे उसे छोड़कर आपके पास आ गए।

साम दान अरु दंड बिभेदा। नृप उर बसहिं नाथ कह बेदा।।
नीति धर्म के चरन सुहाए। अस जियँ जानि नाथ पहिं आए।। (6/38/9–10)

उल्लेखनीय है कि हनुमानजी ने रावण की सभा में घोषणा की थी –

राम चरन पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह करहू।। (5/23/1)

पर अंगद ने कहा, तेरी सभा में यदि कोई मेरा पैर हटा दे, तो मैं सीता को हार जाऊँगा।

जौं मम चरन सकसि सठ टारी। फिरहिं रामु सीता मैं हारी।। (6/34/9)

श्रीराम से अगर किसी को हानि हुई तो वह है अंगद। रामजी के हाथों उनके पिता का वध हुआ, फिर भी श्रीराम ने अंगद को जितना अधिकार देकर भेजा, उतना हनुमानजी को भी नहीं दिया था। हनुमानजी को केवल सीताजी का पता लगाने को भेजा था, पर अंगद को असीमित अधिकार देकर भेजा था। उन्होंने कहा था –

बहुत बुझाइ तुम्हहि का कहऊँ। परम चतुर मैं जानत अहऊँ।।
काजु हमार तासु हित होई। रिपु सन करेहु बतकही सोई।। (6/17/7–8)

श्रीराम ने अंगद को परम चतुर समझ कर एक सिद्धांत बता दिया कि जिससे हमारा काम बन जाए और उसका हित हो, शत्रु से इस प्रकार का वार्तालाप करना। अंगद को प्रभु ने परम चतुर क्यों समझा, इसका सीधा सा उत्तर है अंगद की ''दृढ़ भक्तिनिष्ठा''। विचारणीय यह है कि रामजी का काज क्या है और रावण का हित किसमें है। इस प्रश्न के उत्तर में पीछे अरण्यकाण्ड का प्रसंग देखिए, जब श्रीरामजी मायामृग को पकड़ने/मारने के लिए जाते हैं, तब गोस्वामीजी लिखते हैं –

तब रघुपति जानत सब कारन। उठे हरषि सुर काजु सँवारन।। (3/27/6)

श्रीरामजी का काम है **''राक्षसों का संहार''** और रावण का हित है श्रीरामजी के बाण से प्राण त्याग कर परमधाम प्राप्त करना। सूर्पणखा के नाक–कान कटने पर जब खर और दूषण बदला लेने जाते हैं और श्रीरामजी सेना सहित उनका संहार कर देते हैं, तब रावण ने यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि इस तामस देह से भगवान का भजन तो होगा नहीं, उनसे वैर करके उनके बाण से यह शरीर त्यागने पर परमधाम प्राप्त हो जाएगा।

होइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा।। (3/23/5)

श्रीरामजी मर्यादापुरुषोत्तम हैं, उन्होंने राजनीति का पालन करने के उद्देश्य से अंगद को शान्ति प्रस्ताव लेकर भेजा था। अब अंगद का कर्तव्य था कि रावण को युद्ध के लिए प्रेरित करें। उन्होंने अपना पैर जमाया, जिसे मेघनाद जैसे वीर भी न हिला सके और जब रावण आया तो पैर हटा लिया। इस प्रकार उसे लज्जित करके युद्ध करने के लिए प्रेरित किया। इसी में उसका हित था और यही श्रीरामजी का कार्य था। तब अंगद बोले, अरे पाप की राशि, मंदबुद्धि, कामी रावण! तुम बंदर का पैर पकड़ रहे हो, इससे तेरा कल्याण नहीं होगा, जाकर प्रभु का पैर पकड़ो।

गहत चरन कह बालिकुमारा। मम पद गहें न तोर उबारा।। (6/35/2–3)
गहसि न राम चरन सठ जाई। सुनत फिरा मन अति सकुचाई।।

अंगद का चरण संत के मन का प्रतीक है। दोहावली में गोस्वामी तुलसीदासजी अंगद के चरण को भक्तों के विश्वास का प्रतीक बताते हैं।

तेहि समाज कियो कठिन पन जेहिं तौल्यो कैलास।
तुलसी प्रभु महिमा कहौं सेवक को बिस्वास।। (दोहावली–167)

प्रभु जब सुबेल पर्वत पर विश्राम करने लगे तो दो लोगों को अपने सिरहाने बैठाया और दो को चरणों में। सुग्रीव की गोद में प्रभु का सिर है। विभीषण कान के पास बैठे हैं। प्रभु का दाहिना पैर अंगद की गोद में है, दूसरा हनुमानजी की गोद में।

बड़भागी अंगद हनुमाना। चरन कमल चापत बिधि नाना।। (6/11/7)

यह पदों का बटवारा है। श्रीरामजी ने लंका का राजपद विभीषण को दिया, किष्किन्धा का राज्य सुग्रीव को, पर अंगद–हनुमान तो केवल प्रभु का ही पद (पैर) ही चाहते हैं।

प्रभु जब अंगद को अयोध्या से विदा करने लगे, तब भगवान ने अपने गले की माला अंगद के गले में पहना दी। प्रभु ने सोचा होगा कि यदि सुग्रीव अंगद के साथ कभी अनुचित व्यवहार करने की सोचेगा तो वह उनके गले की मेरी माला देखकर सारी बातें याद करके शान्त हो जाएगा और मेरा परमप्रिय जानकर अंगद से प्रेम करेगा, क्योंकि इस माला का चमत्कार सुग्रीव जानता है। अंगद मेरा भक्त है, सुग्रीव तो सखा है।

जब भगवान कृपा करते हैं, तब व्यक्ति को वे उसे उनको समझने का ज्ञान देते हैं। ज्ञान होने पर विश्वास

होता है और विश्वास होने पर प्रीति होती है और प्रीति होने पर ही भगवान की भक्ति में दृढ़ता आती है। यह क्रम है साधना का। इस संदर्भ में श्रीरामजी की कृपा का ही महत्व है, यथा –

राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई।।
जानें बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती।।
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई।। (7/89/6–8)
सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।। (2/127/9)

अंगद को भगवान की महिमा पर सच्चा विश्वास था। संत की वाणी पर सच्चा विश्वास था, उन्होंने जो ख्याति प्राप्त की वह उनके विश्वास की विजय थी। यह उनकी उत्कृष्ट भक्तिनिष्ठा की विजय थी।

कर्तव्य पालन

(1) मनुष्य अपनी वास्तविकता की ओर ख्याल नहीं करता कि मैं किस लिए आया हूँ, इसे जाने बिना कर्तव्यपरायणता कैसे होगी? पहले उद्देश्य बनता है, पीछे यात्रा शुरू होती है। मनुष्य शरीर परमात्मा प्राप्ति के लिए, सदा के लिए सुखी होने के लिए मिला है।

(2) कर्मचारी चाहते हैं कि पैसे ज्यादा मिलें, काम कम करना पड़े। मालिक चाहते हैं कि काम ज्यादा हो, पैसे कम देने पड़ें। ऐसी स्थिति में आपस में प्रेम कैसे होगा? अपने कर्तव्य का पालन करने के द्वारा दुनिया का बड़ा हित होता है। हरेक आदमी अपने–अपने कर्तव्य का पालन करे। दूसरे के कर्तव्य को देखना अकर्तव्य है। दूसरे का कर्तव्य देखने के लिए आपको किसी ने अधिकार दिया है क्या?

(3) जब सब 'तू कर, तू कर' कहते हैं, तब काम अधिक हो जाता है। फिर नौकर रखते हैं। विचार करें, नौकर भी अपने घर के काम के लिए नौकर रखता है क्या? वह आपके घर का काम भी करता है, अपने घर का भी। आप अपने घर का काम भी नहीं कर सकते हैं। फिर बड़ा कौन हुआ?

(4) बेकारी नहीं बढ़ी है, बेकार आदमी बढ़े हैं।

(5) कोई पूछे कि दुनिया कैसी है? तो इसका उत्तर है–आप जैसी! भले आदमी के लिए दुनिया भली है, बुरे आदमी के लिए बुरी।

राम का स्मरण

प्रस्तुतिः श्री राम किंकर सिंह, सी–55, सैक्टर–47, नोएडा, फोनः 9899460077

राम के नाम में मुक्ति का स्रोत है, राम का नाम जपना निरा मोक्ष है।
राम स्व नाम को सार्थक कर सके, राम का नाम अपने में सर्वोच्च है।

राम की शक्ति में वृद्धि हर ओर है, राम की भक्ति में सिद्धि का जोर है।
राम की कीर्ति अनुपम अमित रूप में, राम की नीति कल्याण का छोर है।

राम का राज्य उत्कृष्ट आदर्श है, राम का कार्य उत्तम अनासक्त है।
राम भ्राता, तनय, मित्र, सुत हैं अलग, राम का भाव अपनत्व से व्यक्त है।

राम में चित्त लगना, शुद्धता की परख, राम में रम्यता, मुग्धता की चरम।
राम से भी बड़ा नाम है राम का, राम से मित्रता, रुग्णता ही खतम।

राम का वन–गमन और वन में भ्रमण, राम का बाण–धनु, दुष्टता का हनन।
राम का स्मरण, रिषि मुनि का हवन, राम का संचरण, शिष्टता का मनन।

राम का नाम सबका खजाना बना, राम का लाभ सबका बहाना बना।
राम ही राम जीवन के हर क्षेत्र में, राम सुख राशि हैं, राम सुख धाम हैं।

राम का ध्यान रखना परम धाम है, राम का नाम भजना सरल काम है।
राम से हो विमुख, जीव सुख से परे, राम सुख राशि हैं, राम सुख धाम हैं।

राम एकात्म हैं, राम साकार हैं राम ही आत्मा, राम आधार हैं।
राम निर्गुण–सगुण बुद्धि से हैं परे, राम सर्वांग सुन्दर गुणागार हैं।

राम सुंदर भी हैं, राम कोमल भी हैं, राम उद्भव भी हैं, राम ओझल भी हैं।
राम महिमा से भरपूर आनन्दघन, राम संयम भी हैं, राम पोषक भी हैं।

राम तारक भी हैं, राम धारक भी हैं, राम नर रूप धारी नारायण भी हैं।
राम का नाम भज भव सागर तरे, राम कौशल से नावों के चालक भी हैं।

1) केवल बदलने का नाम संसार है। संग्रह और सुख की इच्छा करने से अनित्य संसार भी नित्य दीखने लगता है। वस्तु मिलने पर चित्त में प्रसन्नता होती है–यह सुख भोग है। जड़ता के सुख की आशक्ति बाँधने वाली है।

(2) हम शरीर को और उसकी अवस्थाओं को जानते हैं, अतः हम शरीर तथा अवस्था नहीं हैं। जब जानने में फर्क नहीं पड़ता तो फिर जानने वाले में कैसे फर्क पड़ेगा?

कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें

पं0 रामनरेश तिवारी 'पिण्डीवासा', प्रयागराज—211003 फोनः 09415443173

गोस्वामी तुलसीदासकृत श्रीरामचरितमानस स्वयं में एक वेद है। जिस प्रकार से वेदों का प्राकट्य हुआ है, उसी प्रकार भगवान शिव के हृदय में मानस का अवतरण हुआ है। गोस्वामीजी ने लिखा है —

रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा।। (1/35/11)

उन्होंने स्वयं को इसकी रचना एवं कवि होने से अलग कर लिया है। वे इसकी रचना का श्रेय भगवान को देते हैं।

कबि न होउँ नहिं चतुर कहावउँ। मति अनुरूप राम गुन गावउँ।। (1/12/9)
जस कछु बुधि बिबेक बल मोरें। तस कहिहउँ हियँ हरि के प्रेरें।। (1/31/3)
संभु प्रसाद सुमति हियँ हुलसी। रामचरितमानस कबि तुलसी।। (1/36/1)
भनिति मोरि सिव कृपाँ बिभाती। ससि समाज मिलि मनहुँ सुराती।। (1/15/9)

सम्पूर्ण श्रीरामचरितमानस राममय है। कुछ अपवादों को छोड़कर सभी चौपाइयों में 'र' और 'म' दो अक्षर आए हैं। इन दो वर्णों का महत्व बालकाण्ड के दोहा क्रमांक 18 से 27 तक विस्तार से वर्णित है। इसलिए गोस्वामीजी ने लिखा है —

एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।। (1/10/1)

मानस की रचना का सम्पूर्ण श्रेय भगवान राम और शिव को समर्पित कर गोस्वामीजी केवल भाषाबद्ध करने की बात अपने लिए लिखते हैं। विश्व का कौन—सा ऐसा चिंतन है जो मानस में न हो? भगवान शिव और श्रीराम में तो कोई भेद ही नहीं है। परस्पर एक ही भाव के प्रतिबिम्ब हैं। स्वयं भगवान श्रीराम कहते हैं कि मुझे शिवजी के समान दूसरा कोई प्रिय नहीं है। यही नहीं वे यहाँ तक कह देते हैं कि शिवजी से द्रोह करने वाला यदि कोई मेरा भक्त भी हो, तो भी वह मुझे स्वप्न में भी अच्छा नहीं लगता है।

कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें। असि परतीति तजहु जनि भोरें।। (1/138/6)
सिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा।। (6/2/7)

उधर जब भगवान शिव द्वारा श्रीराम के लिए प्रणाम निवेदित करने पर सती को सन्देह होता है और वे मन ही मन सोचती हैं —

संकरु जगतबंद्य जगदीसा। सुर नर मुनि सब नावत सीसा।।
तिन्ह नृपसुतहि कीन्ह परनामा। कहि सच्चिदानंद परधामा ।। (1/50/6—7)

तब स्वयं भगवान शंकर सती को बताते हैं —

सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा।। (1/51/8)

जिन्हें मैंने प्रणाम किया है, वे मेरे इष्टदेव हैं, जिनका चिंतन ऋषि—मुनि तथा धीर पुरुष किया करते हैं। इस कथन से स्पष्ट है कि राम और शिव 'एक' ही हैं। उनमें कोई भेद नहीं है।

ऋषि वेदव्यास द्वारा रचित अठारह पुराणों में ईश्वर के विविध स्वरूपों की कथाओं का वर्णन है—जैसे शिव पुराण में शिवजी को ही सर्वोच्च माना गया, विष्णु पुराण में भगवान विष्णु को, देवी पुराण में देवी को आदि। एक ही रचनाकार ने अपनी विभिन्न रचनाओं में एक ही परम शक्ति को दर्शाया है, किंतु कुछ कट्टर पंथियों ने इस रहस्य को न समझ कर अपने इष्ट को सर्वोच्च मानकर दूसरे के इष्ट को नीचा दिखाने का प्रयास किया। इसी कारण शैव और वैष्णव दो मत हो गए थे, जो एक—दूसरे के घोर विरोधी थे। गोस्वामी तुलसीदासजी ने समाज के इन नासमझ लोगों के लिए श्रीरामचरितमानस में शास्त्रसंमत उस एक ही परम शक्ति के स्वरूप 'राम और शिव' की एकरूपता का ही वर्णन नहीं किया, बल्कि एक—दूसरे का आराध्य बताया अर्थात् शिवजी 'राम—राम' जपते हैं, तो दूसरी ओर श्रीरामजी के इष्टदेव शिवजी हैं। विभिन्न प्रसंगों में इसका निरूपण श्रीरामचरितमानस में किया गया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं:—

(1) 'मानस' के वंदना प्रकरण में शिवजी की वंदना करते समय गोस्वामीजी लिखते हैं, **''सेवक स्वामि सखा सिय पी के।'' (1/15/4)** अर्थात् शिवजी के श्रीरामजी के साथ सेवक, सखा और स्वामी तीनों प्रकार के संबंध हैं, इसकी पुष्टि निम्नलिखित दोहे से होती है।

अब बिनती मम सुनहु सिव जौं मो पर निज नेहु।
जाइ बिबाहहु सैलजहि यह मोहि मागें देहु।। (1/76)

श्रीरामजी पहले विनती करते हैं, यह सेवक का भाव है, फिर कहते हैं कि तुम यदि मुझसे प्रेम करते हो तो, यह मित्र का भाव है और फिर आदेश देते हैं ''जाइ बिबाहहु सैलजहि'', यह स्वामी का भाव है। स्वामी भाव को वे निम्नांकित चौपाई में भी दर्शाते हैं, यथा –''अब उर राखहु जो हम कहेऊ'' अर्थात् श्रीरामजी पुनः स्वामी के रूप में स्मरण कराते हैं कि जो मैंने कहा याद रखना।

(2) श्रीरामजी नारदजी से कहते हैं कि हे मुनि! जिस पर भगवान शंकर कृपा नहीं करते, वे मेरी भक्ति नहीं पा सकते हैं –

जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी। सो न पाव मुनि भगति हमारी।। (1/138/7)

(3) श्रीराम कथा सुनाने से पूर्व ऋषि याज्ञवल्क्यजी ने मुनि भरद्वाजजी को शिव चरित्र सुनाया, जिसे सुनकर वे भाव विभोर हो गए, तब याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि –

सिव पद कमल जिन्हहि रति नाहीं। रामहि ते सपनेहुँ न सोहाहीं।।
बिनु छल बिस्वनाथ पद नेहू। राम भगत कर लच्छन एहू।। (1/104/5–6)

(4) पार्वतीजी अपने पूर्व जन्म की कथा का स्मरण करके शिवजी से कहती हैं कि आप दिन रात 'राम–राम' जपते हैं, वे राम वही दशरथ नंदन हैं या कोई और?

तुम्ह पुनि राम राम दिन राती। सादर जपहु अनँग आराती।। (1/108/7)
रामु सो अवध नृपति सुत सोई। की अज अगुन अलखगति कोई।। (1/108/8)

इसके उत्तर में शिवजी पार्वतीजी को बहु प्रकार समझाते हुए उनकी शंका का निवारण करके स्पश्ट रूप से कहते हैं कि जिन श्रीराम का मैं जप करता हूँ वे ही हैं मेरे आराध्य स्वामी रघुकुलमणि श्रीराम, यथा –

पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि प्रगट परावर नाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ कहि सिवँ नायउ माथ।। (1/116)

(5) समुद्र पर सेतु बन जाने पर श्रीरामजी ने विचार किया कि मैं अपने इष्टदेव शिव की इस सुरम्य भूमि में स्थापना करूँ। अपने विचार को मूर्तिरूप प्रदान करने के पश्चात् अपने शिव–प्रेम एवं शिव–महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं –

सिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा।। (6/2/7)
संकरप्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुँ बास।। (6/2)

(6) अयोध्यावासियों को उपदेश देते हुए शिवजी की महिमा का बखान श्रीरामजी इस प्रकार से करते हैं –

औरउ एक गुपुत मत सबहि कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि।। (7/45)

(7) गरुड़जी को अपने पूर्व जन्म का वृत्तांत सुनाते हुए काकभुशुंडिजी कहते हैं कि मेरे गुरु मुझे उपदेश देते थे कि–

रामहि भजहिं तात सिव धाता। नर पावँर कै केतिक बाता।।
सिव सेवा कर फल सुत सोई। अबिरल भगति राम पद होई।। (7/106/2)

गोस्वामीजी के इन प्रसंगों को समझते हुए अब शैव और वैष्णव समुदाय का आपसी वैमनस्य लगभग समाप्त हो गया है।

इस प्रकार श्रीरामजी एवं शिवजी में कोई भेद नहीं मानना चाहिए, पर जिसका जो इष्ट हो उसी में मन लगाए, दूसरे के इष्ट को भी अपने ही इष्ट का ही स्वरूप समझ कर आदर करें। इस संदर्भ में एक अनन्य शिव भक्त की निम्नांकित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं –

राम कहो राम कहो तुम प्रानियों, राम नाम में न कभी कष्ट मानियों।
राम शिव के, शिव हैं राम के, राम शिव एक ये सत्य जानियों।।

अकेले हम बूँद हैं, मिल जाएँ तो सागर हैं,
अकेले हम धागा हैं, मिल जाएँ तो चादर हैं,
अकेले हम कागज हैं, मिल जाएँ तो पुस्तक हैं,
मिल जुलकर रहने में ही जीवन का आनन्द है।

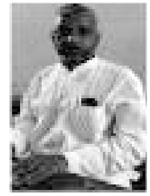

अति प्रचंड रघुपति कै माया

श्री राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी (उ.प्र.), फोनः 9451131195

श्रीरामचरितमानस में नारद–मोह के संदर्भ में भगवान की माया की प्रचंड शक्ति का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं –

अति प्रचंड रघुपति कै माया। जेहि न मोह अस को जग जाया।। (1/128/8)

भगवान की माया बड़ी प्रबल और प्रचंड है। बड़े–बड़े देवता, ऋषि, मुनि व मनुष्य इसके वश में हो जाते हैं। **''माया''** दो अक्षरों का संयोग है **'मा'** और **''या''**। **'मा'** का अर्थ होता है– 'नहीं', अर्थात् जो जैसा दिखाई देता है वैसा है नहीं और 'या' का अर्थ है– जो माया नश्वर है, वह अविद्या या अज्ञान है। इसके दो नाम होते हैं– विद्या और अविद्या। माया बंधनकारिणी और अति प्रभावकारिणी है। यह मनुष्य के मन को विषयों में आसक्त करके नचाती है। सुर, नर, मुनि, ज्ञानी सभी इसके प्रभाव से बच नहीं पाते हैं। प्रभु की प्राप्ति में माया बड़ी–बड़ी बाधाएँ खड़ी करती रहती है। श्री मद्भागवत् के एकादश स्कंध के तृतीय अध्याय में राजा निमि को समझाते हुए योगी वर अन्तरिक्षजी ने कहा कि राजन भगवान की माया स्वरूपतः अनिर्वचनीया है। आदि पुरुष परमात्मा जिस शक्ति से संपूर्ण भूतों के कारण बनते हैं और उनके विषय भोग तथा मोक्ष की सिद्धि के लिए अथवा अपने उपासकों की उत्कृष्ट सिद्धि के लिए स्वनिर्मित पंचभूतों के द्वारा नाना प्रकार के देव–मनुष्य आदि शरीरों की सृष्टि करते हैं, उसी को माया कहते हैं। देहाभिमानी जीव अन्तर्यामी के द्वारा प्रकाशित इन्द्रियों के द्वारा विषयों का भोग करता है और पंचभूतों के द्वारा निर्मित शरीर को ही अपना स्वरूप मान कर उसी में आसक्त हो जाता है, यह माया का ही प्रभाव है। अब वह कर्मेन्द्रियों से सकाम कर्म करता है और उनके अनुसार शुभ कर्म का फल सुख और अशुभ कर्म का फल दुख भोगता है। इस प्रकार यह जीव अपने कर्मानुसार उनके फलों को प्राप्त होता है और प्रलय पर्यन्त विवश होकर जन्म के बाद मृत्यु और मृत्यु के बाद जन्म को प्राप्त होता रहता है, यही भगवान की माया है। जब पंचभूतों के प्रलय का समय आता है तब अनादि और अनंत काल स्थूल तथा सूक्ष्म द्रव्य एवं गुणरूप इस समस्त व्यक्त सृष्टि को अव्यक्त की ओर उसके मूल कारण की ओर खींचता है, यह माया है।

एषा माया भगवतः सर्गस्थित्यन्तकारिणी।
त्रिवर्णा वर्णितास्माभिः किं भूयः श्रोतुमिच्छसि।। (श्रीमद्भागवत 11/3/16)

यह सृष्टि, स्थिति और संहार करने वाली त्रिगुण सत्, रज, तम गुणमयी माया है। इसी सिद्धांत को श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार वर्णन किया गया है–

आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी।।
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा।। (7/44/4,5)

प्रभु श्रीरामजी अयोध्यावासियों से माया के प्रभाव का वर्णन करते हुए कहते हैं कि यह माया विनाशी है और जीव अविनाशी है। अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज चार प्रकार के जीवों में माया के प्रभाव से जीवात्मा चौरासी लाख योनियों में चक्कर लगाता रहता है और माया की प्रेरणा से ही वह काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से घिरा होकर भटकता रहता है। माया के संदर्भ में संत कबीर कहते हैं–

माया महा ठगनि हम जानी।
तिरगुन फांस लिए कर डोले बोले मधुरे बानी।।
केसव के कमला पै बैठी शिव के भवन भवानी।
पंडा के मूरत पै बैठी तीरथ में भई पानी।।
योगी के योगन पै बैठी, राजा के घर रानी।
काहू के हीरा पै बैठी, काहू के कौड़ी कानी।।
भगतन की भगतिन पै बैठी, ब्रह्मा के ब्रह्माणी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, यह सब अकथ कहानी।।

भगवान की योगमाया (विद्या माया) अत्यंत प्रभावशाली वैष्णवी ऐश्वर्यशक्ति है, जिसके वश में संपूर्ण जगत

रहता है। उसी योगमाया को अपने वश में करके भगवान लीला के लिए दिव्य गुणों के साथ मनुष्य जन्म धारण करते हैं और साधारण मनुष्य जैसे ही प्रतीत होते हैं।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण का कथन है– 'मैं अजन्मा और अविनाशी तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया से प्रकट होता हूँ।'

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया।। (4/6)

श्रीमद्भागवत महापुराण के अनुसार सृष्टि के आरंभ में परमब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण ने माया को अपने पास बुलाकर कहा कि मैंने संसार की रचना कर ली है, अब इस संसार को चलाना तेरा काम है। माया ने कहा– 'भगवन्! मुझे स्वीकार है, किंतु एक प्रार्थना है।' भगवान ने कहा–'कहो क्या प्रार्थना है?'

माया ने कहा–'प्रभु! इस संसार को चलाने के लिए जिन आकर्षणों की आवश्यकता है, वह तो सब–के–सब आपके पास हैं, उनमें से एक–आध मुझे भी दें, ताकि मैं जीवों को अपने जाल में फंसा कर रख सकूँ।'

भगवान ने कहा– 'बोलो क्या चाहिए?' माया ने कहा–'प्रभु! आप आनंद के सागर (जो आनंद सिंधु सुखरासी। **सीकर तें त्रैलोक सुपासी।। मानस 1/197/5)** हैं। मेरे पास दुःख के सिवाय क्या है? कृपया आप उस आनंद के सागर की एक बूँद मुझे भी दे दें, ताकि मैं उस एक बूँद का रस संसार के इन समस्त जीवों में बांटकर उन्हें अपने वश में रख सकूँ, अन्यथा वे मेरी बात नहीं मानेंगे और सीधे आपके दरबार में पहुँच जाएँगे।' भगवान ने अपने आनंद–सागर की एक बूँद माया को देकर कहा–'जा, इस बूँद को पाँच भागों में विभक्त करके मनुष्यों में बांट देना।' प्रसन्न होकर माया ने भगवान से कहा–'प्रभु! आप निश्चिंत रहें, आपके द्वारा सौंपे गए कार्य में कोई विघ्न नहीं आने दूँगी।'

माया ने आनंद रूपी सागर की बूँद को पाँच भागों–शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध में विभक्त कर संसार में फैला दिया। इस प्रकार से संसार में सुख और आनंद प्राप्ति का इन पाँच स्थानों के अलावा और कोई स्थान नहीं है। ये पाँच गुण–रूप, रस, गंध, शब्द और स्पर्श क्रमशः हमें अग्नि, जल, पृथ्वी, आकाश और वायु से प्राप्त होते हैं। माया के पाँच स्थान हैं पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, इन्हीं पाँच जड़ तत्त्वों से इस शरीर की रचना हुई है। इन्हीं पाँच तत्त्वों को ग्रहण करने के लिए भगवान ने हमें आँख, नाक, कान, जिह्वा और त्वचा–ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ दी हैं। नासिका के द्वारा हम पृथ्वी के गंधरूपी गुण को, जिह्वा के द्वारा जल के रसरूपी गुण को, कानों के द्वारा आकाश के माध्यम से शब्दरूपी गुण को और आँखों के द्वारा अग्नि के रूप गुण अर्थात् सुन्दरता को और त्वचा द्वारा वायु के स्पर्श गुण को ग्रहण करते हैं।

कृष्णावतार में एक दिन दुर्वासा ऋषि परमात्मा श्रीकृष्ण का दर्शन करने के लिए व्रज में आए। उन्होंने महावन के निकट कालिन्दी के तट पर श्रीकृष्ण को गोपसखाओं के साथ बालू में लोटते और आपस में मल्लयुद्ध करते हुए देखा–**'धूलिधूसर सर्वांगं वक्रकेशं दिगम्बरम्।'**

श्रीकृष्ण का सारा शरीर धूल से भरा था, बाल टेढ़े–मेढ़े बिखरे हुए, नंग–धड़ंग– शरीर पर कोई वस्त्र नहीं और वे गोप बालकों के पीछे दौड़े चले जा रहे थे। परब्रह्म श्रीकृष्ण इस रूप में! ऋषि आए थे परमात्मा के दर्शन की अभिलाषा से, परंतु ब्रह्म को जिस वेश में देखा, वे आश्चर्य में पड़ गए। परब्रह्म के जो लक्षण उनके हृदय में बैठे हुए थे, वे तो श्रीकृष्ण से मिलते नहीं थे। 'क्या ये ईश्वर हैं? भगवान हैं तो फिर साधारण बालक की तरह भूमि पर क्यों लोट रहे हैं? नहीं, ये परमात्मा श्रीकृष्ण नहीं हैं। ये तो नन्द बाबा के पुत्र मात्र हैं, ये ईश्वर नहीं हो सकते।

दुर्वासा ऋषि को भगवान श्रीकृष्ण का वैभव प्रकट कराने के लिए योगमाया प्रकट हुई। योगमाया सारे खेल का आयोजन करती है। सबके सामने भगवान योगमाया से ढके रहते हैं, परंतु प्रेमी भक्तों के सामने भगवान योगमाया से अनावृत (प्रकट रूप में) रहते हैं। श्रीकृष्ण नन्ही–नन्ही भुजाओं को उठाए हुए, दौड़ते हुए ऋषि की गोद में आकर बैठ गए और जोर से हंसने लगे। खिलखिला कर हँसते श्रीकृष्ण के मुख में भवास के साथ योगमाया दुर्वासा ऋषि को खींच लेती है और होंठों के कपाट बंद कर देती है। अब योगमाया ने दुर्वासा ऋषि को भगवान का वैभव दिखाना शुरू किया। भगवान के मुख में दुर्वासा ऋषि ने सातों लोकों का, पाताल सहित सारे ब्रह्माण्ड का, प्रलय का और अंत में

गोलोक का दर्शन किया, जहाँ दिव्य कमल पर साक्षात् गोलोकबिहारी श्रीराधाकृष्ण बैठे हुए थे। गोलोकबिहारी श्रीकृष्ण दुर्वासा ऋषि को देखकर हँसने लगे। उनका मुँह खुला और श्वास के साथ ऋषि बाहर आ गए। ऋषि ने आँख खोलकर देखा तो वे गोलोक में नहीं व्रज में उसी कालिन्दी तट पर खड़े हुए हैं, जहाँ श्रीकृष्ण सखाओं के साथ वैसे ही खेल रहे हैं और वैसे ही हँस रहे हैं।

दुर्वासा ऋषि का सारा संशय दूर हो गया और वे समझ गए कि श्रीकृष्ण ही परब्रह्म परमात्मा हैं। अश्रुपूरित नेत्रों से वे भूमि पर लोट गए और वहाँ की धूल उठा–उठा कर अपने ऊपर डालनी शुरू कर दी। दुर्वासा ऋषि ने 'नन्दनन्दन स्तोत्र' के द्वारा भगवान की स्तुति की और 'कृष्ण–कृष्ण' रटते हुए बदरिकाश्रम की ओर चले गए, ताकि एकान्त में प्यारे श्रीकृष्ण के ध्यान में निमग्न रह सकें। योगमाया के संदर्भ में श्रीकृष्ण अर्जुन से यह कहते हैं–

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।। (गीता 7/25)

अर्थात् अपनी योगमाया से छिपा हुआ मैं सबके सामने प्रत्यक्ष नहीं होता हूँ, इसलिए यह अज्ञानी मनुष्य मुझ जन्मरहित, अविनाशी परमात्मा को तत्त्व से नहीं जानता है, अर्थात् मुझे जन्मने–मरने वाला मानता है।

भगवान जब मनुष्य के रूप में अवतरित होते हैं, तब जैसे बहुरूपिया किसी दूसरे स्वांग में लोगों के सामने आता है, उस समय अपना असली रूप छिपा लेता है, वैसे ही भगवान अपनी योगमाया को चारों ओर फैलाकर स्वयं उसमें छिपे रहते हैं। साधारण मनुष्यों की दृष्टि उस माया के परदे के पार नहीं जा सकती, इसलिए अधिकांश लोग उन्हें अपने जैसा ही साधारण मनुष्य मानते हैं। जो भगवान के प्रेमी भक्त होते हैं, जिन्हें भगवान अपने स्वरूप, गुण, लीला का परिचय देना चाहते हैं, केवल उन्हीं के सामने वे प्रत्यक्ष होते हैं।

जो मनुष्य भगवान से विमुख रहते हैं, उनके सामने भगवान अपनी योगमाया में छिपे रहते हैं और साधारण मनुष्य जैसे ही दीखते हैं। मनुष्य ज्यों–ज्यों भगवान के सम्मुख होता जाता है, त्यों–त्यों भगवान उसके सम्मुख प्रकट होते जाते हैं। इसी योगमाया का आश्रय लेकर भगवान विचित्र–विचित्र लीलाएँ करते हैं। योगमाया का आश्रय लेकर ही भगवान रासलीला करते हैं।

भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः।
वीक्ष्य रन्तुं मनष्चक्रे योगमायामुपाश्रितः।। (श्रीमद्भागवत 10/29/1)

भगवान के दर्शन तभी होते हैं, जब भगवान अपनी योगमाया का पर्दा हटा देते हैं। अपना अज्ञान मिटाना तो जीव के हाथ की बात है, पर योगमाया को दूर करना उसके वश में नहीं है। जीव भगवान के शरण हो जाये तो भगवान अपनी शक्ति से योगमाया का पर्दा हटाकर दर्शन दे सकते हैं।

भगवान श्रीराम माया के विषय में श्री लखनलाल से बड़े सरल शब्दों में समझाते हुए कहते हैं कि मैं और मेरा और तू और तेरा ही तो माया है, जिसने सभी जीवों को अपने वश में कर रखा है। इन्द्रियों के विषय और जहाँ तक मन जाता है, वह सब माया के अंतर्गत ही है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

मैं अरु मोर तोर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया।
गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।। (3/15/2,3)

भगवान की माया का प्रभाव बहुत व्यापक है और यह अत्यंत प्रभावशालिनी है। माया के अनेक रूप हैं, जैसे– सात्विक माया, राजस और तामसिक माया गीता में वर्णन है–

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्।। (7/13)

अर्थात् गुणों के कार्यरूप सात्विक, राजस और तामस इन तीनों प्रकार के भावों से अर्थात् राग द्वेषादि विकारों से और संपूर्ण विषयों से संसार का प्राणिसमुदाय मोहित हो रहा है, इसलिए इन तीनों गुणों से परे मुझ अविनाशी को नहीं जानता है।

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।

मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। (7/14)

अर्थात् माया बड़ी दुस्तर है, परन्तु जो केवल मुझको (परमात्मा को) ही निरंतर भजते हैं, वे इस माया को उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसार सागर से तर जाते हैं।

नीलगिरि पर्वत पर श्रीराम कथा सुनाते हुए काकभुशुण्डिजी गरुड़जी से कह रहे हैं कि यह जीव ईश्वर का अंश है, इसलिए यह अविनाशी, चेतन और निर्मल स्वभाव का है तथा सुख की राशि है, लेकिन माया के वशीभूत होने के कारण तोते और बंदर की तरह अपने आप ही बँधा हुआ है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

ईश्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।।
सो मायाबस भयउ गोसाईं। बँध्यो कीर मरकट की नाईं।। (7/117/2,3)

माया के संदर्भ में निम्नांकित दृष्टांत उल्लेखनीय है –

एक नदी के किनारे एक महात्मा रहते थे। उनके पास दूर–दूर से लोग अपनी समस्याओं का समाधान पाने आते थे। एक बार एक व्यक्ति उनके पास आया और बोला–''महाराज! मैं लंबे समय से ईश्वर की भक्ति कर रहा हूँ, फिर भी मुझे ईश्वर के दर्शन नहीं होते। कृपया मुझे उनके दर्शन कराइए।

महात्मा बोले–''तुम्हें इस संसार में कौन–कौनसी चीजें सबसे अधिक प्रिय हैं?''

व्यक्ति बोला–''महाराज! मुझे इस संसार में सबसे अधिक प्रिय अपना परिवार है और उसके बाद धन–दौलत।''

महात्मा ने पूछा–''क्या इस समय भी तुम्हारे पास कोई प्रिय वस्तु है?''

व्यक्ति बोला–''मेरे पास एक सोने का सिक्का ही प्रिय वस्तु है।''

महात्मा ने एक कागज पर कुछ लिखकर दिया और उसे पढ़ने को कहा। कागज देखकर व्यक्ति बोला–''महाराज! इस पर तो ईश्वर लिखा है।''

महात्मा ने कहा–''अब अपना सोने का सिक्का इस कागज के ऊपर लिखे 'ईश्वर' शब्द पर रख दो।'' व्यक्ति ने ऐसा ही किया। फिर महात्मा बोले–''अब तुम्हें क्या दिखाई दे रहा है?'' वह बोला–''इस समय तो मुझे इस कागज पर केवल सोने का सिक्का रखा दिखाई दे रहा है।''

महात्मा ने कहा–''ईश्वर का भी यही हाल है। वह हमारे अंदर ही है, लेकिन मोह–माया के कारण हम उसके दर्शन नहीं कर पाते। जब हम उसे देखने की कोशिश करते हैं तो मोह–माया आगे आ जाती है। धन–संपत्ति, घर–परिवार के सामने ईश्वर को देखने का समय ही नहीं होता। ऐसे में ईश्वर के दर्शन कैसे होंगे?'' महात्मा की बातें सुनकर व्यक्ति समझ गया कि उसे मोह–माया से निकल कर ही भगवान के दर्शन हो सकते हैं।

माया का परिवार बड़ा विशाल है। मोह, काम, क्रोध, मद, मत्सर, चिंता आदि सभी माया के परिवार में ही आते हैं। इनकी करनी भी बड़ी विचित्र है। मोह ने किसको अंधा नहीं किया। संसार में काम ने किसको नहीं नचाया। तृष्णा ने किसको मतवाला नहीं किया। क्रोध ने किसके हृदय को नहीं जलाया। तपस्वी, ज्ञानी, कवि, शूरवीर, विद्वान आदि सभी की इस लोभ ने बहुत विडम्बना की है। धन के मद ने सबको टेढ़ा व प्रभुत्व ने सबको बहरा बना दिया है। मृगनयनी के नयन बाण किसे नहीं लगते। मान और मद ने किसी को भी नहीं छोड़ा। डाह ने किसको कलंकित नहीं किया। चिंता सर्पणी ने किसको नहीं डसा है। इस संसार में ऐसा कौन है, जिसे माया न व्यापी हो। मनोरथ कीड़ा है और शरीर लकड़ी है। यहाँ कौन भाग्यवान है जिसके शरीर में यह कीड़ा न लगा हो। धन, पुत्र और लोकेष्णा ने किसकी बुद्धि को मलिन नहीं किया है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा।।
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं।। (7/71/7,8)

काकभुशुण्डिजी गरुड़जी से कहते हैं कि माया का परिवार बड़ा बलवान है। इसका वर्णन कौन कर सकता है। इससे तो भगवान भोलेनाथ व विधाता भी डरते हैं, फिर अन्य और की तो गिनती ही क्या है। माया की सेना भी बड़ी बलवती और प्रचंड है, जो संपूर्ण संसार में छाई हुई है। काम, क्रोध, लोभ आदि उसके सेनानायक हैं और दम्भ, कपट,

पाखंड आदि उसके योद्धा हैं।

ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाखंड।। (7/71क)

असत् को सत् समझना ही माया है। जब नाव चलती है तो उस पर बैठा हुआ व्यक्ति संसार को चलता हुआ देखता है और मोहवश अपने को अचल समझता है। बालक चक्राकार घूमते हैं, तो कहते हैं, सब कुछ घूम रहा है और भ्रम में अन्य को झूठा बताते हैं।

नौकारूढ़ चलत जग देखा। अचल मोह बस आपुहि लेखा।।
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी। कहहिं परस्पर मिथ्याबादी।। (7/73/5,6)

हर प्राणी की न माया मरती है, न मन मरता है, यह शरीर ही बार–बार मरता है, अर्थात् अनेक योनियों में भटकने के बावजूद प्राणी की आशा और तृष्णा नहीं मरती, वह हमेशा बनी ही रहती है।

इस माया से बचने का एक ही उपाय है–भगवद्भक्ति। भक्ति भगवान को अतिशय प्रिय है। इससे माया डरती है। जिसके हृदय में प्रभु की भक्ति निवास करती है, उसको देखकर माया सकुचा जाती है। भगवान की भक्ति ही माया से मुक्ति का उपाय है। इस रहस्य को जो भी प्राणी भगवान की कृपा से जान जाता है, वह फिर सपने में भी मोह में नहीं फँसता है।

यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानइ कोइ।
जो जानइ रघुपति कृपाँ सपनेहुँ मोह न होइ।। (7/116क)

विषयों में अनासक्त और भगवान की भक्ति माया से मुक्ति का सरल और प्रबल साधन है। जो विषयों में आसक्त नहीं है और भगवान की भक्ति में लीन रहते हैं, वे माया के अधीन न होकर मुक्त हो जाते हैं।

हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं।
भजिअ राम तजि काम सब अस बिचारि मन माहिं।। (7/104क)

श्रीहरि की माया के रचे हुए दोष–गुण श्रीहरि के भजन बिना नहीं जाते, मन में ऐसा विचार कर सब कामनाओं को छोड़कर निष्काम भाव से श्रीरामजी का भजन करना चाहिए।

भगवान की प्रचंड माया से छूटकर भवसागर पार जाने का यही एक उपाय है।

मेरी मान्यता में गोस्वामी तुलसीदासजी एक स्मृतिकार 'ऋषि' थे। उनकी रचनाओं का प्रमाण माना जाता है। उनकी कविता में बड़ी विलक्षणता है। भगवान चरित्र और भक्त की वाणी होने से रामायण बहुत विलक्षण ग्रन्थ है।यह भगवान की कृपा से निकली हुई वाणी है। भविष्य में संस्कृत जानने वाले बहुत कम रह जाएँगे, इसलिए भगवान शंकर ने हिन्दी में रामायण (श्रीरामचरितमानस) की रचना करने की आज्ञा दी।

गीता और रामायण दोनों ग्रंथ मुझे बहुत प्रिय लगते हैं। दो ही मुख्य भाषाएँ हैं–संस्कृत और हिन्दी। दो की ही वाणी मुख्य है–भगवान की वाणी और भक्त की वाणी। श्रीरामचरितमानस की रचना मुझे बड़ी विलक्षण लगती है। इसे सुनने में मेरी रुचि रहती है।

गोस्वामीजी ने अयोध्याकाण्ड सुन्दरकाण्ड से पहले लिखा है। अयोध्याकाण्ड की रचना में वे नियम से चले हैं, क्योंकि भरत जी भी नियम (मर्यादा) से चलते हैं। वे सभी काण्ड दोहे से शुरू करते हैं, पर सुन्दरकाण्ड चौपाई से शुरू करते हैं, क्योंकि दोहा विश्राम होता है। हनुमानजी विश्राम नहीं करते–'राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम'। इसलिए गोस्वामीजी ने सोचा कि जब हनुमानजी विश्राम नहीं करते तो मैं विश्राम क्यों करूँ?
रामायण गृहस्थों के लिए विशेष काम की है। किसको कैसा आचरण करना चाहिए, यह शिक्षा रामायण से मिलती है। रामायण में बहुत शिक्षाएँ भरी हुई हैं। रामायण सब रीतियों से विलक्षण है।

राम ही सब कुछ

प्रस्तुतिः श्री कुमार विश्वास, पूर्व नेता (आम आदमी पार्टी)

राम सृष्टा भी हैं और सृष्टी भी हैं।
राम दृष्टा भी हैं और दृष्टी भी हैं।।1।।

राम एकान्त हैं, राम महफिल भी हैं।
राम रस्ता भी हैं, राम मंजिल भी हैं।।2।।

राम जीवन भी हैं, राम मुक्ती भी हैं।
राम खोज भी हैं, राम युक्ती भी हैं।।3।।

राम मनहर भी हैं और मनस्वी भी हैं।
राम राजा भी हैं और तपस्वी भी हैं।।4।।

राम आराध्य हैं, राम आराधना।
राम हैं साध्य भी, राम ही साधना।।5।।

राम मानस भी हैं, राम गीता भी हैं।
राम हैं रामजी, राम सीता भी हैं।।6।।

राम हैं धारणा, राम ही धर्म भी ।
राम कारण भी हैं, राम ही कर्म भी।।7।।

राम महलों में हैं, राम जंगल में हैं।
राम हैं शोक में, राम मंगल में हैं।।8।।

राम हर युग में हैं, राम हर पल में हैं।
राम हैं आज में, राम ही कल में हैं।।9।।

राम गृहस्थ हैं, राम हैं संत भी।
राम आरंभ भी, राम ही अंत भी।।10।।

विश्व में ''राम'' नाम से जुड़े नगर

(साभारः ''राष्ट्र जागरण के स्वर'')

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम की महिमा अपार है। भारत में ही नहीं, बाहर के अनेक देशों में भी श्रीराम की पूजा–अर्चना होती है। इन्डोनेशिया, थाईलैण्ड, लाओस आदि एशियाई देशों में स्थान–स्थान पर श्रीराम के मंदिर हैं। इन देशों में रामकथा पर नृत्य नाटिकाएँ, रामलीलाएँ आयोजित होती हैं। थाईलैण्ड की राजधानी ही अयोध्या के नाम से जानी जाती है। मेक्सिको में भी एक अयोध्या है।

कहते हैं श्रीराम से भी राम का नाम बड़ा है। हालैण्ड में स्थित महर्शि वैदिक विश्वविद्यालय के शोध से पता चला है कि विश्व भर में एक हजार नगर ऐसे हैं जिनका नाम ''राम'' से ही शुरू होता है। ऐसे शहर संसार के कोने–कोने में हैं। इराक, ईरान तथा सऊदी अरब में भी राम के नाम से जुड़े शहर हैं। आठ 'रामनगर' तथा बीस 'रामपुर' सहित भारत में 62 नगरों के नाम 'राम' से प्रारंभ होते हैं। 'राम' नाम से प्रारंभ होने वाले कुछ देशों के नगरों के नाम इस प्रकार हैं –

1.	**ईरान**	–	**रामरोहद, रामसार, रामहमोज**
2.	**इराक**	–	**रामा, रामाल्लाह**
3.	**लीबिया**	–	**रामलहल**
4.	**मेक्सिको**	–	**रामोनल, रामीरेज**
5.	**अमेरिका**	–	**रामह, रामपो, रामरिटो, रामीरेज**
6.	**ब्राजील**	–	**रामोज, रामल्हों**
7.	**अलास्का**	–	**रामोज**
8.	**पेरु**	–	**रामोन**
9.	**डेन्मार्क**	–	**रामसि, रामटेन**
10.	**इंग्लैण्ड**	–	**रामटेम्पासाइड, रामसगबेट**
11.	**फ्रांस**	–	**रामह्यूबेल, सेंट रामबाउलर, सेंट रामर्बट**
12.	**जर्मनी**	–	**रामबर्ग, रामबो, रामस्टीन**
13.	**पुर्तगाल**	–	**रामलहर**
14.	**स्पेन**	–	**राम कस्ट हट, रामाल्स डेला विक्टोरिया**
15.	**स्वीडन**	–	**रामाज, रामसबर्ग**
16.	**बेल्जियम**	–	**रामसेल**
17.	**रूस**	–	**रामसुख, रामेखा, रामेस्क, रामिट, रामोगला, रामजा**
18.	**दक्षिण अफ्रीका**	–	**रामे, रामसगेट**
19.	**केन्या**	–	**रामा, रामू**
20.	**वोत्सवाना**	–	**रामोत्सवा, रामसडेम**
21.	**जिम्बावे**	–	**रामक्काडाम**
22.	**आस्ट्रेलिया**	–	**रामसे**
23.	**श्रीलंका**	–	**रामबेवा**
24.	**रवाण्डा**	–	**रामबरा**

पर पीड़ा सम नहिं अधमाई

श्रीमती कुसुम पटैरया, नोएडा, फोनः 9811201847

श्री हरि की प्रेरणा एवं श्रीहर की कृपा से रचित महाकाव्य 'श्रीरामचरितमानस' गोस्वामी तुलसीदासजी की ऐसी कृति है, जो आध्यात्मिक जगत के लिए एक अनूठी धरोहर है, तो दूसरी ओर सामाजिक दृष्टि से यह सम्पूर्ण मानवता के लिए अनुकरणीय है। पाप और पुण्य की परिभाषा जितनी सरलता से इसमें समझाई गई है, संभवतः अन्य ग्रन्थों में संदर्भ सहित उतनी सरलता से उपलब्ध नहीं होगी। राज्याभिषेक के पश्चात् जब श्रीरामजी अपने भाइयों एवं श्रीहनुमानजी के साथ एक उपवन में जाते हैं, तब सनकादिक ऋषि उनके दर्शनार्थ आते हैं। श्रीरामजी उनका स्वागत करते हैं और वे स्तुति करके चले जाते हैं। तत्पश्चात् जिज्ञासावश भरतजी संत–असंत के लक्षण पूछते हैं। रामजी विस्तार से समझाने के पश्चात् कहते हैं कि संत और असंत के संदर्भ में सारांश स्वरूप यह समझ लेना चाहिए कि संत तो पुण्यात्मा हैं और असंत पापात्मा। पुण्य तथा पाप की परिभाषा यही है कि जिसमें दूसरों की भलाई निहित हो, वही पुण्य है एवं जिसमें दूसरे को पीड़ा पहुँचे, वही पाप है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार –

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।। (7/41/1)

यही सिद्धांत श्री काकभुशुण्डि पक्षीराज गरुड़जी को उनके इस प्रश्न के उत्तर में कि धर्म क्या है और अधर्म क्या है, सुनाते हैं। वे कहते हैं कि वेद–पुराणों में वर्णित 'अहिंसा' तो परम धर्म है और दूसरे की निंदा के समान कोई पाप नहीं है, यथा –

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गरीसा।। (7/121/22)

यहाँ पर 'अहिंसा' शब्द विचारणीय है। 'अ' का सामान्य अर्थ नहीं है और हिंसा का अर्थ मन–वाणी या कर्म से किसी को कष्ट पहुँचाना है। कुछ विद्वानों ने 'अहिंसा' शब्द में प्रयुक्त 'अ' का दूसरा भाव 'आवश्यक' कहा है। इसका तात्पर्य यह है कि दुराचारी को दण्ड देने हेतु हिंसा आवश्यक हो जाती है। श्रीराम–रावण युद्ध और महाभारत में वर्णित युद्ध इसके प्रमाण हैं।

परनिंदा से एक तो स्वयं के अन्दर नकारात्मक ऊर्जा प्रवेश करती है और दूसरे जिसकी निंदा की जा रही है उसके पास तक वे नकारात्मक तरंगें पहुँच कर आपसी द्वेषभाव पैदा करती हैं, जिससे दोनों को पीड़ा पहुँचती है। दूसरे के सुधार हेतु निंदा करना आवश्यक है। इसे संत कबीर ने मानव को निर्मल करने की प्रक्रिया कहा है, यथा –

निंदक निअरे राखिए आँगन कुटी छबाय।
बिनु पानी साबुन बिना निर्मल करे सुभाय।।

इस प्रकार से किसी की निंदा करना अथवा उसके अवगुण बताना उसे निर्मल मन बनाता है, किंतु यह साहस करके उसके सम्मुख बताना आवश्यक है और यदि समझ में आ जाए कि अमुक व्यक्ति सुधरने वाला नहीं है, तो फिर चुप रहना ही उचित है, क्योंकि ऐसे लोगों के संदर्भ में श्रीरामचरितमानस में भी लिखा है –

फूलइ फरइ न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरुख हृदयँ न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सम।। (6/16ख)

इस परिप्रेक्ष्य में यह सदा ध्यान में रखना चाहिए कि पीठ–पीछे किसी की निंदा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि यह कृत्य पाप की श्रेणी में आता है। इस संदर्भ में माता कौसल्या एवं भरतजी का संवाद उल्लेखनीय है जिसमें भरतजी श्रीराम वनवास में अपनी असंलिप्तता को प्रमाणित करते हुए कहते हैं कि इस षड्यंत्र में मेरी कोई भी सहमति हो तो मुझे अमुक–अमुक पाप लग जाएँ। इस प्रकार से वे विभिन्न पापों का वर्णन करते हैं, यथा –

(1) वे कहते हैं कि हे माता! जो पाप माता–पिता और पुत्र मारने से होते हैं, जो गोशाला एवं ब्राह्मणों के नगर जलाने से होते हैं, जो पाप स्त्री एवं शिशु की हत्या करने से होते हैं और जो मित्र और राजा को जहर देने से होते हैं, वे सब पाप मुझे लगें, यदि इस काम में मेरा मत हो।

जे अघ मातु पिता सुत मारें। गाइ गोठ महिसुर पुर जारें।।
जे अघ तिय बालक बध कीन्हें। मीत महीपति माहुर दीन्हें।। (2/167/5–6)

(2) हे विधाता! कर्म, वचन और मन से होने वाले सभी पातक एवं उपपातक मुझे लगें, यदि इसमें मेरा मत हो।

जे पातक उपपातक अहहीं। करम बचन मन भव कबि कहहीं।।
ते पातक मोहि होहुँ बिधाता। जौं यहु होइ मोर मत माता।। (2/167/7–8)

(3) जो लोग श्रीहरि और श्रीशंकरजी के चरणों को छोड़कर भयानक भूत–प्रेतों को भजते हैं, हे माता! यदि इसमें मेरा मत हो तो विधाता मुझे उनकी गति दे।

जे परिहरि हरि हर चरन भजहिं भूतगन घोर।
तेहि कइ गति मोहि देउ बिधि जौं जननी मत मोर।। (2/167)

(4) जो लोग वेदों को बेचते हैं, धर्म को दुह लेते हैं, चुगलखोर हैं, दूसरों के पापों को कह देते हैं, कपटी–कुटिल–कलहप्रिय और क्रोधी हैं, वेद की निंदा करने वाले और विश्वभर के विरोधी हैं (वे सब पाप मुझे लगें यदि इसमें मेरा मत हो)।

बेचहिं बेद धरमु दुहि लेहीं। पिसुन पराय पाप कहि देहीं।।
कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी। बेद बिदूषक बिस्व बिरोधी।। (2/168/1–2)

(5) जो लोभी, लम्पट और लालचियों का आचरण करने वाले हैं, जो पराये धन और पराई स्त्री की ताक में रहते हैं, हे जननी! यदि इस काम में मेरी सम्मति हो तो मैं उनकी भयानक गति को पाऊँ।

लोभी लंपट लोलुपचारा। जे ताकहिं परधनु परदारा।।
पावौं मैं तिन्ह कै गति घोरा। जौं जननी यहु संमत मोरा।। (2/168/3–4)

(6) जिनका सत्संग में प्रेम नहीं है, जो अभागे परमार्थ के मार्ग से विमुख हैं, जो मनुष्य शरीर पाकर श्रीहरि का भजन नहीं करते, जिन्हें हरि–हर का सुयश नहीं सुहाता मुझे उनकी गति प्राप्त हो यदि इसमें मेरी सम्मति हो।

जे नहिं साधुसंग अनुरागे। परमारथ पथ बिमुख अभागे।।
जे न भजहिं हरि नरतनु पाई। जिन्हहि न हरि हर सुजस सोहाई।।(2/168/5–6)

(7) जो वेदमार्ग को छोड़कर वाम (वेदप्रतिकूल) मार्ग पर चलते हैं, जो ठग हैं और वेश बनाकर जगत को छलते हैं, हे माता! यदि मैं इस भेद को जानता भी होऊँ, तो शंकरजी मुझे उन लोगों की गति दें।

तजि श्रुतिपंथु बाम पथ चलहीं। बंचक बिरचि बेष जगु छलहीं।।
तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ। जननी जौं यहु जानौं भेऊ।। (2/168/7–8)

उपर्युक्त जिन पापों का वर्णन किया गया है वे रावण के अनुचर सहजरूप में करते थे, क्योंकि उन्हें हिंसा करने से प्रीति हो गई थी और जिनकी हिंसा में प्रीति हो उनके द्वारा किए गए पापों की कोई सीमा नहीं होती है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

बरनि न जाइ अनीति घोर निसाचर जो करहिं।
हिंसा पर अति प्रीति तिन्ह के पापहि कवनि मिति।। (1/183)

दूसरे को पीड़ा पहुँचाने के समान कोई पाप नहीं है, परंतु अपवाद स्वरूप यदि अपराधी को दण्ड देकर उसे सुधारने का प्रयास किया जाता है अथवा किसी व्यक्ति को जान से मारने के अपराध में यदि अपराधी को मृत्यु दण्ड दिया जाता है, तो न्यायाधीश को इसका पाप नहीं लगता है, बल्कि यदि वह ऐसा दण्ड न दे तो उसे पाप लगेगा, क्योंकि अपराधी को सजा मिलनी ही चाहिए। कभी–कभी ऐसा देखने में आया है कि कोई अपराधी सांसारिक न्यायाधीश से वकीलों के दाव–पेंच अथवा समुचित गवाहों के अभाव में तो बच जाता है, पर ईश्वरीय दण्ड व्यवस्था के तहत उसे सजा अवश्य मिलती है। इस संदर्भ में एक सत्य घटना इस प्रकार से है –

एक बार एक निचली अदालत का न्यायाधीश सायंकाल वेला में टहल रहा था। सूर्यास्त हो चुका था, पर अँधेरा नहीं हुआ था। उन्होंने देखा कि एक सुनसान जगह पर एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर धारदार हथियार से प्रहार कर रहा है। वे सज्जन एक पेड़ की आड़ में छिपकर देखने लगे। जिस व्यक्ति ने हत्या की थी, उसे उन्होंने पहचान लिया, पर चुप रहे। इस घटना के लगभग 20 वर्ष पश्चात् वे सज्जन जिला सत्र न्यायाधीश बन गए और उनकी कोर्ट में हत्या के मामले का एक केस आया। वे पहचान गए उस हत्यारे को और गवाह–सबूत उसके पक्ष में ऐसे पेश हुए कि

न्यायाधीश को उसे आजीवन कारावास की सजा सुनानी पड़ी, जबकि उनको लग रहा था कि वह व्यक्ति निर्दोष है। जेल भेजने से पूर्व पुलिस सुरक्षा में अपराधी को कुछ बात करने के लिए उन न्यायाधीश ने अपने चैम्बर में बुलाया और उससे कहा कि ऐसा लग रहा है कि इस केस में आपको फँसाया गया है, पर मैं मजबूर था, गवाह सबूतों के आधार पर अपना निर्णय देने को। क्या आपने इससे पहले कोई ऐसा जघन्य अपराध किया है? उसने बताया कि लगभग बीस वर्ष पहले उसने एक हत्या की थी, पर गवाह–सबूत न मिलने से वह बरी हो गया था। न्यायाधीश समझ गए कि यह है ईश्वर का न्याय।

इस लेख का सारांश यह है कि दुर्लभ मानव शरीर प्राप्त करके इसे सार्थक करने हेतु इसे मानव–सेवा और हरि भजन में लगाएँ। यदि यह न बन सके तो कम से कम 'पर–पीड़न–दोष' और जघन्य पापों से तो बचते रहें। स्मरण रहे कि भले ही सांसारिक न्यायालय से हमें दण्ड न मिल सके, पर ईश्वरीय विधान के अनुसार **'जो जस करइ सो तस फलु चाखा।।' (2/219/4)** अर्थात् जो जैसा करेगा, वह वैसा भरेगा।

धर्म चिंतन

हनुमानजी जब संजीवनी बूटी का पर्वत लेकर लौटे, तब तो भगवान से कहा :– ''प्रभु आपने मुझे संजीवनी बूटी लेने नहीं भेजा था, बल्कि मेरा भ्रम दूर करने के लिए भेजा था और आज मेरा यह भ्रम टूट गया कि मैं ही आपका राम नाम का जप करने वाला सबसे बड़ा भक्त हूँ''।

भगवान बोलेः– वह कैसे?

हनुमानजी बोलेः– वास्तव में मुझसे भी बड़े भक्त तो भरतजी हैं, मैं जब संजीवनी लेकर लौट रहा था, तब मुझे भरतजी ने बाण मारा और मैं गिरा तो भरतजी ने न तो संजीवनी मंगाई, न वैद्य बुलाया। कितना भरोसा है उन्हें आपके नाम पर उन्होंने कहा कि यदि मन, वचन और शरीर से श्रीरामजी के चरण–कमलों में मेरा निष्कपट प्रेम हो, यदि रघुनाथजी मुझ पर प्रसन्न हों तो यह वानर थकावट और पीड़ा से रहित होकर स्वस्थ जो जाए। उनके इतना कहते ही मैं उठ बैठा। सच कितना भरोसा है भरतजी को आपके नाम पर। श्रीरामचरितमानस के अनुसार :–

जौं मोरें मन बच अरु काया। प्रीति राम पद कमल अमाया।।
तौ कपि होउ बिगत श्रम सूला। जौं मो पर रघुपति अनुकूला।।
सुनत बचन उठि बैठ कपीसा। कहि जय जयति कोसलाधीसा।। (6/59/6–8)

शिक्षा –हम भगवान का नाम तो लेते हैं, पर भरोसा नहीं करते, भरोसा करते भी हैं तो अपने पुत्रों एवं धन पर कि बुढ़ापे में बेटा ही सेवा करेगा, धन ही साथ देगा। उस समय हम भूल जाते हैं कि जिस भगवान का नाम हम जप रहे हैं वे हैं, पर हम भरोसा नहीं करते। बेटा सेवा करे न करे, पर भरोसा हम उसी पर करते हैं।

दूसरी बात प्रभु – बाण लगते ही मैं गिरा, पर्वत नहीं गिरा, क्योंकि पर्वत तो आप उठाए हुए थे और मैं अभिमान कर रहा था कि मैं उठाए हुए हूँ। मेरा दूसरा अभिमान भी टूट गया।

शिक्षा – हमारी भी यही सोच है कि अपनी गृहस्थी के बोझ को हम ही उठाए हुए हैं, जबकि सत्य यह है कि हमारे नहीं रहने पर भी हमारा परिवार चलता ही है।

सारांश : जीवन के प्रति जिस व्यक्ति की कम से कम शिकायतें हैं, वही इस जगत में अधिक सुखी है। यह राम नाम बहुत ही सरल, सरस, मधुर, अति मन भावन एवं कल्याणकारी है–जीवन के साथ भी और जीवन के बाद भी।

अंतर प्रेम तासु पहिचाना

संत मैथिलीशरण, ईमेलः maithili.sharan@yahoo.com

विश्वामित्रजी के साथ अयोध्या से जनकपुर की प्रथम यात्रा में जब श्रीराम ने सुबाहु और ताड़का का वध किया था, उस समय मारीच को केवल बिना फण का बाण चलाकर सौ योजन दूर फेंक दिया था, क्योंकि भविष्य की लीला में प्रभु को मारीच का सहयोग चाहिए था। वह तभी से हृदय से प्रभु का भक्त हो चुका था। देखें—**'खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा'** और **'अंतर प्रेम तासु पहिचाना।'** मारीच एक ओर खल है, दूसरी ओर प्रेमी भी। जब वह रावण की ओर से कपट मृग बनकर आता है तो वह खल और दुष्ट है। वही जब भगवान के द्वारा बाण प्रहार से अपनी मृत्यु को भी धन्यता के रूप में देखता है, तब वह भक्त और प्रेमी के रूप में सामने आता है। यही दशा हमारे मन की भी है। मन मारीच है, जो खल और प्रेमी दोनों है। जब मन भगवान के प्रेम और भक्ति में लय हो जाता है तो भगवान से संयोग कराने में इसकी भूमिका होती है, पर जब यही मन मोह रूपी रावण के वशीभूत होकर हमें भगवान से दूर करता है, तो वह खल की भूमिका में होता है। जब मारीच को पता चला कि भगवान उसे मारने का संकल्प कर चुके हैं और उसे स्वर्णमृग बनकर सीताजी के अंदर अपने प्रति आकर्षण पैदा करना है, तो वह सोचने लगा कि सीताजी के मन में सोने को देखकर लालच आ जाए, यह संभव नहीं। किंतु जब असंभव भी संभव होने जा रहा है, तो इसके पीछे भी कोई रामजी की ही इच्छा होगी, क्योंकि भक्ति सिद्धांत है कि :—

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।। (1/128/1)

और यदि रामजी की यही इच्छा है तो मेरी सुगति का इससे सुंदर कौन—सा समय होगा, जब मुझ जैसा कपटी भगवान के मुक्तिदायक क्रोध का पात्र बनकर कृपाभाजन बन जाएगा। भगवान के ध्यान से उसका कपट बाहर आ गया और प्रेम अंदर छिप गया। भगवान ने उसके कपट का उपयोग अपनी लीला में कर लिया और हृदय में छिपे प्रेम का सदुपयोग उसे अपने चरणों में भक्ति और मुक्ति देकर कर दिया। परिणाम यह हुआ कि मारीच का मन 'मन' न रहकर 'सुमन' हो गया, क्योंकि सीताजी को वह परम रुचिकर लगा। जब वह भगवान का ध्यान करने लगा तो सीताजी को उसके अंग—प्रत्यंग सुमनोहर लगने लगे। वह भगवान से कहने लगीं, इस मृग की छाल मुझे बहुत अच्छी लग रही है। भगवान समझ गये कि अब सीताजी पर मेरी लीला का रंग पूरा चढ़ गया है, क्योंकि विदेह कुमारी को कपटी देह में सुंदरता दिखाई देने लगी तो अब मुझे भी पूरा अभिनय करना चाहिए। कमर में फेंटा कसकर भगवान मारीच के पीछे धनुष—बाण लेकर दौड़े। मारीच आगे—आगे भाग रहा है और पीछे मुड़—मुड़ कर देख रहा है कि प्रभु आ रहे हैं न? वह भगवान को सीताजी से दूर ले जाकर लक्ष्य पूरा करता है। अंत में भगवान का बाण उसको लगा तो वह 'लक्ष्मण लक्ष्मण' कहकर चिल्लाया, जिसको सुनकर सीताजी को सोने के मृग के स्वर को सुनकर श्रीराम के स्वर का भ्रम हो गया और फिर हृदय में भी श्रीलक्ष्मण की श्रीराम के प्रति तात्विक दृष्टि और निष्ठा पर भी भ्रम हो गया। उसकी परिणति श्रीराम से सीताजी के वियोग के रूप में होती है।

भगवान ने मारीच के इस प्रेम और त्याग को देखकर अपना परम पद दे दिया और यह सोचकर मुक्त कर दिया कि जिसने मेरी लीला की पूर्णता के लिए अपने को कपटी, मायावी और छली कहलाने में संकोच नहीं किया, जिसने मृत्यु के लिए भी मेरे बाण का चयन किया, उसको तो मेरी कृपा मिलनी ही चाहिए।

जब श्रीराम सेना लेकर लंका पहुँचे, तो वहाँ के उस पवित्र शिखर 'सुबेल शैल' पर जाकर श्रीलक्ष्मण ने स्वयं अपने हाथों से कुश और पुष्प का आसन बनाकर उस पर मृगछाल बिछा दिया। उस पर परम कृपालु प्रभु श्रीराम विराजमान हो गये। गोस्वामीजी का शब्द विन्यास कितना सांगोपांग है कि सीताजी ने जब पहली बार मारीच को देखा था तो उन्हें मृग रुचिकर लगा था और लक्ष्मणजी ने जब वही मृगचर्म बिछा दिया तो गोस्वामीजी ने लिखाः

ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला। तेहिं आसन आसीन कृपाला।। (6/11/4)

उनका भाव यह था कि मेरी प्रिया सीता ने जिसको अपनी रुचि मान लिया तो मेरी रुचि और उनकी रुचि कभी अलग नहीं हो सकती है। परम कृपालु भगवान, रावण की भूमि पर भी परम शुचिता और विरक्त आसन की खोज कर लेते हैं :

एहि बिधि कृपा रूप गुन धाम रामु आसीन।
धन्य ते नर एहिं ध्यान जे रहत सदा लयलीन।। (6/11क)

चराचर में, जड़–चेतन सब में भावना और धन्यता भर देने में ही राम का रामत्व है। भगवान से यही प्रार्थना है कि वे कृपा कर हमारे मन रूपी मारीच के चर्म को अपने बैठने का आसन बना लें। उसे रक्त रहित करके मन को संसार से विरक्त कर दें, ताकि हमारा मन–मारीच भी भगवान की लीला में उनके कृपा रूपी बाण को प्राप्त करके धन्य हो जाए।

(1) समय, समझ, सामग्री और सामर्थ्य–ये मिली हुई और छूटने वाली चीजें हैं। इनको यदि भगवान को अर्पण कर दें तो भगवान की प्राप्ति हो जाए। इनको भगवान को अर्पण करना 'भक्तियोग' है। प्रकृति को अर्पण करना 'ज्ञानयोग' है। संसार को अर्पण करना 'कर्मयोग' है। अपने आपको अर्पण कर दें तो यह 'जन्ममरण योग' हो गया। जिसकी चीज है, उसको दे दो तो मुक्ति हो जाएगी।

(2) मानव शरीर लेने के लिए नहीं है, देने के लिए है। हम पर सभी प्राणियों का ऋण है, क्योंकि सभी से हमारा उपकार होता है। इसलिए सबकी सेवा करो।

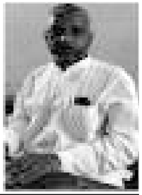

ईश्वरीय किराने की दुकान

प्रस्तुतिः 'मक्खन', झाँसी (उ.प्र.), फोनः 9451131195

एक दिन मैं सड़क से जा रहा था, रास्ते में एक जगह बोर्ड लगा था, ईश्वरीय किराने की दुकान। मेरी जिज्ञासा बढ़ गई क्यों न इस दुकान पर जाकर देखूँ इसमें क्या बिकता है? जैसे ही यह ख्याल आया दरवाजा अपने आप खुल गया, जो जरा सी जिज्ञासा रखते हैं उनके लिए द्वार अपने आप खुल जाते हैं, खोलने नहीं पड़ते। मैंने खुद को दुकान के अंदर पाया और देखा कि जगह–जगह देवदूत खड़े हैं। एक देवदूत ने मुझे एक टोकरी देते हुए कहा–मेरे बच्चे! ध्यान से खरीदारी करना यहाँ सब कुछ है जो एक इंसान को चाहिए। आगे उसने कहा कि यदि एक बार में टोकरी भरकर न ले जा सको तो पुनः आ जाना और फिर टोकरी भर लेना। जब मैंने सारी चीजें देखीं तो सबसे पहले ''धीरज'' खरीदा, फिर ''प्रेम'' और फिर ''समझ''। फिर एक–दो डिब्बे ''विवेक'' के भर लिए। आगे जाकर ''विश्वास'' के दो–तीन डिब्बे उठा लिए, मेरी टोकरी भरती गई। आगे गया ''पवित्रता'' मिली। सोचा इसको कैसे छोड़ सकता हूँ। फिर ''शक्ति'' का बोर्ड आया, शक्ति भी ले ली। ''हिम्मत'' भी ले ली, क्योंकि हिम्मत के बिना तो जीवन में काम ही नहीं चलता। थोड़ा और आगे ''सहनशीलता'' भी ले ली। फिर ''मुक्ति'' का डिब्बा भी ले लिया।

मैंने वे सब चीजें खरीद लीं जो मेरे प्रभुजी को पसंद हैं। तत्पश्चात् एक नजर ''प्रार्थना'' पर पड़ी, मैंने उसका भी एक डिब्बा उठा लिया। यह इसलिए कि सब कुछ होते हुए भी अगर मुझसे कभी कोई भूल हो जाये तो मैं प्रभु से प्रार्थना कर लूँगा कि भगवान मुझे माफ कर देना। आनंदित होते हुए मैंने बास्केट को भर लिया और फिर मैं काउन्टर पर गया तथा देवदूत से पूछा कि सर मुझे इस सामान का कितना बिल चुकाना होगा। देवदूत बोला मेरे बच्चे! यहाँ बिल चुकाने का ढंग भी ईश्वरीय है, अब तुम जहाँ भी जाना इन चीजों को भरपूर बांटना और लुटाना, जो चीज जितनी तेजी से लुटाओगे, उतनी तेजी से उसका बिल चुकता होता जाएगा। इन चीजों का बिल इसी तरह चुकाया जाता है।

कोई–कोई विरला ही इस दुकान में प्रवेश करता है और जो प्रवेश कर लेता है वह माला–माल हो जाता है। वह इन गुणों को खूब भोगता भी है और लुटाता भी है। प्रभु की इस दुकान का असली नाम है 'सत्संग की दुकान'। सब गुणों के खजाने हमें ईश्वर से मिले हुए हैं और यदि कभी खाली हो भी जाए तो फिर सत्संग में आकर बास्केट भर लेना। इस दुकान से मैं एक चीज भी ग्रहण कर सकूँ, ऐसी कृपा करना प्रभु!

सत्संग समस्त मंगलों का मूल है। इससे सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है। अन्य साधन पत्ते, फूल व डाल हैं।

सतसंगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।। (1/3/8)

लाभप्रद है आलोचना सुनना
स्वामी विवेकानन्द के विचार

प्रायः प्रत्येक व्यक्ति में इतना मिथ्या अभिमान भरा हुआ है कि वह स्वयं को सबसे अधिक बुद्धिमान और विद्वान तथा दूसरों को मूर्ख समझता है। इसी कारण से अपवाद स्वरूप कुछ को छोड़कर प्रायः कोई भी व्यक्ति अपना दोष या अपनी आलोचना सुनना नहीं चाहता। क्यों?—क्योंकि ऐसा सुनना उसे अपमानजनक लगता है, कष्टदायक लगता है। यह बात सभी जानते हैं कि कोई भी व्यक्ति कष्ट भोगना नहीं चाहता। इसलिए जब भी कोई व्यक्ति किसी के दोष बताता है अथवा उसकी आलोचना करता है तो उसे सुनकर वह व्यक्ति क्रोधित हो जाता है, दुखी हो जाता है, नाराज हो जाता है। ऐसा करना उचित नहीं है। यदि वह कुछ गंभीरता से विचार करे, तो यह उसके लिए हानिकारक नहीं है, बल्कि लाभदायक है। वेदों का यह सिद्धांत है कि यदि आपके अंदर दोष रहेंगे तो वे आपको भी दुख देंगे तथा समाज को भी। यदि आपके अंदर अच्छे गुण होंगे तो वे आपको भी सुख देंगे और समाज को भी। इसलिए जहाँ तक संभव हो, अपने दोषों को जानना, समझना और उन्हें दूर करना आपके लिए हितकारक है।

आप अपने दोषों को कब जान पाएँगे? या तो आप स्वयं अपने अंदर अपने दोषों की खोज करें अथवा कोई दूसरा व्यक्ति आपके दोषों को देखकर—जानकर—समझकर आपको बताए और आप उसकी बात प्रेम से सुनें, तब आपको पता चल सकता है कि आप में क्या—क्या और कितने दोष हैं? उसके बाद यदि आप अपने दोषों पर निष्पक्ष भाव से विचार—चिंतन करें और आपको आपके दोष समझ में आ जाएँ कि हाँ, मुझ में ये दोष हैं और आप उन्हें दूर करने की इच्छा रखते हो, तब फिर इस काम में आप पूरा पुरुषार्थ करें, तो आपके दोष दूर हो सकते हैं। तभी आपका दुख भी कम होगा। यदि आप दूसरे व्यक्ति के द्वारा बताए गए दोषों को ध्यानपूर्वक सुनना ही नहीं चाहते, उन पर विचार करना ही नहीं चाहते, उन्हें दूर करने का पुरुषार्थ भी करना नहीं चाहते, तब तो आपके दोष दूर नहीं हो सकते और न ही आपके दुख दूर हो सकते। इसलिए अच्छा यही है कि जब कोई आलोचक व्यक्ति आपके दोष बताए, तो प्रेमपूर्वक उसकी बात को सुनें। उस पर शान्ति से विचार करें। यदि आपके अंदर वे दोष सिद्ध हो जावें तो उन्हें दूर करने का प्रयत्न करें। यदि उसका आरोप झूठा हो और वे दोष आप में हों ही नहीं, तब भी कोई चिंता की बात नहीं है। दुखी होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि जब दोष हैं ही नहीं, तो दुखी क्यों होना?

अतः जब भी कोई आलोचक आपके दोष बताए तो यह सोच कर प्रसन्न होना चाहिए कि इसने मेरा काम आसान कर दिया। इस व्यक्ति ने मुझे मुफ्त में मेरे दोष बता दिए अर्थात् उसकी सलाह मुफ्त में मिल रही है तो उसका लाभ ले लेना चाहिए। इसी में बुद्धिमत्ता है और इसी में मेरी सुरक्षा, उन्नति और लाभ है अन्यथा ऐसी ही किसी समस्या को सुलझाने के लिए यदि मैं वकीलों से सलाह लेता तो मुझे बहुत भारी फीस देनी पड़ती।

एक प्रेरक कहानी

प्रस्तुतिः एक भगवद्भक्त

कैसे होती है परमात्मा की प्राप्ति ?

एक राजा था। वह बहुत न्यायप्रिय, प्रजावत्सल एवं धार्मिक स्वभाव का था। वह नित्य अपने इष्टदेव को बड़ी श्रद्धा से पूजा–पाठ करके याद करता था। एक दिन इष्टदेव ने प्रसन्न होकर उसे दर्शन दिए तथा कहा राजन! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। बोलो तुम्हारी क्या इच्छा है? प्रजा को चाहने वाला राजा बोला, भगवान मेरे पास आपका दिया सब कुछ है। आपकी कृपा से राज्य में सब प्रकार सुख–शान्ति है, फिर भी मेरी एक इच्छा है कि जैसे आपने मुझे दर्शन देकर धन्य किया, वैसे ही मेरी सारी प्रजा को भी दर्शन दीजिए।

यह तो संभव नहीं है, भगवान ने राजा को समझाया, परन्तु प्रजा को चाहने वाला राजा भगवान से जिद्द करने लगा। आखिर भगवान को अपने भक्त के सामने झुकना पड़ा और बोले, ठीक है, कल अपनी सारी प्रजा को उस पहाड़ी के पास लाना। मैं पहाड़ी के ऊपर से दर्शन दूँगा। राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और भगवान को धन्यवाद दिया।

अगले दिन सारे नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि कल सभी पहाड़ के नीचे मेरे साथ पहुँचें, वहाँ भगवान आप सबको दर्शन देंगे। दूसरे दिन राजा अपनी समस्त प्रजा और स्वजनों को साथ लेकर पहाड़ी की ओर चलने लगा। चलते–चलते रास्ते में एक स्थान पर ताँबे के सिक्कों का पहाड़ देखा। प्रजा में से कुछ लोग उस ओर भागने लगे। तभी ज्ञानी राजा ने सबको सतर्क किया कि कोई उस ओर ध्यान न दे, क्योंकि तुम सब भगवान से मिलने जा रहे हो, इन ताँबे के सिक्कों के पीछे अपने भाग्य को लात मत मारो, परन्तु लोभ–लालच के वशीभूत कुछ लोग ताँबे के सिक्कों वाली पहाड़ी की ओर भाग गए और सिक्कों की गठरी बनाकर अपने घर की ओर चलने लगे। वे मन ही मन सोच रहे थे, पहले इन सिक्कों को समेट लें, भगवान से फिर मिल लेंगे। राजा खिन्न मन से आगे बढ़े। कुछ दूर चलने पर चाँदी के सिक्कों का चमचमाता पहाड़ दिखाई दिया। इस बार भी बचे हुए प्रजाजनों में से कुछ लोग उस ओर भागने लगे और चाँदी के सिक्कों की गठरी बनाकर अपने घर की ओर चलने लगे।

इसी प्रकार कुछ दूर और चलने पर सोने के सिक्कों का पहाड़ नजर आया। अब तो प्रजाजनों में से बचे हुए सारे लोग तथा राजा के स्वजन भी उस ओर भागने लगे। वे भी दूसरों की तरह सिक्कों की गठरी लाद कर अपने–अपने घर की ओर चल दिए। अब केवल राजा और रानी ही शेष रह गए थे। वे आपस में कहने लगे, देखो कितने लोभी हैं ये लोग। भगवान से मिलने का महत्व ही नहीं जानते हैं। भगवान के सामने सारी दुनिया की दौलत क्या चीज है? सही बात है रानी ने राजा की बात का समर्थन किया और वे दोनों आगे बढ़ने लगे।

कुछ दूर चलने पर राजा और रानी ने देखा कि सप्तरंगी आभा बिखेरता हीरों का पहाड़ है। अब तो रानी से भी नहीं रहा गया। हीरों के आकर्षण से वह भी दौड़ पड़ी और हीरों की गठरी बनाने लगी। फिर भी उसका मन नहीं भरा तो साड़ी के पल्लू में भी बाँधने लगी। यह देख राजा को अत्यन्त ग्लानि हुई। बड़े दुःखद मन से राजा अकेले ही आगे बढ़ते गए। वहाँ सचमुच भगवान खड़े इंतजार कर रहे थे। राजा को देखते ही भगवान मुस्कराए और पूछा, कहाँ है तुम्हारी प्रजा और तुम्हारे प्रियजन। मैं तो कब से सबसे मिलने के लिए प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

राजा ने शर्म और आत्म–ग्लानि से अपना सिर झुका दिया। तब भगवान ने राजा को समझाया–''राजन जो लोग सांसारिक सुख प्राप्ति को मुझसे अधिक मानते हैं, उन्हे मेरी प्राप्ति नहीं होती और वह मेरे स्नेह तथा आशीर्वाद से भी वंचित रह जाते हैं। इस संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदासजी ने **श्रीरामचरितमानस** में लिखा है –

रमा बिलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी।। (2/324/8)

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

स्थानीय कार्यालय : ए–447, सेक्टर–47, नोएडा–201 301

दूरभाश : 0120–4305457, 9811056467

वित्तीय वर्ष 2022–23 का आय–व्यय विवरण (राशि भारतीय रुपयों में)

क्र0सं0	आय विवरण	2022–23	क्र0सं0	व्यय विवरण	2022–23
1)	वर्ष के प्रथम दिन की स्थिति		1)	स्मारिका छपाई व्यय	79,538.00
	क) मियादी जमा खाता	3,35,000.00			
	ख) बैंक में चालू खाता	38,865.25			
	ग) नकद राशि	28,374.00			
2)	स्मारिका में विज्ञापन से प्राप्त राशि	–	2)	स्रोत पर आयकर (TDS)	–
3)	दान/आरती–मानस पाठ एवं सदस्यता भुल्क से प्राप्त राशि	2,84,456.00	3)	श्रीरामनवमी उत्सव एवं श्रीराम कथा आयोजन पर व्यय	1,60,674.00
4)	अन्य प्राप्तियाँ, आयकर रिफण्ड, बैंक ब्याज आदि	22,821.00	4)	टेलीफोन बिलों का भुगतान	10,486.18
5)	आयकर वापसी आवेदित (Applied for)	–	5)	विविध व्यय (बैंक चार्ज, डाक खर्च, वैबसाइट रखरखाव, संदेशवाहक पर खर्च आदि)	13,100.00
6)	प्रतिभूति वापसी (Security Refund)	5,000.00	6)	दान (Charity)	6,011.00
			7)	प्रतिभूति जमा	–
			8)	वर्ष के अंतिम दिन की स्थिति	
				क) मियादी जमा खाता	2,30,000.00
				ख) बैंक में बचत खाता	2,02.335.07
				ग) नकद राषि	12,372.00
	कुल योग	7,14,516.25		कुल योग	7,14,516.25

अध्यक्ष **महासचिव** **कोषाध्यक्ष** **कार्यकारी सदस्य** **चार्टर्ड लेखाकार**

*श्रीरामचरितमानस की प्रेरणाप्रद चौपाइयाँ *

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।
राम बाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर।।

बिनु सतसंग बिबेक न होई । राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।। (1/3/7)
बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।। (1/3/9)
सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। (1/8/2)
राम भगति भूषित जियँ जानी। सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी।। (1/9/7)
महाबीर बिनवउँ हनुमाना। राम जासु जस आप बखाना।। (1/17/10)
जपहिं नामु जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।। (1/22/5)
राजा रामु अवध रजधानी। गावत गुन सुर मुनि बर बानी।। (1/25/6)
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)
भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ। नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।। (1/28/1)
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)
जन्म महोत्सव रचहिं सुजाना। करहिं राम कल कीरति गाना।। (1/34/8)
आवत एहिं सर अति कठिनाई। राम कृपा बिनु आइ न जाई।। (1/38/6)
जो नहाइ चह एहिं सर भाई। सो सतसंग करउ मन लाई।। (1/39/8)
राम राज सुख बिनय बड़ाई। बिसद सुखद सोइ सरद सुहाई।। (1/42/6)
बंदउँ बालरूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू।। (1/112/3)
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)
जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना। श्रवन रंध्र अहिभवन समाना।। (1/113/2)
जिन्ह हरिभगति हृदयँ नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी।। 1/113/5)
रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। (1/114/1)
राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना।। (1/116/8)
आदि अंत कोउ जासु न पावा। मति अनुमानि निगम अस गावा।। (1/118/4)
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना।। (1/118/5)
जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।। (1/121/6)
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।। (1/121/8)
जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)
सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरे ।। (2/205/2)
प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी।। (7/21/4)
बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा।। (7/33/8)
पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधभाई।। (7/41/1)
बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।। (7/43/7)
भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।। (7/45/5)
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई।। (7/46/2)
हनूमान सम नहिं बड़भागी। नहिं कोउ राम चरन अनुरागी।। (7/50/8)
राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं।। (7/53/1)
ऐसेहिं हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा।। (7/79/1)

*** बालकाण्ड ***

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।। 31।।
रामचरित चिंतामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू।।
जग मंगल गुनग्राम राम के। दानि मुकुति धन धरम धाम के।।
सदगुर ग्यान बिराग जोग के। बिबुध बैद भव भीम रोग के।।
जननि जनक सिय राम प्रेम के। बीज सकल ब्रत धरम नेम के।।
समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक लोक के।।
सचिव सुभट भूपति बिचार के। कुंभज लोभ उदधि अपार के।।
काम कोह कलिमल करिगन के। केहरि सावक जन मन बन के।।
अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दवारि के।।
मंत्र महामनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के।।
हरन मोह तम दिनकर कर से। सेवक सालि पाल जलधर से।।
अभिमत दानि देवतरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरि हर से।।
सुकबि सरद नभ मन उडगन से। रामभगत जन जीवन धन से।।
सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जग हित निरुपधि साधु लोग से।।
सेवक मन मानस मराल से। पावन गंग तरंग माल से।।
कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाषंड।
दहन राम गुन ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड।। 32 (क)।।
रामचरित राकेस कर सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित हित बिसेषि बड़ लाहु।। 32 (ख)।।

सत पंच चौपाई मनोहर (1/198 से 199)

सत

काम कोटि छबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा।।
अरुन चरन पंकज नख जोती। कमल दलन्हि बैठे जनु मोती।।
रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहे। नुपूर धुनि सुनि मुनि मन मोहे।।
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा। नाभि गभीर जान जेहिं देखा।।
भुज बिसाल भूषन जुत भूरी। हियँ हरि नख अति सोभा रूरी।।
उर मनिहार पदिक की सोभा। बिप्र चरन देखत मन लोभा।।
कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई। आनन अमित मदन छबि छाई।।

पंच

दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे। नासा तिलक को बरनै पारे।।
सुंदर श्रवन सुचारु कपोला। अति प्रिय मधुर तोतरे बोला।।
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे। बहु प्रकार रचि मातु सँवारे।।
पीत झगुलिया तनु पहिराई। जानु पानि बिचरनि मोहि भाई।।
रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेषा। सो जानइ सपनेहुँ जेहिं देखा।।

-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x--x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x--x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x

मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।। (1/200/6)
प्रातकाल उठि कै रघुनाथा । मातु पिता गुरु नावहिं माथा।। (1/205/7)
जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। (1/259/6)
जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं।। (1/315/1)
करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय रामु कहेउ कामारी।। (1/315/2)
नाथ सकल संपदा तुम्हारी। मैं सेवकु समेत सुत नारी।। (1/360/6)
मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर अंतरजामी।। (2/72/6)
सखा परम परमारथु एहू। मन क्रम बचन राम पद नेहू।। (2/93/6)
राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अबिगत अलख अनादि अनूपा।। (2/93/7)
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा।। (2/101/3)
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदयँ नहिं दूजा।। (2/129/4)
रामहि केवल प्रेमु पिआरा। जानि लेउ जो जाननिहारा।। (2/137/1)
राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिन्हहि न पाप पुंज समुहाहीं।। (2/194/5)
जोरि पानि बर मागउँ एहू। सीय राम पद सहज सनेहू।। (2/197/8)
नाथ सकल साधन मैं हीना। कीन्ही कृपा जानि जन दीना।। (3/8/4)
मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।। (3/16/11)
जाकर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा।। (3/31/6)

यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार।
श्रीरघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार।। (6/121ख)

परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।। (3/31/9)
कोमल चित अति दीनदयाला। कारन बिनु रघुनाथ कृपाला।। (3/33/1)
सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं बिषय अनुरागी।। (3/33/3)
उमा कहउँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजनु जगत सब सपना।। (3/39/5)
राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका।। (3/42/8)
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला।। (3/46/7)
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिन राती।। (4/7/21)
देह धरे कर यह फलु भाई। भजिअ राम सब काम बिहाई।। (4/23/6)
सोइ गुनग्य सोई बड़भागी। जो रघुबीर चरन अनुरागी।। (4/23/7)
पापिउ जा कर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं।। (4/29/3)
पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। (4/30/4)
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। (5/5/2)
गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही। राम कृपा करि चितवा जाही।। (5/5/3)
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता।। (5/7/4)
राम बिमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिनु पाई।। (5/23/5)
कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजन न होई।। (5/32/3)
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।। (5/40/6)
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ।। (5/57/5)
मोरें तुम्ह प्रभु गुरु पितु माता। जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता।। (7/18/4)
निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा।। (7/89/5)
स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा। मन क्रम बचन राम पद नेहा।। (7/96/1)
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा। जो तनु पाइ भजिअ रघुबीरा।। (7/96/2)
एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।। (7/130/5)
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।। (7/130/6)

बारि मथें घृत होइ बरु सिकता ते बरु तेल।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धांत अपेल।। (7/122ख)

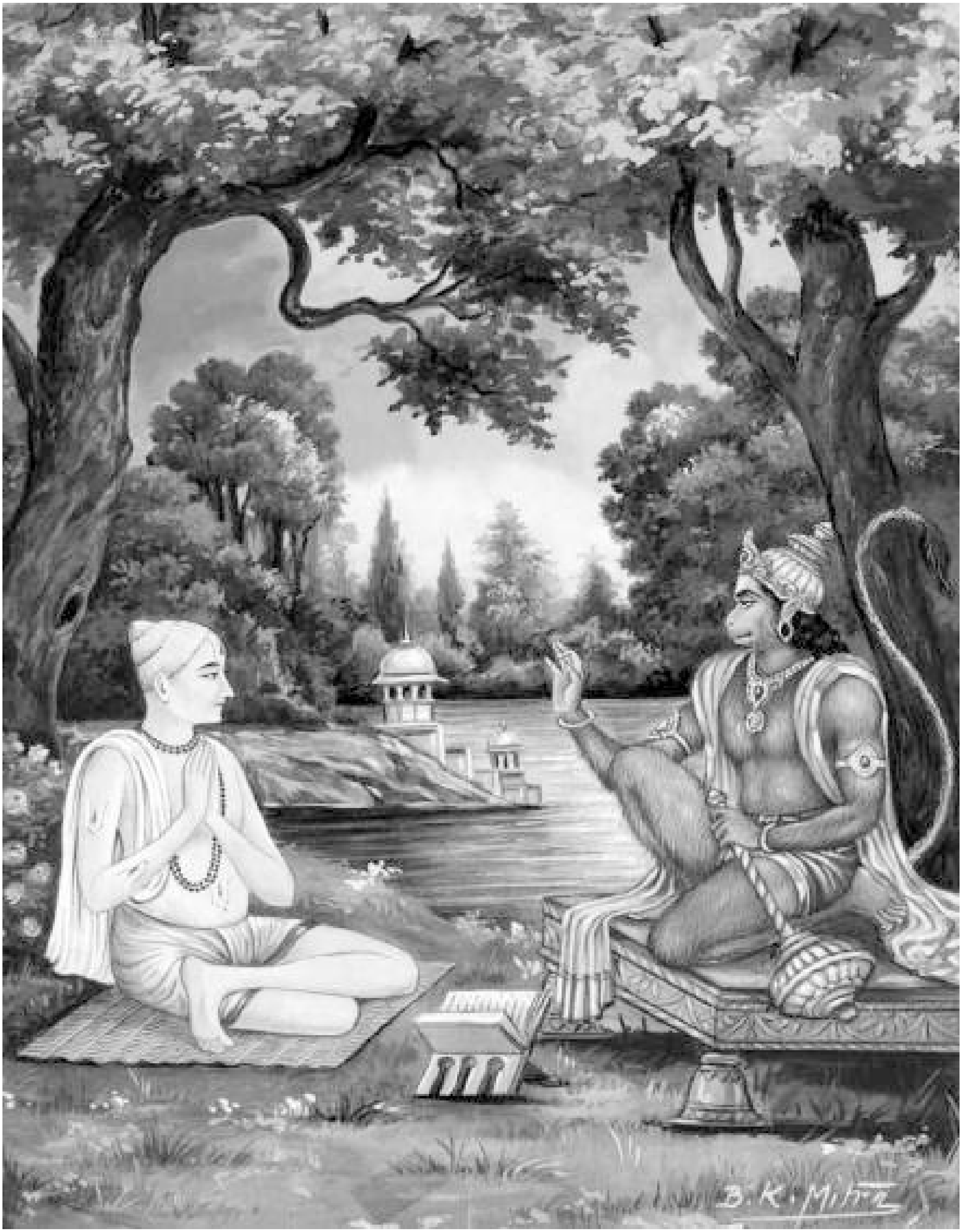
B.K. Mitra

श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र

श्रीरामचरितमानस एक महाकाव्य ही नहीं, बल्कि अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे आदि सशक्त मंत्रों का संकलन है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे, सोरठे सभी सरल मंत्र हैं। संस्कृत के मंत्र कठिन होते हैं, इससे हर एक को उनके उच्चारण में सुगमता नहीं होती, इसलिये जापक का मन उनमें पूरा नहीं लगता। साबर–मंत्र रूखे और कठिन शब्दावली से भरे होते हैं। उनमें भी मन नहीं लगता, परन्तु श्रीरामचरितमानस के ये मंत्र सरल, सरस और सार्थक हैं। जापक इनमें तन्मय हो जाता है। इच्छाशक्ति तल्लीन हो जाती है। इससे मनवांछित फल शीघ्र प्राप्त होता है।

रक्षा–रेखा :

मन्त्र सिद्ध करने के लिये या किसी संकटपूर्ण जगह पर रात्रि व्यतीत करने के लिये अपने चारों ओर रक्षा की रेखा खींच लेनी चाहिए। लक्ष्मणजी ने सीताजी की कुटी के आसपास जो रक्षा रेखा खींची थी, उसी लक्ष्य पर निम्नांकित रक्षा–मन्त्र बनाया गया है। इसे एक सौ आठ आहुति द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिए।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक।। (मानस 7/115/छंद)

इन मंत्रों को सिद्ध करके उनका जप करना अथवा मानस पाठ करते समय दोहा/सोरठा एवं चौपाइयों के बीच संपुट लगाने से इष्ट फल की अवश्य ही प्राप्ति होती है। मंत्र सिद्ध करने के लिए उपयुक्त मुहूर्त में रात्रि 10 बजे के बाद अष्टांग हवन सामग्री से इष्ट चौपाई अथवा दोहा/सोरठा से 108 आहुतियाँ देनी चाहिए। अष्टांग हवन सामग्री में चन्दन का बुरादा, तिल, शुद्ध घी, शक्कर, अगर, तगर, कपूर, शुद्ध केशर, नागर मोथा, पंच मेवा, जौ और चावल आते हैं। एक दिन हवन करने से मंत्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मंत्र (दोहा/चौपाई आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिए, पर किसी भी स्थिति में 21 बार से कम जप न हो, इसका ध्यान रखें। सामान्यतया सवा लाख जप किया जाता है, पर इससे पहले ही यदि कार्य सिद्ध हो जाए तब भी अनुष्ठान पूरा करना चाहिए और जीवन पर्यन्त उस मंत्र को रोज स्मरण कर लेना चाहिए, ताकि मंत्र सिद्ध रहे।

इस सम्बन्ध में निम्नांकित नियम महत्त्वपूर्ण हैं :

1. पूर्ण श्रद्धा–विश्वास एवं समर्पण भाव से जप करें।

2. वाराणसी में भगवान शंकरजी ने मानस की चौपाइयों को मन्त्र शक्ति प्रदान की है, इसलिये वाराणसी की ओर मुख करके शंकरजी को साक्षी मानकर श्रद्धा से जप करना चाहिये।

3. जिस उद्देश्य के लिये जो चौपाई, दोहा या सोरठा जप करना बताया गया है, उसको सिद्ध करने के लिये अष्टांग हवन की सामग्री से उसी चौपाई, दोहे या सोरठे के द्वारा 108 आहुतियाँ देनी चाहिये। यह हवन केवल एक ही दिन करना है। शुद्ध मिट्टी की वेदी बनाकर उस पर अग्नि स्थापित करके उसमें आहुति देनी चाहिये। प्रत्येक आहुति के साथ चौपाई, दोहा, सोरठा आदि के अन्त में 'स्वाहा' बोलना चाहिये।

4. प्रत्येक आहुति लगभग 10 ग्राम की (सब चीजें मिलाकर) होनी चाहिये। इस हिसाब से 108 आहुति के लिये लगभग एक किलोग्राम सामग्री सब चीजें मिलाकर बना लेनी चाहिये। कोई चीज कम–ज्यादा हो तो कुछ आपत्ति नहीं। पंचमेवा में पिस्ता, बादाम, किशमिश (द्राक्षा), अखरोट और काजू ले सकते हैं। इनमें से कोई चीज न मिले तो उसके बदले में मिस्री मिला सकते हैं। केसर शुद्ध 3 ग्राम ही डालने से काम चल जायेगा, अधिक की आवश्यकता नहीं है।

5. हवन करते समय माला रखने की आवश्यकता एक सौ आठ की संख्या गिनने भर के लिये है। माला रखने में असुविधा हो तो गेहूँ, जौ या चावल आदि के 108 दाने रखकर उनसे गिनती की जा सकती है। करमाला का भी उपयोग कर सकते हैं।

6. बैठने के लिये आसन ऊन का अथवा कुशा का होना चाहिये।

7. मन्त्र सिद्ध करने के लिये यदि लंकाकाण्ड की चौपाई या दोहा हो तो उसका हवन शनिवार को करना चाहिये। दूसरे काण्डों के चौपाई–दोहे किसी भी दिन उपयुक्त मुहूर्त में हवन करके सिद्ध किये जा सकते हैं।

8. एक दिन हवन करने से ही मन्त्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मन्त्र (चौपाई–दोहे आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को, जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिये, अधिक कर सकें तो अधिक उत्तम। आप चाहें तो नियमित जप के अलावा भी दिनभर चलते–फिरते हुए उस चौपाई या दोहे का जप कर सकते हैं। जितना अधिक जप हो, उतना ही उत्तम है।

9. कोई दो तीन कार्यों के लिये दो तीन मन्त्रों का अनुष्ठान एक साथ करना चाहें तो कर सकते हैं, पर उन मन्त्रों को पहले अलग–अलग हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये। हवन के द्वारा एक ही दिन में दो या तीन मंत्रों को सिद्ध कर सकते हैं।

10. स्त्रियाँ भी इस अनुष्ठान को कर सकती हैं, परन्तु रजस्वला होने की स्थिति में मानसिक जप किया जा सकता है, पर इस अवस्था में हवन नहीं करना चाहिये।

11. जप करते समय मन में यह विश्वास अवश्य रखना चाहिये कि भगवान श्रीसीताराम की अहैतुकी कृपा से मेरा कार्य अवश्य सफल होगा। विश्वासपूर्वक जप करने पर सफलता निश्चित रूप से प्राप्त होगी।

12. अधिकांश मंत्र तथा उपर्युक्त नियम कल्याण के मासिक अंकों से लिए गए हैं।

13. जप करते समय यदि निम्नांकित बिन्दुओं का पालन करें तो सफलता शीघ्रता से प्राप्त होगी

(क) जप सूर्योदय से पूर्व करें।

(ख) पूर्व की ओर अथवा वाराणसी की ओर मुँह करके जप करें।

(ग) ऊन के आसन पर बैठें।

(घ) अपने सामने श्रीरामदरबार का चित्र रखें। एक लोटा जल अपने बाईं ओर रखें जिसे जप के पश्चात् किसी पौधे में डाल दें या सूर्य को अर्घ्य दें।

(ङ) अपने दाईं ओर घी का दीपक जलाकर रखें।

विभिन्न कामनाओं की प्राप्ति हेतु मानस के कुछ सिद्ध मंत्र इस प्रकार हैं–

1. असमंजस की स्थिति में परम कल्याण हेतु

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)

2. शरणागत होकर संकट निवारणार्थ

मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।। (1/132/2)

3. सर्व मंगल कामना हेतु

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)

4. श्रेष्ठ भक्ति की कामना

अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें दीनदयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/7)

5. मानस का गायत्री मन्त्र

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।
ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।। (1/18/7–8)

6. संकट नाश के लिए

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)

7. जीविका प्राप्ति के लिए

बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। (1/197/7)

8. लक्ष्मी प्राप्ति हेतु

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।। (1/294/2–3)

9. शत्रुता नाश के लिए

बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई।। (7/20/8)

10. यात्रा की सपफलता के लिए

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)

11. परीक्षा में पास होने के लिए

जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कबि उर अजिर नचावहिं बानी।। (1/105/6)
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)

12. विद्या प्राप्ति के लिए

गुरुगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई।। (1/204/4)

13. आपसी सद्भाव (प्रेम) बढ़ाने के लिए

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)

14. विविध रोगों एवं उपद्रवों की शांति के लिए

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)

15. ईश्वर से अपराध क्षमा कराने के लिए

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।। (1/285/6)

16. मन पसन्द वर की प्राप्ति हेतु

सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।। (1/236/7)

17. मन पसन्द वधू की प्राप्ति हेतु

सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।। (1/237/4)

18. अपने इष्ट की प्राप्ति हेतु

जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। (1/259/6)

19. विपत्ति नाश हेतु

राजिवनयन धरें धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुखदायक।। (1/18/10)

20. भूत–प्रेत भगाने हेतु

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। (1/17)

21. दरिद्रता नाश के लिए

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दबारि के।। (1/32/8)

22. सन्तान प्राप्ति के लिए

दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद समाना।। (1/193/3)

प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।

सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान।। (1/200)

23. सुख सम्पत्ति प्राप्ति हेतु

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख सम्पति नाना बिधि पावहिं।। (7/15/3)

24. मुकदमा जीतने के लिए

पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। (4/30/4)

25. शत्रु को मित्र बनाने हेतु

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। (5/5/2)

26. निन्दा निवृत्ति के लिए

रामकृपाँ अवरेब सुधारी। बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी।। (2/317/3)

27. विघ्न विनाश के लिए

सकल विघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपाँ बिलोकहिं जेही।। (1/39/5)

28. अकाल मृत्यु के निवारण हेतु

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।

लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।। (5/30)

29. नजर झाड़ने के लिए

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी।। (1/198/5)

30. खोयी हुई चीज पुनः प्राप्त करने के लिए

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।। (1/13/7)

31. ऋद्धि–सिद्धि प्राप्त करने के लिए

साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।। (1/22/4)

32. उत्सव के अवसर प्राप्त करने के लिए

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।

तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु।। (1/361)

33. मंगलमय विदेश यात्रा हेतु

चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई। चले हृदयँ अवधहिं सिरु नाई।। (2/83/2)

34. विरक्ति तथा श्रीसीताराम चरणों में प्रेम प्राप्ति के लिए

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति।। (2/326)

35. ज्ञान प्राप्ति के लिए

छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।। (4/11/4)

36. भक्ति की प्राप्ति के लिए

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम।। (7/84 ख)

37. श्रीहनुमानजी को प्रसन्न करने के लिए

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)

38. श्रीसीतारामजी के दर्शन के लिए

नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।। (1/146)

39. सहज स्वरूप दर्शन के लिए

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।। (1/146/8)

40. भगवत्स्मरण करते हुए आराम से शरीर त्याग करने के लिए

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।। (4/10)

41. संशय निवृत्ति के लिए

रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। (1/114/1)

42. प्रभु–प्रेम में निरन्तर वृद्धि के लिए

सीता रामचरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। (2/205/2)

43. सुखद एवं ऐश्वर्यपूर्ण यात्रा के लिए

चलत बिमान कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई। (7/119/3)

जब जीव कीर्ति व तन से ऊपर उठ जाता है, तब होता है 'कीर्तन'

श्रीरामशलाका–प्रश्नावली

मानसानुरागी महानुभावों को श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का विशेष परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती, उसकी महत्ता एवं उपयोगिता से प्रायः सभी मानस प्रेमी परिचित होंगे। अतः नीचे उसका स्वरूपमात्र अंकित करके उससे प्रश्नोत्तर निकालने की विधि तथा उसके उत्तर–फलों का उल्लेख कर दिया जाता हैं। श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का स्वरूप इस प्रकार है–

सु	प्र	उ	बि	हो	मु	ग	ब	सु	नु	बि	घ	धि	इ	द
र	रु	फ	सि	सि	रहिं	बस	ही	मं	ल	न	ल	य	न	अं
सुज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	इ	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	स	य
पु	सु	थ	सी	जे	इ	ग	म*	सं	क	रे	हो	स	स	नि
त	र	त	र	स	हुँ	ह	ब	ब	प	चि	स	हिं	स	तु
म	का	ा	र	र	म	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	जू
ता	रा	रे	री	ह्व	का	फा	खा	जू	ई	र	रा	पू	द	ल
नि	को	जो	गो	न	मु	जि	यँ	ने	मनि	क	ज	प	स	ल
हि	रा	मि	स	रि	ग	द	न्मु	ख	म	खि	जि	म	त	जं
सिं	ख	नु	न	को	मि	निज	र्क	ग	धु	ध	सु	का	स	र
गु	ब	म	अ	रि	नि	म	ल	ा	न	ढ़	ती	न	क	भ
ना	पु	व	अ	ा	र	ल	ा	ए	तु	र	न	नु	वै	थ
सि	हुँ	सु	म्ह	रा	र	स	स	र	त	न	ख	ा	ज	ा
र	ा	ा	ला	धी	ा	री	ा	हू	हीं	खा	जू	ई	रा	रे

इस रामशलाका–प्रश्नावली के द्वारा जिस किसी को जब कभी अपने अभीष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम उस व्यक्ति को भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान करना चाहिये।

तदनन्तर श्रद्धा–विश्वास पूर्वक मन से अभीष्ट प्रश्न का चिन्तन करते हुए प्रश्नावली के मनचाहे कोष्ठक में अंगुली या कोई शलाका रख देना चाहिये और उस कोष्ठक में जो अक्षर हो उसे अलग किसी कोरे कागज या स्लेट पर लिख लेना चाहिये। प्रश्नावली के कोष्ठक पर भी ऐसा कोई निशान लगा देना चाहिये जिससे न तो प्रश्नावली गंदी हो और न प्रश्नोत्तर प्राप्त होने तक वह कोष्ठक भूल जाये। अब जिस कोष्ठक का अक्षर लिख लिया गया है, उससे आगे बढ़ना चाहिये तथा उसके नवें कोष्ठक में जो अक्षर पड़े, उसे भी लिख लेना चाहिये। इस प्रकार प्रति नवें अक्षर को क्रम से लिखते जाना चाहिये और तब तक लिखते जाना चाहिये, जब तक उसी पहले कोष्ठक के अक्षर तक अंगुली अथवा शलाका न पहुँच जाये। पहले कोष्ठक का अक्षर जिस कोष्ठक के अक्षर से नवाँ पड़ेगा, वहाँ तक पहुँचते–पहुँचते एक चौपाई पूरी हो जायेगी, ये प्रश्नकर्ता के अभीष्ट प्रश्न का उत्तर होगा। यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि किसी–किसी कोष्ठक में केवल 'आ' की मात्रा (ा) और किसी–किसी कोष्ठक में दो–दो अक्षर हैं। अतः गिनते समय न तो मात्रा वाले कोष्ठक को छोड़ देना चाहिये और न दो अक्षरों वाले कोष्ठक को दो बार गिनना चाहिये। जहाँ मात्रा का कोष्ठक आवे, वहाँ पूर्वलिखित अक्षर के आगे मात्रा लिख लेना चाहिये और जहाँ दो अक्षरों वाला कोष्ठक आवे, वहाँ दोनों अक्षर एक साथ लिख लेना चाहिये।

अब उदाहरण के तौर पर इस रामशलाका प्रश्नावली से किसी प्रश्न के उत्तर में एक चौपाई निकाल दी जाती है। पाठक ध्यान से देखें। किसी ने भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान और अपने प्रश्न का चिन्तन करते हुए यदि प्रश्नावली के * इस चिह्न से संयुक्त 'म' वाले कोष्ठक में अँगुली या शलाका रक्खा और वह ऊपर बताये क्रम के अनुसार अक्षरों को गिन–गिनकर लिखता गया तो उत्तर स्वरूप चौपाई बन जायेगी–

हो इ है सो ई जो रा म * र चि रा खा । को क रि त र क ब ढ़ा व हिं सा षा ।।

यह चौपाई बालकाण्डान्तर्गत शिव और पार्वती के संवाद में है। प्रश्नकर्ता को इस उत्तर स्वरूप चौपाई से यह आशय निकालना चाहिये कि कार्य होने में संदेह है, अतः उसे भगवान् पर छोड़ देना श्रेयष्कर है।

1. सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में श्री सीताजी के गौरीपूजन के प्रसंग में है। गौरी जी ने श्रीसीता जी को आशीर्वाद दिया है।

फल– प्रश्नकर्ता का प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा।

2. प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।।

स्थान– यह चौपाई सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– भगवान का स्मरण करके कार्यारम्भ करो, सफलता मिलेगी।

3. उघरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।।
स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड के आरम्भ में सत्संग वर्णन के प्रसंग में है।

फल– इस कार्य में भलाई नहीं है। कार्य की सफलता में संदेह है।

4. बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।
स्थान– यह चौपाई भी बालकाण्ड के आरम्भ में ही सत्संग वर्णन के प्रसंग की है।

फल– खोटे मनुष्यों का संग छोड़ दो। कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

5. मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।
स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में संत–समाज रूपी तीर्थ के वर्णन में है।

फल– प्रश्न उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

6. गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।
स्थान– यह चौपाई श्रीहनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– प्रश्न बहुत श्रेष्ठ है। कार्य सफल होगा।

7. बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा।।
स्थान– यह चौपाई लंकाकाण्ड में रावण की मृत्यु के पश्चात् मन्दोदरी के विलाप के प्रसंग में है।

फल– कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

8. सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।।
स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में पुष्प वाटिका से पुष्प लाने पर विश्वामित्रजी का आशीर्वाद है।

फल– प्रश्न बहुत उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

इस प्रकार रामशलाका–प्रश्नावली से कुल नौ चौपाइयाँ बनती हैं; जिनमें सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तर संन्निहित हैं।

अहंकार में तीनों गए धन, वैभव और वंश
विश्वास न हो तो देख लें कथा रावण, कौरव और कंस।

संस्कार ही अपराध रोक सकते हैं, सरकार नहीं।

विक्रम संवत् 2081 (सन् 2024—25) की प्रमुख तिथियाँ : एक दृष्टि में

मास / पक्ष	गणेशचतुर्थी	एकादशीव्रत (स्मार्त)	प्रदोषव्रत	मास शिवरात्रि	अमावस्या	व्रत की पूर्णिमा	संक्रान्ति
चैत्र शुक्ल		19.04.24	21.04.24			23.04.24	13.04.24
वैशाख कृष्ण	27.04.24	04.05.24	05.05.24	06.05.24	08.05.24		
वैशाख शुक्ल		19.05.24	20.05.24			23.05.24	14.05.24
ज्येष्ठ कृष्ण	26.05.24	02.06.24	04.06.24	04.06.24	06.06.24		
ज्येष्ठ शुक्ल		18.06.24	19.06.24			21.06.24	14.06.24
आषाढ़ कृष्ण	25.06.24	02.07.24	03.07.24	04.07.24	05.07.24		
आषाढ़ शुक्ल		17.07.24	19.07.24			20.07.24	16.07.24
श्रावण कृष्ण	24.07.24	31.07.24	01.08.24	02.08.24	04.08.24		
श्रावण शुक्ल	08.08.24	16.08.24	17.08.24			19.08.24	16.08.24
भाद्रपद कृष्ण	22.08.24	29.08.24	31.08.24	01.09.24	03.09.24		
भाद्रपद शुक्ल	07.09.24	14.09.24	15.09.24			17.09.24	16.09.24
आश्विन कृष्ण	21.09.24	28.09.24	30.09.24	30.09.24	02.10.24		
आश्विन शुक्ल		14.10.24	15.10.24			16.10.24	17.10.24
कार्तिक कृष्ण	20.10.24	28.10.24	29.10.24	30.10.24	01.11.24		
कार्तिक शुक्ल	18.11.24	12.11.24	13.11.24			15.11.24	16.11.24
मार्गशीर्ष कृष्ण		26.11.24	28.11.24	29.11.24	01.12.24		
मार्गशीर्ष शुक्ल	05.12.24	11.12.24	13.12.24			14.12.24	15.12.24
पौष कृष्ण	18.12.24	26.12.24	28.12.24	29.12.24	30.12.24		
पौष शुक्ल		10.01.25	11.01.25			13.01.25	14.01.25
माघ कृष्ण	17.01.25	25.01.25	27.01.25	27.01.25	29.01.25		
माघ शुक्ल	02.02.25	08.02.25	10.02.25			12.02.25	12.02.25
फाल्गुन कृष्ण	16.02.25	24.02.25	25.02.25	26.02.25	27.02.25		
फाल्गुन शुक्ल		10.03.25	11.03.25			13.03.25	14.03.25
चैत्र कृष्ण	17.03.25	25.03.25	27.03.25	27.03.25	29.03.25		

विक्रम संवत् 2081 वर्ष के व्रत एवं त्यौहारों की सूची

शुभ संवत् 2081 शाके 1946 राजा मंगल मन्त्री शनि समय वास धोबी गृहे वाहन वृषभ रोहिणी का निवास तटे संवत्सर का नाम काल

09 अप्रैल से 23 अप्रैल 2024 तक (चैत्रमासे शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	मंगलवार	09.04.2024	चैत्र नवरात्रारम्भ, कलशस्थापना, गौतम जयन्ती, आर्यसमाज स्थापना दिवस, पंचक समाप्त 7.31
द्वितीया	बुधवार	10.04.2024	सिंधारा दोज, झूलेलाल जयन्ती, रेलसप्ताह प्रारंभ
तृतीया	गुरुवार	11.04.2024	गणगौरपूजन मेला (राज0) श्रीमत्स्य जयन्ती
चतुर्थी	शुक्रवार	12.04.2024	दमनक चतुर्थी व्रत, सौभाग्य सूचक रोहिणीव्रत
पंचमी	शनिवार	13.04.2024	श्रीपंचमी, हयव्रत 5, श्रीरामजन्मोत्सवारंभ, वैशाखी
षष्ठी	रविवार	14.04.2024	स्कन्दषष्ठी, अम्बेडकर जयन्ती
सप्तमी	सोमवार	15.04.2024	नवपद ओलीप्रा. जैन,
अष्टमी	मंगलवार	16.04.2024	श्रीदुर्गाष्टमी व्रत, अशोकाष्टमी, मनसादेवी, अन्नपूर्णा पूजा
नवमी	बुधवार	17.04.2024	श्रीरामनवमीव्रतोत्सव, श्रीरामचरितमानस जयन्ती
दशमी	गुरुवार	18.04.2024	धर्मराजदशमी, पुरातत्वरक्षण दिवस
एकादशी	शुक्रवार	19.04.2024	एकादशीव्रत सर्वे, लक्ष्मीकान्त डोलोत्सव
द्वादशी	शनिवार	20.04.2024	श्रीविष्णुद्वादशी, हरिदमनोत्सव
त्रयोदशी	रविवार	21.04.2024	प्रदोषव्रत, अनंग 13, श्रीमहावीर जयन्ती (जैन)
चतुर्दशी	सोमवार	22.04.2024	श्रीशिवदमनक 14,बालासुन्दरीदेवी मे.,वसुन्धरारक्षण दिवस
पूर्णिमा	मंगलवार	23.04.2024	चैत्री पूर्णिमा व्रत, श्रीहनुमानजयंती, वैशाखस्नान प्रारम्भ

24 अप्रैल से 08 मई 2024 तक (वैशाख कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
द्वितीया	गुरुवार	25.04.2024	अगस्त्तताराअस्त
तृतीया	शनिवार	27.04.2024	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.23
चतुर्थी	रविवार	28.04.2024	शुक्रास्त पूर्वस्यां
पंचमी	सोमवार	29.04.2024	गुरुतेगबहादुरजयंती, सोमपंचमी
सप्तमी	बुधवार	01.05.2024	कालाष्टमीव्रत, श्रमिक दिवस, श्रीशीतलापूजा, बूढ़ाबसोड़ा
नवमी	गुरुवार	02.05.2024	पंचक प्रारम्भ 14.29, श्रीचण्डिकानवमी,
दशमी	शुक्रवार	03.05.2024	सौरऊर्जादिवस
एकादशी	शनिवार	04.05.2024	वरूथिनीएकादशीव्रत सर्वे, श्रीबल्लभाचार्य जयंती
द्वादशी	रविवार	05.05.2024	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	सोमवार	06.05.2024	पंचक समाप्त 17.42, मासशिवरात्रिव्रत
चतुर्दशी	मंगलवार	07.05.2024	कविटैगोरजयन्ती
अमावस्या	बुधवार	08.05.2024	श्रीशुकदेवमुनिजयन्ती, मदर्स डे

09 मई से 23 मई 2024 तक (वैशाख शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	09.05.2024	देवदामोदरतिथि असम ऋषिपाराशर जयन्ती, गुरुअंगददेव जयन्ती चन्द्रदर्शन, शिवाजी जयन्ती, रोहिणी व्रत
तृतीया	शुक्रवार	10.05.2024	अक्षयतृतीया, श्रीपरशुराम जयन्ती, चन्दनयात्रा
पंचमी	रविवार	12.05.2024	आदिशंकराचार्य जयन्ती, श्रीसूरदास जयन्ती
षष्ठी	सोमवार	13.05.2024	श्रीरामानुजाचार्य जयन्ती, एकतादिवस
सप्तमी	मंगलवार	14.05.2024	श्रीगंगासप्तमी, वृष में सूर्य
अष्टमी	बुधवार	15.05.2024	देवीबगलामुखी जयन्ती, विश्व परिवार दिवस
अष्टमी	गुरुवार	16.05.2024	श्रीजानकीनवमी, राष्ट्रीय डेंगू दिवस
दशमी	शनिवार	18.05.2024	श्रीमहावीरकेवलज्ञान जैन, बाबा जयगुरुदेव पुण्यः
एकादशी	रविवार	19.05.2024	मोहिनीएकादशीव्रत सर्वे
द्वादशी	सोमवार	20.05.2024	सोम प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	मंगलवार	21.05.2024	श्रीनृसिंह जयन्ती, देवीछिन्नमस्ता जयन्ती
चतुर्दशी	बुधवार	22.05.2024	कूर्म जयन्ती, गुरुअमरदास जयंती
पूर्णिमा	गुरुवार	23.05.2024	सत्यव्रत, बुद्धपूर्णिमा, बुद्ध जयन्ती, पीपलपूजनं

24 मई से 06 जून 2024 तक (ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व—त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	24.05.2024	जिनवरव्रत प्रारम्भ (जैन)
द्वितीया	शनिवार	25.05.2024	श्रीनारद जयन्ती, वीणादान, वृन्दावन परिक्रमा, वनविहार
तृतीया	रविवार	26.05.2024	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.13
पंचमी	मंगलवार	28.05.2024	बुढ़वामंगल, वीर सावरकर जयन्ती
षष्ठी	बुधवार	29.05.2024	पंचक प्रारम्भ 20.03
सप्तमी	गुरुवार	30.05.2024	कालाष्टमीव्रत
अष्टमी	शुक्रवार	31.05.2024	संतदादूदयाल पुण्यः, तम्बाकू निषेध दिवस
एकादशी	रविवार	02.06.2024	पंचक समाप्त 25.39, अपराएकादशीव्रत, स्मार्त्त रुकमणी हरण लीला, बाबा बालकनाथ जयन्ती
त्रयोदशी	मंगलवार	04.06.2024	भौम प्रदोषव्रत, मासशिवरात्रि, सावित्रीव्रतारम्भः
चतुर्दशी	बुधवार	05.06.2024	पर्यावरण दिवस सघनवृक्षसंकल्पे, फलाहारिणी कालिका पूजा
अमावस्या	गुरुवार	06.06.2024	भावुकाअमावस्या, रोहिणीव्रत, श्रीशनिजयन्ती, वटसावित्रीव्रत पूजन,

07 जून से 22 जून 2024 तक (ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व—त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	07.06.2024	करवीरव्रत, दशाश्वमेधघाट स्नानारंभ, चन्द्रदर्शन
द्वितीया	शनिवार	08.06.2024	रम्भातीजव्रत, स्पष्ट चन्द्रदर्शन
तृतीया	रविवार	09.06.2024	श्रीमहाराणा प्रताप जयन्ती
चतुर्थी	सोमवार	10.06.2024	शहीदीगुरुअर्जुनदेव
पंचमी	मंगलवार	11.06.2024	श्रुतिपंचमी (जैन), बुढ़वामंगल
षष्ठी	बुधवार	12.06.2024	अरण्यषष्ठी, विन्ध्यवासिनी पूजा, जामित्रषष्ठी, बालश्रम निषेध दिवस
सप्तमी	गुरूवार	13.06.2024	बड़पूजा (भिंड)
अष्टमी	शुक्रवार	14.06.2024	श्रीदुर्गाष्टमी, देवी धूमावतीतीज, मेला क्षीरभवानी,रक्तदान दिवस
नवमी	शनिवार	15.06.2024	श्रीमहेशनवमी, दहीचूड़ामहोत्सवारंभ
दशमी	रविवार	16.06.2024	श्रीगंगादशहरा, बटुकभैरव जयन्ती, रामेश्वरप्रतिष्ठा दिवस, आचार्य श्रीरामशर्मा पुण्यः
एकादशी	सोमवार	17.06.2024	निर्जलाएकादशीव्रत सर्वे, भीमसैनी ग्यारस व्रत
द्वादशी	मंगलवार	18.06.2024	रानीझाँसीपुण्यः एकादशी सठियागई
त्रयोदशी	गुरुवार	19.06.2024	प्रदोषव्रत, चम्पक द्वादशी, मेला खाटूश्याम, सावित्री व्रतारम्भ
चतुर्दशी	शुक्रवार	21.06.2024	वट्सावित्री व्रतपूर्ण, सत्यव्रत पूर्णिमा, योग दिवस
पूर्णिमा	शनिवार	22.06.2024	संतकबीर जयंती, बाबाअमरनाथपूजा, श्रीजगन्नाथस्नान यात्रा

23 जून से 5 जुलाई 2024 तक (आषाढ़ कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व—त्यौहार
द्वितीया	रविवार	23.06.2024	गुरुहरगोविन्द जयन्ती
चतुर्थी	मंगलवार	25.06.2024	पंचक प्रारम्भ 25.48, चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 22.29
पंचमी	बुधवार	26.06.2024	अहिल्याहोलकर जयन्ती, विश्वनशा विरोध दिवस
सप्तमी	शुक्रवार	28.06.2024	कालाष्टमी व्रत
नवमी	रविवार	30.06.2024	पंचक समाप्त 7.33
दशमी	सोमवार	01.07.2024	डॉक्टर्सडे
एकादशी	मंगलवार	02.07.2024	योगिनीएकादशीव्रत सर्वे, बाबा देवराहापुण्यः
द्वादशी	बुधवार	03.07.2024	प्रदोशव्रत, रोहिणी व्रत
त्रयोदशी	गुरुवार	04.07.2024	मासशिवरात्रि, श्रीविवेकानंद पुण्यः
अमावस्या	शुक्रवार	05.07.2024	अमापुण्यः शुक्रोदय पश्चिमायां 27.14
06 जुलाई से 21 जुलाई 2024 तक (आषाढ़ शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व—त्यौहार
प्रतिपदा	शनिवार	06.07.2024	गुप्तनवरात्रविधान (मिथिलांचल)
द्वितीया	रविवार	07.07.2024	मनोरथ द्वितीया, चन्द्रदर्शनम, श्रीजगन्नाथजी रथयात्रापुरी
तृतीया	सोमवार	08.07.2024	गुड़ीचाउत्सव (पुरी), श्रीबल्लभाचार्य पुण्यः
तृतीया	मंगलवार	09.07.2024	अंगार की चतुर्थी
चतुर्थी	बुधवार	10.07.2024	स्वामीविवेकानंद स्मृतिदिवस
पंचमी	गुरुवार	11.07.2024	कौमारिकीषष्ठी, द्वारकाधीश पाटोत्सव, जनसंख्या दिवस
षष्ठी	शुक्रवार	12.07.2024	विवस्वत सप्तमी सूर्यपूजा, महावीरस्वामी गर्भकल्याणक जैन
सप्तमी	शनिवार	13.07.2024	स्वामीकल्याणदेवपुण्यः शुक्रताल
अष्टमी	रविवार	14.07.2024	अष्ट्राह्निकाप्रा जैन, देवीपार्वती जयन्ती
नवमी	सोमवार	15.07.2024	भड्डली नवमी, मेला शरीफ भवानी
दशमी	मंगलवार	16.07.2024	उल्टारथ बहुडायात्रा (पुरी)
एकादशी	बुधवार	17.07.2024	शयनीएकादशीव्रत, देवशयनोत्सव
त्रयोदशी	शुक्रवार	19.07.2024	प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	शनिवार	20.07.2024	चौमासी 14, कोकिलाव्रत, सत्यव्रत
पूर्णिमा	रविवार	21.07.2024	गुरुपूर्णिमा, व्यासपूजा, शिवशयनोत्सव

22 जुलाई से 04 अगस्त 2024 तक (श्रावण कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	22.07.2024	अशून्यशयनव्रतारम्भः श्रावण सोमवार व्रत।
द्वितीया	मंगलवार	23.07.2024	लोकमान्य तिलक जयंती, चन्द्रशेखर आजाद जयंती, पंचक प्रारम्भ 9.18
तृतीया	बुधवार	24.07.2024	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.40
पंचमी	गुरुवार	25.07.2024	नागपंचमी, श्रीअखण्डानन्द जयंती
सप्तमी	शनिवार	27.07.2024	पंचक समाप्त 12.59
अष्टमी	रविवार	28.07.2024	कालाष्टमी व्रत
नवमी	सोमवार	29.07.2024	गुरु हरकिशन जयंती, वाद्यदिवस, श्रावण सोमवार व्रत
दशमी	मंगलवार	30.07.2024	रोहिणी व्रत
एकादशी	बुधवार	31.07.2024	कामिकाएकादशीव्रत सर्वे
द्वादशी	गुरुवार	01.08.2024	प्रदोषव्रत, श्रीतिलक पुण्यः
त्रयोदशी	शुक्रवार	02.08.2024	मास शिवरात्रिव्रत
चतुर्दशी	शनिवार	03.08.2024	मेलारामतीर्थमंदिर जगन्नाथपुर झारखण्ड
अमावस्या	रविवार	04.08.2024	हरियाली अमावस्या, फ्रेंडशिप डे

05 अगस्त से 19 अगस्त 2024 तक (श्रावण शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	05.08.2024	नक्तव्रतारम्भ, चन्द्रदर्शन, श्रावण सोमवार व्रत
द्वितीया	मंगलवार	06.08.2024	सिंधारा 2, स्वामीकरपात्री जयंती
तृतीया	बुधवार	07.08.2024	मधुश्रवातीज, टैगोरपुण्यः, हरियाली तीज
चतुर्थी	गुरुवार	08.08.2024	विनायक चतुर्थी, वरद 4, श्रवणतप जैन
पंचमी	शुक्रवार	09.08.2024	नाग पंचमी, श्री अमरनाथयात्रारम्भ, भारतीय क्रांति दिवस
षष्ठी	शनिवार	10.08.2024	वर्णश्रृयाल षष्ठी, श्रीकल्किजयंती
सप्तमी	रविवार	11.08.2024	श्रीतुलसीदासजयंती
सप्तमी	सोमवार	12.08.2024	श्री दुर्गाष्टमी मेला सिंध, मे0 नयना देवी चिंतपूर्णी, श्रावण सोमवार व्रत
दशमी	गुरुवार	15.08.2024	स्वतंत्रतादिवस 78वाँ, ध्वजारोहण
एकादशी	शुक्रवार	16.08.2024	पवित्रा एकादशीव्रतसर्वे
द्वादशी	शनिवार	17.08.2024	श्री विष्णुपवित्रार्पण, प्रदोषव्रत, दधित्यागव्रतारम्भ
चतुर्दशी	रविवार	18.08.2024	ह्यग्रीवोत्पत्तिदर्शन, भदैनी मंदिर
पूर्णिमा	सोमवार	19.08.2024	पंचक प्रारम्भ 18.56, सत्यव्रतपूर्णिमा, रक्षा बंधन, श्रावणी कर्म, श्रीगायत्री जं0, संस्कृतदिवस, श्रावण सोमवार व्रत, कोकिला व्रत

20 अगस्त से 3 सितम्बर 2024 तक (भाद्रपद कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	मंगलवार	20.08.2024	श्रवणतप पूर्ण
द्वितीया	बुधवार	21.08.2024	अशून्यशयनव्रतपूर्ण, भीमचण्डी, विन्ध्याजयन्ती, बुजुर्ग दिवस
तृतीया	गुरुवार	22.08.2024	बहुलाचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय 20.45
चतुर्थी	शुक्रवार	23.08.2024	पंचक समाप्त 19.53, रक्षापंचमी, माधवदेवतिथि असम
पंचमी	शनिवार	24.08.2024	हलचन्दनषष्ठी व्रत, चन्द्रोदय 21.56, ललहीछटि,
सप्तमी	रविवार	25.08.2024	द्रोणमेलादनकौर प्रारम्भ
अष्टमी	सोमवार	26.08.2024	श्रीकृष्ण जन्माष्टमीव्रत ोत्सवः सर्वे, चन्द्रोदय 23.22, संतज्ञानेश्वर जयन्ती
नवमी	मंगलवार	27.08.2024	गोगा नवमी, नन्दोत्सवः नन्दगाँव–वरसाना
एकादशी	गुरुवार	29.08.2024	अजाएकादशीव्रत, अगस्त तारा उदय
द्वादशी	शुक्रवार	30.08.2024	गोवत्सपूजा, बछबारस, पर्यूशण पर्वारम्भ जैन
त्रयोदशी	शनिवार	31.08.2024	शनिप्रदोष व्रत, श्रीकृष्ण जी छटी पूजन
चतुर्दशी	रविवार	01.09.2024	अघोरा चौदस, कैलाशयात्रा कश्मीर, मास शिवरात्रि
अमावस्या	सोमवार	02.09.2024	सोमोती मावस, कुशोत्पाटिनी अमावस्या
अमावस्या	मंगलवार	03.09.2024	पिठौरी 30, सतीपूजा अग्रवंशे, कल्पसूत्रपाठ जैन

04 सितम्बर से 18 सितम्बर 2024 तक (भाद्रपद शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	बुधवार	04.09.2024	नक्तव्रतारम्भ, चन्द्रदर्शन
द्वितीया	गुरुवार	05.09.2024	सामवेदीयउपाकर्म, तेलाधारतप जैन, शिक्षक दिवस, डॉ0 राधाकृष्ण जयंती, विश्व शांति दिवस
तृतीया	शुक्रवार	06.09.2024	हरितालिकातीज व्रत, श्रीवराह जयन्ती
चतुर्थी	शनिवार	07.09.2024	श्रीगणेशजन्मोत्सव, पत्थर चौथ,कलंक चौथ, चन्द्रदर्शन निषेध
पंचमी	रविवार	08.09.2024	ऋषिपंचमी, जैन संवत्सरी, क्षमावाणी पर्व, विश्व साक्षरता दि0
षष्ठी	सोमवार	09.09.2024	सूर्यषष्ठी व्रत, बलदेवछटि, हलधर 6
सप्तमी	मंगलवार	10.09.2024	मुक्ताभरण संतान सप्तमी, लक्ष्मीव्रतारम्भ
अष्टमी	बुधवार	11.09.2024	श्रीराधाष्टमी व्रतोत्सव, श्रीदधीचजयन्ती, दूर्वाष्टमीव्रत, बिनोवाभावे जयंती
नवमी	गुरुवार	12.09.2024	श्रीनंदानवमी जन्मोत्सव उदासीन संप्रदाय,भागवत सप्ताह प्रा0
दशमी	शुक्रवार	13.09.2024	श्रीनवलदुर्गमेला, रामदेवजी
एकादशी	शनिवार	14.09.2024	पद्माजलझूलनीएकादशीव्रत सर्वे, फूलडोलमेला, हिंदी दिवस
द्वादशी	रविवार	15.09.2024	पंचक प्रारम्भ 20.40, श्रीवामन जयन्ती, दधित्याग व्रत पूर्ण
त्रयोदशी	सोमवार	16.09.2024	डोंगालीला बरसाना
चतुर्दशी	मंगलवार	17.09.2024	अनन्त चतुर्दशी, श्रीगणेशविसर्जन, प्रौष्ठपदी 15, विश्वकर्मा पूजा, महालयारम्भश्राद्ध प्रारम्भ
पूर्णिमा	बुधवार	18.09.2024	कुमारी संध्या पूजनारम्भ प्रतिपदा श्राद्ध

19 सितम्बर से 02 अक्टूबर 2024 तक (आश्विन कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	बुधवार	18.09.2024	प्रतिपदाक्षय, पितरपक्षारम्भः, प्रतिपदा श्राद्धं
द्वितीया	गुरुवार	19.09.2024	पंचक समाप्त 29.14, द्वितीया श्राद्धं
तृतीया	शुक्रवार	20.09.2024	तृतीया श्राद्ध,
चतुर्थी	शनिवार	21.09.2024	चतुर्थी श्राद्ध, चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 20.32
पंचमी	रविवार	22.09.2024	पंचमी का श्राद्ध, दिन–रात बराबर
षष्ठी	सोमवार	23.09.2024	षष्ठी का श्राद्ध, रोहिणीव्रत
सप्तमी	मंगलवार	24.09.2024	सप्तमी का श्राद्ध, कालाष्टमीव्रत
अष्टमी	बुधवार	25.09.2024	अष्टमी का श्राद्ध, जीवितपुत्रिकाव्रत,
नवमी	गुरुवार	26.09.2024	मातृनवमी श्राद्ध, सौभाग्यवतीनां श्राद्ध
दशमी	शुक्रवार	27.09.2024	दशमी श्राद्ध, विश्व पर्यटक दिवस
एकादशी	शनिवार	28.09.2024	इन्दराएकादशीव्रत सर्वे, श्रीरामबरात मेला आगरा, एकादशीश्राद्ध
द्वादशी	रविवार	29.09.2024	सन्यासीनां द्वादशीश्राद्ध
त्रयोदशी	सोमवार	30.09.2024	सोमप्रदोषव्रत, त्रयोदशीश्राद्धं, मास शिवरात्रि व्रत
चतुर्दशी	मंगलवार	01.10.2024	असाम्यकदुर्मरण श्राद्ध–चतुर्दशीश्राद्ध, देवी कात्यायनी जयन्ती
अमावस्या	बुधवार	02.10.2024	सर्वपितृअमावस्याश्राद्ध, गांधी, शास्त्री ज0, भूलेबिसरों का श्राद्ध

03 अक्टूबर से 17 अक्टूबर 2024 तक (आश्विन शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	03.10.2024	शारदीयनवरात्रारम्भः, कलशस्थापन,मातामहश्राद्ध, श्रीअग्रसेन ज0
द्वितीया	शुक्रवार	04.10.2024	चन्द्रदर्शन, पशुकल्याण दिवस
तृतीया	शनिवार	05.10.2024	सिन्दूरतृतीया, वरिष्ठनागरिक दिवस
चतुर्थी	सोमवार	07.10.2024	उपांगललिता 5 व्रत
पंचमी	मंगलवार	08.10.2024	वायुसेनादिवस
षष्ठी	बुधवार	09.10.2024	श्रीसरस्वतीआवाहनं, नवपद ओली प्रा0, विश्वडाकदिवस
सप्तमी	गुरुवार	10.10.2024	जैनमुनिपुष्कर जयन्ती, सरस्वती पूजनं, बलिदानं
अष्टमी	शुक्रवार	11.10.2024	श्रीदुर्गाष्टमी पूजा, विशेषबलिदानं
नवमी	शनिवार	12.10.2024	महानवमी, विजया 10, रावणदाह, दशहरा मे0 नवरात्र समाप्त
दशमी	रविवार	13.10.2024	पंचक प्रारंभ 15.39, भरत मिलाप, पापांकुशाएका0व्रत स्मार्त्त
एकादशी	सोमवार	14.10.2024	पापांकुशाएकादशीव्रत वैष्णावानां
त्रयोदशी	मंगलवार	15.10.2024	भौमप्रदोषव्रत
चतुर्दशी	बुधवार	16.10.2024	शाकुंभरीदेवीदर्शन मेला सहारनपुर, कोजागरीव्रत, शरदपूनो, विश्व खाद्य दिवस
पूर्णिमा	गुरुवार	17.10.2024	पंचक समाप्त 16.19, रासपूर्णिमा, क्षीरशयनोत्सव कार्तिक स्नान प्रा0, खीरभोगअर्पण, महर्षिवाल्मीकि जयन्ती

18 अक्टूबर से 01 नवम्बर 2024 तक (कार्तिक कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	18.10.2024	कृषकभूमिपूजा
द्वितीया	शनिवार	19.10.2024	गुरुरामदासजयंती
तृतीया	रविवार	20.10.2024	करवाचौथव्रत चन्द्रोदय 19.56, रोहिणीव्रत
अष्टमी	गुरुवार	24.10.2024	अहोई अष्टमीव्रत पूजा, चन्द्रोदय 23.57, कालाष्टमी
एकादशी	रविवार	27.10.2024	रमाएकादशीव्रत स्मार्त्त
एकादशी	सोमवार	28.10.2024	रमाएकादशीव्रत वैष्णव
द्वादशी	मंगलवार	29.10.2024	गोवत्सद्वादशी, प्रदोशव्रत, यमदीपदानं
त्रयोदशी	बुधवार	30.10.2024	धनतेरस, श्रीधन्वन्तरी जयंती, आयुर्वेद दिवस मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	गुरुवार	31.10.2024	नरक चतुर्दशी, स्वामीरामतीर्थजन्म, सरदार पटेलजयंती, राष्ट्रीयएकतादिवस
अमावस्या	शुक्रवार	01.11.2024	श्रीमहालक्ष्मीपूजन (दीपावली), महावीरनिर्वाण दिवस, महर्षि दयानंदपुण्यः
02 नवम्बर से 15 नवम्बर 2024 तक (कार्तिक शुक्ल पक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शनिवार	02.11.2024	अन्नकूट, गोवर्धनपूजा, बलिपूजा, गोक्रीड़ा
द्वितीया	रविवार	03.11.2024	चन्द्रदर्शन, भाईदूज, यमद्वितीया, विश्वकर्मा पूजा
पंचमी	बुधवार	06.11.2024	सौभाग्यएवंज्ञान पंचमी, नहायखाय छटि महापर्व प्रारम्भ
षष्ठी	गुरुवार	07.11.2024	सूर्यषष्ठी, डालाछटिपूजा
सप्तमी	शुक्रवार	08.11.2024	सुबहकाअर्घ्य, सहस्त्रार्जुन जयंती, अष्ट्रान्हिका प्रारम्भ जैन
अष्टमी	शनिवार	09.11.2024	पंचक प्रारम्भ 23.23, गोपाष्टमीपर्वगोपूजन
नवमी	रविवार	10.11.2024	अक्षय–आंवला–कूष्माण्डनवमी, जुगलजोड़ीपरिक्रमा वृन्दावन
दशमी	सोमवार	11.11.2024	आशादशमी, आरोग्य व्रत, कंसवध लीला मथुरा, भीष्म पं0प्रा.
एकादशी	मंगलवार	12.11.2024	देवप्रबोधिनीएकादशीव्रत सर्वो (देवउठान) तुलसी विवाह
द्वादशी	बुधवार	13.11.2024	पंचक समाप्त 27.10, हरिवासर, प्रदोष व्रत, श्रीकालीदासज0
त्रयोदशी	गुरुवार	14.11.2024	जैनदिवाकरजयन्ती, बैकुण्ठ चतुर्दशी, चौमासी चौदस जैन, बालदिवस
पूर्णिमा	शुक्रवार	15.11.2024	कार्तिकीपूर्णिमापर्व, पुष्करराजरेणुकातीर्थ, स्नानपूर्ण, भीष्मपंचक समाप्त, श्रीगुरुनानक जयंती, गौरव दिवस, रथयात्राजैन, चतुर्मासपूर्ण, जनजातीयगौरव दिवस

16 नवम्बर से 01 दिसम्बर 2024 तक (मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शनिवार	16.11.2024	मंदिरों में देवदर्शन, रोहिणी व्रत
द्वितीया	रविवार	17.11.2024	लाला लाजपतरायपुण्यः
तृतीया	सोमवार	18.11.2024	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 19.35
चतुर्थी	मंगलवार	19.11.2024	इन्द्राजी जयंती
पंचमी	बुधवार	20.11.2024	श्रीमायानन्दचैतन्यजयंती, उत्सव दिवस
अष्टमी	शनिवार	23.11.2024	श्रीमहाकाल भैरवाष्टमी
दशमी	सोमवार	25.11.2024	श्रीमहावीरस्वामी दीक्षाकल्याणक
एकादशी	मंगलवार	26.11.2024	उत्पत्तिएकादशीव्रत स्मार्त्त, संविधान दिवस
द्वादशी	बुधवार	27.11.2024	उत्पत्तिएकादशीव्रत निम्बार्क
त्रयोदशी	गुरुवार	28.11.2024	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	शुक्रवार	29.11.2024	मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	शनिवार	30.11.2024	श्रीबालाजीजयंती
अमावस्या	रविवार	01.12.2024	अमापुण्यः

02 दिसम्बर से 15 दिसम्बर 2024 तक (मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष) हेमन्तऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	02.12.2024	चन्द्रदर्शन
द्वितीया	बुधवार	04.12.2024	नौसेना दिवस
चतुर्थी	गुरुवार	05.12.2024	वैनायकीचौथव्रत
पंचमी	शुक्रवार	06.12.2024	पंचक प्रारंभ 29.3, श्रीपंचमी, श्रीरामजानकी विवाहोत्सव, श्रीबांकेबिहारी प्राक्टयोत्सव, अम्बेडकर पुण्य, नागपंचमी,
षष्ठी	शनिवार	07.12.2024	स्कन्दषष्ठी, चम्पाषष्ठी, सशस्त्रसेना दिवस
सप्तमी	रविवार	08.12.2024	मित्रसप्तमी, नरसीमेहता जयंती
अष्टमी	सोमवार	09.12.2024	नन्दिनीनवमी, जैनदिवाकरचौथ पुण्यः
दशमी	मंगलवार	10.12.2024	दशादित्यव्रत, मानवाधिकार दिवस
एकादशी	बुधवार	11.12.2024	मोक्षदाएकादशीव्रत स्मार्त्त, श्रीगीताजयंती
द्वादशी	गुरुवार	12.12.2024	अखण्डाद्वादशी
त्रयोदशी	शुक्रवार	13.12.2024	प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	शनिवार	14.12.2024	सत्यव्रत, रोहिणीव्रत, पिशाचमोचन श्राद्ध
पूर्णिमा	रविवार	15.12.2024	पूर्णिमा पुण्यः, श्रीदत्तात्रेयजयंती, श्रीविद्याजयंती, पटेलपुण्यः अन्नपूर्णा जयंती।

16 दिसम्बर से 30 दिसम्बर 2024 तक (पौष कृष्ण पक्ष) हेमन्तऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	16.12.2024	धनुखरमासारम्भः, विजय दिवस
तृतीया	बुधवार	18.12.2024	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 20.29
पंचमी	शुक्रवार	20.12.2024	आ. तुलसीदीक्षा दिवस
सप्तमी	रविवार	22.12.2024	कालाष्टमीव्रत
अष्टमी	सोमवार	23.12.2024	अष्टकाश्राद्ध, श्रद्धानंद बलिदान, राष्ट्रीय किसान दिवस
नवमी	मंगलवार	24.12.2024	उपभोक्ता दिवस
दशमी	बुधवार	25.12.2024	श्रीसंघपार्श्वनाथचन्द्रप्रभु जयंती, क्रिसमस डे, पं0 मदनमोहनमालवीय जयंती, श्री अटल जयंती
एकादशी	गुरुवार	26.12.2024	सफलाएकादशीव्रत सर्वे, वीरबालक दिवस, कल्पवास प्रारम्भ प्रयागराज
त्रयोदशी	शनिवार	28.12.2024	शनिप्रदोषव्रत, बाबा नागपाल पुण्यः
चतुर्दशी	रविवार	29.12.2024	श्रीजयप्रभविजय पुण्यः, त्रिस्तुतिजैन, मासशिवरात्रि
अमावस्या	सोमवार	30.12.2024	सोमोती मावस, पौषीदेव अमावस्यापुण्यः
31 दिसम्बर से 13 जनवरी 2025 तक (पौष शुक्ल पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
द्वितीया	बुधवार	01.01.2025	चन्द्रदर्शन, खिचड़ीमहोत्सव प्रारम्भ वृन्दावन
तृतीया	गुरुवार	02.01.2025	श्री यतीन्द्रसूरीश्वरपुण्यः त्रिस्तुति जैन
चतुर्थी	शुक्रवार	03.01.2025	पंचक प्रारम्भ 10.45
पंचमी	शनिवार	04.01.2025	गरुड़गोविन्द (मथुरा)
सप्तमी	सोमवार	06.01.2025	गुरुगोविन्दसिंह जयंती, श्रीनंदबाबा ज.,पत्रकार दिवस
अष्टमी	मंगलवार	07.01.2025	पंचक समाप्त 17.49
दशमी	गुरुवार	09.01.2025	खरतरगच्छ जैन, प्रवासीभारतीय दिवस
एकादशी	शुक्रवार	10.01.2025	पुत्रदाएकादशीव्रत सर्वे, हिंदी दिवस, रोहिणीव्रत
द्वादशी	शनिवार	11.01.2025	कल्पवास समाप्त, प्रदोषव्रत, शास्त्रीजीपुण्यः
चतुर्दशी	रविवार	12.01.2025	विवेकानंद जयन्ती, युवा दिवस
पूर्णिमा	सोमवार	13.01.2025	लोहड़ी, पौषीपूर्णिमापुण्यः, माघस्नानारंभः, देवीशाकुम्भरी जयंती

14 जनवरी से 29 जनवरी 2025 तक (माघ कृष्ण पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	मंगलवार	14.01.2025	दशाश्वमेधघाट स्नानारम्भः, पौंगल
द्वितीया	बुधवार	15.01.2025	सेना दिवस
चतुर्थी	शुक्रवार	17.01.2025	श्रीगणेशचतुर्थीव्रत (संकट चौथव्रत) चन्द्रोदय 21.10
सप्तमी	मंगलवार	21.01.2025	श्रीरामानन्दाचार्य जयंती, कालाष्टमी व्रत
अष्टमी	बुधवार	22.01.2025	अष्टका श्राद्ध
नवमी	गुरुवार	23.01.2025	नेताजीसुभाष जयंती, पराक्रम दिवस
एकादशी	शनिवार	25.01.2025	षट्तिलाएकादशीव्रत सर्वे
द्वादशी	रविवार	26.01.2025	शीतलनाथ जयंती जैन, 76वाँ गणतंत्र दिवस
त्रयोदशी	सोमवार	27.01.2025	प्रदोषव्रत, मेरुत्रयोदशी, कल्याणक जैन, मासशिवरात्रि
चतुर्दशी	मंगलवार	28.01.2025	लाला लाजपतराय जयंती
अमावस्या	बुधवार	29.01.2025	मौनीअमावस्या स्नान मेला, प्रयागराज, कुंभमहापर्व का सुयोग्य श्रेष्ठ
30 जनवरी से 12 फरवरी 2025 तक (माघ शुक्ल पक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	30.01.2025	गुप्तनवरात्रिविधान प्रा0, श्रीगांधीजीपुण्यःपंचक प्रा0 18.32
द्वितीया	शुक्रवार	31.01.2025	चन्द्रदर्शन, गुरुहरराय जयंती, बाबालालदयाल जयंती
तृतीया	शनिवार	01.02.2025	गौरी तृतीया, तिल–4 वरद्चतुर्थी
चतुर्थी	रविवार	02.02.2025	वसन्तपंचमी, सरछोटूराम जयंती, श्रीसरस्वती जयंती, होली उत्सव प्रारम्भ ब्रज में
षष्ठी	सोमवार	03.02.2025	पंचक समाप्त 23.16, मन्दारषष्ठी, शीतला 6
सप्तमी	मंगलवार	04.02.2025	अचला सप्तमी, नर्मदा जयंती
अष्टमी	बुधवार	05.02.2025	भीष्माष्टमी श्राद्ध
दशमी	शुक्रवार	07.02.2025	डॉ0 दामोदरप्राक्टयोत्सवः वृन्दावन, रोहिणी व्रत
एकादशी	शनिवार	08.02.2025	जयाएकादशीव्रत सर्वे
द्वादशी	रविवार	09.02.2025	भीष्मद्वादशी
त्रयोदशी	सोमवार	10.02.2025	प्रदोषव्रत, मरूमहोत्सव जैसलमेर, गुरुहरनारायण जयंती
चतुर्दशी	मंगलवार	11.02.2025	श्रीरामचरण स्नेही जयंती, जितेन्द्ररथयात्रा जैन, श्रीभागवतपाठारंभ, सत्यव्रत,
पूर्णिमा	बुधवार	12.02.2025	स्नानादिमाघी पूर्णिमा, गुरुरविदास जयंती, श्री ललिता ज. .

13 फरवरी से 27 फरवरी 2025 तक (फाल्गुन कृष्णपक्ष) शिशिरऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	गुरुवार	13.02.2025	रेडियो दिवस
द्वितीया	शुक्रवार	14.02.2025	वैलेंटाइन डे
चतुर्थी	रविवार	16.02.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय
पंचमी	सोमवार	17.02.2025	मातायशोदा जयंती, महाकाल शिवरात्रारम्भ उज्जैन
षष्ठी	मंगलवार	18.02.2025	महाकालपूजा विशेष, वसंतऋतु प्रारम्भ
सप्तमी	गुरुवार	20.02.2025	कालाष्टमी, अष्टका श्राद्ध
अष्टमी	शुक्रवार	21.02.2025	श्रीजानकीव्रत, मातृभाषा दिवस
नवमी	शनिवार	22.02.2025	समर्थगुरु रामदासनवमी
दशमी	रविवार	23.02.2025	महर्षिदयानन्द जयंती
एकादशी	सोमवार	24.02.2025	विजयाएकादशीव्रत सर्वे
द्वादशी	मंगलवार	25.02.2025	प्रदोषव्रत
त्रयोदशी	बुधवार	26.02.2025	पंचक प्रारम्भ 28.32, श्रीवैद्यनाथ जयंती, महाशिवरात्रिव्रत,
चतुर्दशी	गुरुवार	27.02.2025	शिवखप्परपूजा, अमापुण्यः
28 फरवरी से 14 मार्च 2025 तक (फाल्गुन शुक्ल पक्ष) वसंतऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	28.02.2025	राष्ट्रीयविज्ञान दिवस
द्वितीया	शनिवार	01.03.2025	चन्द्रदर्शन, फुलेरादूज, श्रीरामकृष्ण परमहंस जयंती
तृतीया	रविवार	02.03.2025	पंचक समाप्त 3038, पं0 लेखराम वीर तृतीया
चतुर्थी	सोमवार	03.03.2025	अविघ्नकरव्रत
सप्तमी	गुरुवार	06.03.2025	सौभाग्यसूचक रोहिणीव्रत
अष्टमी	शुक्रवार	07.03.2025	संतदादूदयाल जयन्ती, होलाष्टक प्रारम्भ, अष्ट्राह्निका प्रारम्भ जैन
नवमी	शनिवार	08.03.2025	लट्ठमार होली बरसाना, विश्वमहिला दिवस
दशमी	रविवार	09.03.2025	लट्ठमार होली नंदगाँव
एकादशी	सोमवार	10.03.2025	आमलकीएकादशीव्रत सर्वे, मेला खाटूश्यामजी (राज0)
द्वादशी	मंगलवार	11.03.2025	गोविन्दद्वादशी, प्रदोषव्रत
चतुर्दशी	गुरुवार	13.03.2025	सत्यव्रत, होलिका दहन
पूर्णिमा	शुक्रवार	14.03.2025	पूर्णिमापुण्यः, चैतन्य महाप्रभु जयंती, छारेंडी, धुलैण्डी, गणगौरपूजाविधान प्रारम्भ (राज0), अष्टका श्राद्ध

चक्रवर्ती सम्राट राजा विक्रमादित्य

15 मार्च से 29 मार्च 2025 तक (चैत्र कृष्ण पक्ष) वसंतऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व–त्यौहार
प्रतिपदा	शनिवार	15.03.2025	वसन्तोत्सव, गणगौर पूजनारम्भ
द्वितीया	रविवार	16.03.2025	संततुकाराम जयन्ती, नौचन्दी मेला (मेरठ)
तृतीया	सोमवार	17.03.2025	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21.18
पंचमी	बुधवार	19.03.2025	श्रीरंग पंचमी
षष्ठी	गुरुवार	20.03.2025	एकनाथषष्ठी
सप्तमी	शुक्रवार	21.03.2025	शीतला पूजन (बासौड़ा)
अष्टमी	शनिवार	22.03.2025	शीतलाष्टमी पूजा, श्रीऋषभदेव जयंती, कालाष्टमी , अष्टका श्राद्ध
नवमी	रविवार	23.03.2025	शहीदीदिवस, भक्त मीराबाई जयंती
दशमी	सोमवार	24.03.2025	दशमाता पूजन
एकादशी	मंगलवार	25.03.2025	पापमोचनीएकादशीव्रत स्मार्त्त
द्वादशी	बुधवार	26.03.2025	पंचक प्रारम्भ 15.8, पापमोचनीएकादशीव्रत वैष्णव
त्रयोदशी	गुरुवार	27.03.2025	रंगतेरस, प्रदोषव्रत, मास शिवरात्रि व्रत, वारुणीपर्व
अमावस्या	शनिवार	29.03.2025	शनैश्चरी अमापुण्यः, चान्द्रवर्षसमाप्त, शनैश्चरीमावस

अयोध्या में 500 वर्ष खूनी संघर्ष के बाद भी मर्यादित तरीके से बना राममंदीर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को समर्पित

कुछ अलग | उत्सव के साथ-साथ हर साल स्मारिका भी निकालती है श्री राम चरित मानस राष्ट्रीय समिति, आज भी सुंदर कांड और अन्य कार्यक्रम होंगे

समिति लगातार 33 वर्ष से श्रीराम जन्मोत्सव मना रही

[illegible]

33 साल से राम जन्मोत्सव मनाती आ रही श्री राम चरित मानस समिति।

[illegible]

1990 में श्री राम चरित मानस राष्ट्रीय समिति का गठन किया गया था

500 लोग संस्था से जुड़े

[illegible]

हिन्दुस्तान, सोमवार, 27 जनवरी 2024

shyamparivar.com

आरती एवं वन्दना

आरती श्री गणेशजी की

जय गणेश, जय गणेश जय गणेश देवा। माता जाकी पार्वती, पिता महादेवा।।
एकदन्त दयावन्त, चार भुजा धारी। मस्तक सिन्दूर सोहे, मूसे की सवारी।। जय गणेश ...।।
अन्धन को आँख देत, कोढ़िन को काया। बाँझन को पुत्र देत, निर्धन को माया।। जय गणेश ...।।
लड्डुन का भोग लगे, सन्त करें सेवा। हार चढ़ें, फूल चढ़ें और चढ़े मेवा।। जय गणेश ...।।
दीनन की लाज रखो शम्भू–सुत वारी। कामना को पूर्ण करो हम बलिहारी।। जय गणेश ...।।

आरती श्रीरामचन्द्रजी की

जगमग जगमग जोत जली है। राम आरती होन लगी है।।
भक्ति का दीपक प्रेम की बाती। आरति संत करें दिन राती।।
आनन्द की सरिता उभरी है। जगमग जगमग जोत जली है।।
कनक सिंहासन सीय समेता। बैठहिं राम होइ चित चेता।।
वाम भाग में जनक लली है। जगमग जगमग जोत जली है।।
आरति हनुमत के मन भावे। राम कथा नित शंकर गावे।।
सन्तों की ये भीड़ लगी है। जगमग जगमग जोत जली है।।

आरती श्रीरामायणजी की

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की।। आरती श्री ...
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीक बिग्यान बिशारद।।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी।। आरती श्री ...
गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की। आरती श्री ...
गावत संतत संभु भवानी। अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुंडि गरुड़ के ही की।। आरती श्री ...
कलिमल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की।। आरती श्री ...

आरती भगवान जगदीश्वर की

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे,
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे।। ॐ जय ....।।
जो ध्यावै फल पावै, दुख विनसै मन का।। स्वामी ....।।
सुख–सम्पति घर आवै, कष्ट मिटै तन का।। ॐ जय ....।।
मात–पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी।। स्वामी ....।।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी।। ॐ जय ....।।
तुम पूरन परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।। स्वामी ....।।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ॐ जय ....।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।। स्वामी ....।।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।। ॐ जय ....।।
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।। स्वामी ....।।
किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमती।। ॐ जय ....।।
दीनबन्धु दुख हरता, तुम ठाकुर मेरे।। स्वामी ....।।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ॐ जय ....।।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।। स्वामी ....।।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।। ॐ जय ....।।
तन, मन, धन, सब कुछ है तेरा।। स्वामी ....।।
तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा।। ॐ जय ....।।
श्यामसुन्दरजी की आरति जो कोई नर गावै।। स्वामी ....।।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावै।। ॐ जय ....।।

आरती सरस्वतीजी की

शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।
जय सरस्वती ज्ञानदायिनी,
कमल हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
ऋद्धि सिद्धि विवेकदायिनी,
कुमति शूल विनाशनी।
देवी मंद सुहास वर्षनी,
हृदय हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
मधुर काव्य कला,
प्रणव नाद विकासिनी।
भगवती संगीत वर दे,
भुवन मानस वासिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।

आरती शिवजी की

कर्पूर गौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

जय शिव ओंकारा प्रभु भज शिव ओंकारा, ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा। ॐ हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै, हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै। ॐ हर हर महादेव।।
दो भुज चारु चतुर्भुज दस भुज ते सोहै, तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहै। ॐ हर हर महादेव।।
अक्षमाला वनमाला मुण्डमाला धारी, चंदन मृगमद सोहै भोले शुभकारी। ॐ हर हर महादेव।।
श्वेताम्बर, पीताम्बर, बाघम्बर अंगे, सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे। ॐ हर हर महादेव।।
कर मध्ये सुकमण्डलु चक्र शूलधारी, सुखकारी दुखहारी जग पालन कारी। ॐ हर हर महादेव।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका, प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका। ॐ हर हर महादेव।।
त्रिगुणस्वामी की आरती जो कोई नर गावै, कहत शिवानन्द स्वामी वांछित फल पावै। ॐ हर हर महादेव।।

आरती श्रीहनुमानजी की

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।।
जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग–दोष जाके निकट न झाँकै।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। सन्तन के प्रभु सदा सहाई।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सिया सुधि लाये।।
लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।
लंका जारि असुर संहारे। सियाराम के काज संवारे।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।
पैठि पताल तोरि जमकारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।
बायें भुजा असुरदल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जै जै जै हनुमान उचारें।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरती करत अंजना माई।।
जो हनुमानजी की आरती गावै। बसि बैकुण्ठ परम पद पावै।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।। आरती ...

आरती सत्यनारायणजी की

ॐ जय लक्ष्मीरमणा, स्वामी जय लक्ष्मीरमणा।
सत्यनारायण स्वामी, जन–पातक–हरणा।। ॐ जय ...
रत्न जटित सिंहासन, अद्‌भुत छवि राजै।
नारद करत निराजन, घण्टा ध्वनि बाजै।। ॐ जय ...
प्रकट भये कलि कारण, द्विज को दरस दियो।
बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो।। ॐ जय. ...
दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी।
चन्द्रचूड़ एक राजा, तिनकी बिपति हरी।। ॐ जय ...
वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।
सो फल भोग्यो प्रभुजी, फिर अस्तुति कीन्हीं।। ॐ जय ...
भाव–भक्ति के कारण, छिन–छिन रूप धर्‌यो।
श्रद्धा धारण कीनीं, तिनको काज सर्‌यो।। ॐ जय ...
ग्वाल–बाल सँग राजा, बन में भक्ति करी।
मनवांछित फल दीन्हों, दीनदयालु हरी।। ॐ जय ...
चढ़त प्रसाद सवायो, कदली फल मेवा।
धूप दीप तुलसी से, राजी सत्यदेवा।। ॐ जय ...
सत्यनारायणजी की आरती, जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी वांछित फल पावै।। ॐ जय ...

आरती अम्बेजी की

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवजी।। ॐ जय अम्बे ...
मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्र वदन नीको।। ॐ जय अम्बे ...
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै।। ॐ जय अम्बे ...
केहरि वाहन राजत, खड्‌ग खपर धारी। सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुख हारी।। ॐ जय अम्बे ...
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर, सम राजत ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
शुम्भ–निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती। धूम्र विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती।। ॐ जय अम्बे ...
चण्ड–मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे। मधु–कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे।। ॐ जय अम्बे ...
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। आगम–निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।। ॐ जय अम्बे ...
चौसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरू। बाजत ताल मृदंगा, अरु बाजत डमरू।। ॐ जय अम्बे ...
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता।। ॐ जय अम्बे ...
भुजा चार अति शोभित, वर–मुद्रा धारी। मनवांछित फल पावत, सेवत नर–नारी।। ॐ जय अम्बे ...
कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती। मालकेतु में राजत, कोटि रतन ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै। कहत शिवानन्द स्वामी, सुख–सम्पति पावै।। ॐ जय अम्बे ...

श्री रामचन्द्रजी की स्तुति

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरण भवभय दारुणम्।
नव कंज लोचन, कंज मुख कर कंज पद कंजारुणम्।।
कंदर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरज सुन्दरम्।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि, नौमि जनक सुतावरम्।।
भजु दीनबंधु दिनेश दानव दैत्य वंश निकंदनम्।
रघुनन्द आनन्दकन्द कौशलचन्द दशरथ–नन्दनम्।।
सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदार अंग विभूषणम्।
आजानु भुज शर चाप धर संग्राम जित खरदूषणम्।।
इति वदति तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनम्।
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खलदल गंजनम्।।
मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।

आरती कुंजबिहारीजी की

आरती कुंज बिहारी की, गिरधर कृष्ण मुरारी की।
गले में बैजन्ती माला, बजावै मुरली मधुर बाला।
श्रवन में कुण्डल झलकाला।
नन्द के आनन्द, मोहन बृजचन्द, परमानन्द, राधिका रमण बिहारी की।। आरती कुंज ...
गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली, भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक,
चन्द्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।। आरती कुंज ...
कनकमय मोर मुकुट विलसै, देवता दर्शन को तरसै।
गगन से सुमन बहुत बरसें, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल छवि गोप कुमारी की।। आरती कुंज ...
जहाँ ते प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणि श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच,
हरै अघ कीच, चरण छवि श्री बनवारी की।। आरती कुंज ...
चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बाजती वृन्दावन वेणू।
चहुँ दिशि गोप ग्वाल धेनू, हंसत मृदुमन्द, चांदनी चन्द।
कटत भव फन्द, टेर सुन दीन दुखारी की।। आरती कुंज ...

आरती लक्ष्मीजी की

जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णू धाता।। जय लक्ष्मी . . .
उमा रमा ब्रह्माणी तुम ही जग–माता,
सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता। जय लक्ष्मी ...
दुर्गा रूप निरंजन सुख संपति दाता,
जो कोइ तुमको ध्यावत ऋधि सिधि धन पाता। जय लक्ष्मी ...
तुम पाताल निवासिनि तुम ही शुभदाता,
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि भवनिधि की त्राता। जय लक्ष्मी ...
जिस घर तुम रहतीं तहँ सब सद्गुण आता,
सब संभव हो जाता, मन नहीं घबराता। जय लक्ष्मी ...
तुम बिन यज्ञ न होते वस्त्र न हो पाता,
खान–पान का वैभव सब तुम से आता। जय लक्ष्मी ...
शुभ गुण मन्दिर सुन्दर क्षीरोदधि जाता,
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहिं पाता। जय लक्ष्मी ...
श्रीलक्ष्मीजी की आरती जो कोई नर गाता,
उर आनन्द समाता पाप उतर जाता। जय लक्ष्मी ...

आरती श्रीरामजी की

**हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ
आरती उतारूँ मैं तो तन मन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
कनक सिंहासन राजत जोरी–दसरथ नन्दन जनक किशोरी।
युगल छवी को सदा निहारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
वाम भाग शोभित जग जननी–चरण विराजत हैं सुत अंजनी।
इन चरणों में जीवन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
चरणों से निकली गंगा प्यारी– पावन करती है दुनियाँ सारी।।
इन चरणों को सदा पखारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।
आरति हनुमत के मन भावै–रामकथा नित शिवजी गावै।
मैं सुन सुन निज जनम संवारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।**

आरती अवध बिहारी की

आरती अवध बिहारी की, लखन सिया जनक दुलारी की।
शीश पर क्रीट मुकुट सोहे। चंद्रिका की छवि मन मोहे।।
लखन सेवा बलिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
कपोलन पै अलकैं झलकें। अधर पै बिजली सी चमके।।
छवि कजरारे नयनन की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
अंग सब ज्यों निर्मल नीरा। भरत रिपुदलन महावीरा।।
चरण सेवा धनुधारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।
जिए जुग श्यामलता जोरी। भजो मन सब माया तोरी।।
दरस हित युगल बिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

वंदना

जिस घर में हो आरती, चरण कमल चितलाय। वहाँ प्रभु वासा करें, स्वर्ग लोक से आय।।
कथा सदा होती रहे, सुनो वीर हनुमान। राम लखन सीता सहित, सदा करो कल्यान।।
बार बार वर माँगहुं, राम कृपा कर देहु। जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटे जनि नेहु।।
देवता सब आश्रम गये, शम्भु गये कैलाश। श्रोता–वक्ता जायेंगे, हरि सुमिरन की आस।।
मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर। अस विचार रघुवंश मनि, हरहु विषम भव भीर।।
हम तो कुछ जाने नहीं, तुम जानों रघुनाथ। सेवा पूजा वन्दना, सबहि तुम्हारे हाथ।।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, ग्रहण करो महाराज। कृपा दृष्टि अवलोकिए, शरण पड़े की लाज।।

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्या कुमारी च धीमहि तन्नो दुर्गे प्रचोदयात्।
ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णु प्रचोदयात्।
ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।
ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
ॐ वासुदेवाय विद्महे राधाबल्लभाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्।
ॐ दशरथाय विद्महे सीताबल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
ॐ रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमत प्रचोदयात्।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं। पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं सुरेश्वरः। यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे।

श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री

सूची 1 केवल पाठ हेतु

01.	नारियल– (पानी वाला)	
02.	लाल कपड़ा 1 मीटर	
03.	सुपारी–5	
04.	धूपबत्ती	
05.	कलावा	
06.	रोली	
07.	कपूर (डली का)	
08.	इलायची	10 ग्राम
09.	लौंग	10 ग्राम
10.	देशी घी	250 ग्राम
11.	मिश्री	100 ग्राम
12.	सौंफ	50 ग्राम
13.	काली मिर्च	10 ग्राम
14.	गंगाजल	
15.	फल	5 तरह के
16.	मिष्ठान	
17.	दूर्वा	
18.	तुलसी के पत्ते	
19.	रूई	
20.	पान साबुत	5
21.	फूल हार	7
22.	आम के पत्ते	
23.	कलश	1
24.	थाली	4
25.	लोटा	2
26.	चम्मच	2

सूची 2 यदि पाठ के साथ यज्ञ भी हो

01.	घी	500 ग्राम
02.	हवन सामग्री	1 कि.ग्रा.
03.	काले तिल	50 ग्राम
04.	इन्द्र जौ	25 ग्राम
05.	जौ	50 ग्राम
06.	बेलगिरी	250 ग्राम
07.	अगर	25 ग्राम
08.	तगर	25 ग्राम
09.	नागर मौथा	25 ग्राम
10.	गोला साबुत	1
11.	हवन के लिए लकड़ी ढाई कि.ग्रा. (आम/आक/ढाक की)	
12.	कच्ची खांड	250 ग्राम

अनिष्ट ग्रहों की शान्ति, घर परिवार में अमन चैन तथा जीवन का परम लक्ष्य भगवत्कृपा प्राप्ति हेतु रामायण/सुंदरकाण्ड पाठ के आयोजन हेतु हमें संपर्क कर सकते हैं –

सम्पर्क सूत्र– 0120–3274619 एवं 9811056467

परियोजनाओं का हो रहा विकास 06 वर्षों में रचा इतिहास

औद्योगिक भूखण्डों का आवंटन

प्राधिकरण ने कलस्टर आधारित उद्योगों के विकास हेतु प्रभावी कार्यवाही की है। प्राधिकरण के औद्योगिक सैक्टरों में MSME पार्क, टॉय सिटी एवं हैण्डीक्राफ्ट पार्क एवं अपैरल पार्क का विकास किया गया है। वित्तीय वर्ष 2017 से 1 जुलाई 2023 तक कलस्टर आधारित औद्योगिक पार्कों एवं मिश्रित भू–उपयोग में कुल 2063 औद्योगिक ईकाईयों की स्थापना हेतु भूमि का आवंटन किया गया है। इन उद्योगों के स्थापना से प्राधिकरण क्षेत्र में लगभग रु. 18,225.99 करोड़ रुपये का निवेश प्राप्त होगा तथा 4,51,580 लोगों को रोजगार की प्राप्ति होगी।

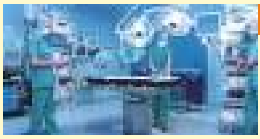

मेडिकल डिवाईस पार्क

भारत सरकार की योजना के अन्तर्गत मेडिकल डिवाईस पार्क की स्थापना यमुना एक्सप्रेस प्राधिकरण द्वारा सैक्टर–28 में की जा रही है। परियोजना की कुल लागत रु. 439.40 करोड़ (भूमि लागत को छोड़कर) है। मेडिकल डिवाईस पॉलसी के अन्तर्गत रु. 100 करोड़ का ग्रान्ट भारत सरकार द्वारा दिया जाना है जिसके सापेक्ष रु. 30 करोड़ प्राप्त हो चुके हैं। मेडिकल डिवाईस पार्क में इकाईयों की स्थापना के लिए भारत सरकार द्वारा सैद्धान्तिक अनुमति में वर्णित विशेष प्रोत्साहन लाभ प्रदान करने हेतु फार्मास्यूटिकल मैन्यूफैक्चरिंग नीति–2018 (यथा संशोधित) के प्रस्तर–12.5 के तहत प्रस्ताव पर मा. मंत्री परिषद द्वारा दिनांक 14.06.2022 को अनुमोदन प्रदान कर दिया गया है। Scheme for promotion of Medical Devices Park के अनुसार मेडिकल डिवाईस पार्क योजना–02 वर्ष में क्रियान्वित की जानी है। मेडिकल डिवाईस पार्क योजना के अन्तर्गत फेज–1 में 37 एवं फेज–2 में 25 भूखण्डों का आवंटन हो चुका है। इस योजना में लगभग 3,800 करोड़ का निवेश प्राप्त होगा साथ ही 15,000 रोजगार का सृजन होगा।

इन्टरनेशनल फिल्म सिटी

इन्टरनेशनल फिल्म सिटी की स्थापना उ.प्र. शासन के निर्देश के क्रम में यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण क्षेत्रान्तर्गत सैक्टर–21 में की जानी प्रस्तावित है जिसकी कार्यवाही गतिमान है

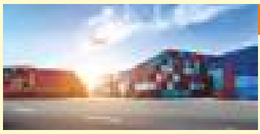

लॉजिस्टिक पार्क

यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण क्षेत्र में टप्पल–बाजना नगरीय केन्द्र के रूप में महायोजना मे उ. प. शासन द्वारा अनुमोदित किया गया है। लॉजिस्टिक पार्क का विकास टप्पल–बाजना नगरीय केन्द्र में प्रथम चरण के रूप में विकसित किया जाना है। Deloitte Touche Tohmatsu India LLP को इस के अध्ययन हेतु परामर्शदाता नियुक्त किया गया है। जेवर एयरपोर्ट की स्थापना के दृष्टिगत लॉजिस्टिक हब की सम्भावित मांग के दृष्टिगत इसका विकास किया जाना है। परामर्शदाता Deloitte द्वारा DPR बनाया जा चुका है जिसे प्राधिकरण बोर्ड में दिनांक 24.08.2022 को फेज–1 (205 एकड़) का अनुमोदन प्रदान किया है इसका विकास पी.पी.पी. मोड पर UP P.P.P. Guidelines 2016 के प्राविधानों के क्रम में किया जायेगा।

हेरीटेज सिटी

राया नगरीय केन्द्र (वृन्दावन) प्राधिकरण की महायोजना में शासन द्वारा अनुमोदित है, जहॉ प्राधिकरण द्वारा हेरीटेज सिटी के रूप में विकास किये जाने की योजना है। इसके अध्ययन हेतु M/s CBRE South Asia Pvt. Ltd. को परामर्शदाता के रूप में चयन किया गया है। ब्रज विकास परिषद के सुझाव पर इसका विकास श्री बांकेबिहारी मंदिर के समीप ग्रीनफील्ड एरिया में किया जाएगा जहॉ पर पूर्व से ही भगवान श्रीकृष्ण से सम्बन्धित कई पौराणिक स्थल मौजूद हैं। इस योजना में यमुना एक्सप्रेसवे से श्री बांकेबिहारी मन्दिर हेतु ग्रीनफील्ड कनेक्टविटी प्रदान की जाएगी साथ ही रिवर फ्रन्ट, योग केन्द्र, प्रार्थना स्थल आदि का भी विकास हेरीटेज सिटी में सम्मिलित है। इसका DPR कंसलटेन्ट द्वारा तैयार किया जा रहा है। DPR के अनुमोदन के उपरान्त विकासकर्त्ता का चयन पी.पी.पी. मोड पर किया जाएगा।

मेट्रो कारीडोर

शासन के निर्देश के क्रम में मेट्रो कारीडोर परियोजना के अन्तर्गत जेवर एयरपोर्ट को दिल्ली एवं आई.जी.आई. एयरपोर्ट से जोड़ने हेतु दिल्ली मेट्रो रेल कारपोरेशन (DMRC) से अध्ययन कराया जा रहा है इसके दो चरण हैं। प्रथम चरण में नॉलेज पार्क स्टेशन (ग्रेटर नौएडा) से जेवर एयरपोर्ट की मेट्रो कनेक्टविटी का अध्ययन DMRC द्वारा करते हुए डी.पी.आर. प्रस्तुत की है। डी.पी.आर. का अनुमोदन प्राधिकरण बोर्ड बैठक दिनांक 24.08.2022 में प्रदान कर दिया गया है। द्वितीय चरण में नॉलेज पार्क स्टेशन से दिल्ली हेतु फिजिबिल्टी स्टडी DMRC द्वारा कर ली गई है। DPR प्राप्त होने पर शासन से अनुमोदन एवं फंडिग पैर्टन के निर्णय हेतु प्रस्ताव प्रेषित किया जाएगा।

नॉयडा इन्टरनेशनल एयरपोर्ट, जेवर

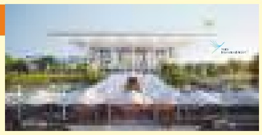

नॉयडा इन्टरनेशनल एयरपोर्ट, जेवर नागरिक उड्डयन विभाग, उ.प्र. शासन की पी.पी.पी. मोड पर आधारित परियोजना है। इसका विकास प्राधिकरण के मास्टर प्लान क्षेत्र इन्टरनेशनल एयरपोर्ट एण्ड एविएशन हब के अन्तर्गत 1334 हेक्टेयर क्षेत्र में जेवर के निकट किया जा रहा है। इस हेतु 1334 हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण किया जा चुका है तथा भारत सरकार की विभिन्न एजेंसियों से सभी प्रकार की एन.ओ.सी. एवं इन्वारयमेंट क्लीरेन्स प्राप्त हो चुका है। ग्लोबल बिडिंग प्रकिया से Zurich Airport International AG का चयन कंसेशनायर/विकासकर्त्ता के रूप में किया गया है। समस्त भूमि का कब्जा विकासकर्त्ता को प्रदान किया जा चुका है तथा विकास हेतु Master Plan एवं Development Plan अनुमोदित किया जा चुका है। वर्तमान में विकासकर्त्ता Yamuna International Airport Pvt. Ltd. जो Zurich Airport International AG की SPV है, के द्वारा Terminal Building, रनवे, ATC Building के निमार्ण कार्य किया जा रहा है। प्रथम चरण में 12 मिलियन यात्रियों के लिए एयरपोर्ट का निर्माण होगा जिसमें रु. 5,730 करोड़ की धनराशि कम्पनी द्वारा व्यय की जाएगी। एयरपोर्ट की स्थापना से औद्योगिक अवस्थपना का संरचनात्मक विकास होगा, जिससे रोजगार के अवसर बढेगें, विनिर्माण एवं निर्यात को प्रोत्साहन मिलेगा तथा हवाई यातायात सुगम होगा साथ ही पर्यटन में उल्लेखनीय वृद्वि होगी।

ग्रामों का सेक्टरों की तर्ज पर स्मार्ट विलेज के रूप में विकास

प्रथम फेज में प्राधिकरण द्वारा अधिग्रहित क्षेत्र के कुल 29 औद्योगिक नगरों को स्मार्ट विलेज के रुप में विकसित किया जाना प्रस्तावित है। 02 औद्योगिक नगरों निलौनी एवं रामपुर बांगर का कार्य पूर्ण करा दिया गया है। 06 औद्योगिक नगरों (मिर्जापुर, डूँगरपुर रीलका, अच्छेजा बुजुर्ग, सलारपुर, रूस्तमपुर, मूंजखेडा एवं चपरगढ़ माजरा–मिर्जापुर) में कुल रु. 5,209.27 लाख के विकास कार्य प्रगति में हैं। मुरादगढ़ी व गुनपुरा के कार्य की निविदा स्वीकृति हो चुकी है, जिसके सिविल कार्य की लागत रु. 7,25.79 लाख है। 07 औद्योगिक नगरों के प्राक्कलन तैयार कर प्रक्रियाधीन है। शेष 12 औद्योगिक नगरों के प्राक्कलन तैयार किया जाना प्रस्तावित है।

प्राधिकरण के 96 औद्योगिक नगरी क्षेत्रों के अन्तर्गत स्कूलों के कायाकल्प के कार्य

आपरेशन कायाकल्प के अंतर्गत परिषदीय विद्यालयों को अवस्थापना सुविधाओं से संतृप्त कराये जाने हेतु बेसिक शिक्षा अधिकारी द्वारा कराये गये सर्वे में 14 मानकों के अन्तर्गत 89 प्राईमरी स्कूल तथा 34 जूनियर हाई स्कूल में कार्य प्रगति में है।

अभ्युदय कम्पोजित विद्यालय

कृपया उपरोक्त विषयक कार्य हेतु जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी गौतमबुद्धनगर के पत्रांक–एस.एस.ए./निर्माण/13459–69/2022–23, दिनांक 27.12.2022 द्वारा प्राधिकरण सीमा के अन्तर्गत आने वाले 15 विद्यालयों की सूची तैयार कर प्रस्तुत की गयी है, जिसमें नयी शिक्षा नीति–2020 के अनुरूप "At Grade Learning" की अवधारणा के आधार पर उक्त चिन्हित विद्यालयों में पढ रहें बच्चों को विश्वस्तरीय एवं आधुनिक अवस्थापना सुविधाओं के साथ बेहतर शैक्षणिक परिवेश में शिक्षा प्रदान करने के उददेश्य से परिषदीय कम्पोजिट विद्यालयों को अभ्युदय कम्पोजिट विद्यालय के रूप में उच्चीकृत किये जाने हेतु प्रस्ताव प्रेषित किया गया है। इसके अन्तर्गत विद्यालय में 05 कक्षों से युक्त 01 एकीकृत भवन का निर्माण किया जाएगा, जहॉ निम्नलिखित आधुनिक अवस्थापना सुविधाओं को विकसित किया जाएगा :

• Library with dedicated reading Corner • Computer lab with language lab solution • Modular composite (Math & Science) laboratory • High-tech Smart class by interactive display smart board with virtual class room • Staff room with attached toilet

अभ्युदय कम्पोजित विद्यालय राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप डिजिटल शिक्षा पर विशेष ध्यान देने के उददेश्य से बच्चों को डिजिटल एजुकेशन प्लेटफार्म एवं डिजिटल लर्निंग के माध्यम से गुणवत्तापरख शिक्षा उपलब्ध करानें के लिए आधुनिक स्मार्ट क्लास शैटअप को भी तैयार किया जायेगा। प्राधिकरण द्वारा कुल 12 विद्यालयों को दो चरणों में अभ्युदय कम्पोजित विद्यालयों के रूप में विकसित किये जाने की कार्यवाही गतिमान है।

Yamuna Expressway Industrial Development Authority
YEIDA
FUTURE IS HERE
यमुना एक्सप्रेसवे औद्योगिक विकास प्राधिकरण
प्रथम तल, कॉमर्शियल कॉम्पलेक्स, पी–2, सैक्टर ओमेगा–1, ग्रेटर नोएडा 201308, जनपद–गौतमबुद्ध नगर
Tollfree No. : 180018 08296 वेबसाईट : www.yamunaexpresswayauthority.com

श्री राम जय राम जय जय राम

समिति के कार्यक्रमों की झलकियां

Ideal atmosphere for multifacted growth

Come... experience it

Not just industry. Also commerce, institutions, living, education, sports, health, leisure, retail. Even the latest culturaland arts centres. In Greater Noida, it's all world class. And within reach, Enveloped in an atmosphere that's pollution free- amid growing greeners. Underlining holistic standards of living.

Facets of Greater Noida

Excellent Connectivity: • In proximity of two national and two state highways • Approachable from two 6-lane expressway • Intersection of Eastern and Western Freight Corridors • 20mins from proposed Jewar International Airport • Two metro lines will connect the city to Delhi and IGI Airport • 50 mins from Indira Gandhi International Airport

Meticulously planned with a host of international level facilities: • Weil-laid sewerage system • Drainage & rainwater harvesting • Water supply network • 24x7 uninterrupted power supply • Convergence network Plan Solid waste management plan

Equipped with robust and modern infrastructure for urban and social sector: • Ecologically Sensitive Areas • Spine of 130 mt. wide road • Ground Water Recharge Areas • Interlinked Greens • Energy efficient design & waste treatment • Solid Waste Management

Ease of doing business with transparency and efficiency: • Nivesh Mitra - A friendly single-window centralised portal & mobile application for investment: **www.niveshmitra.up.nic.in**

Greater Noida has become a showpiece of urban development with well-planned commercial, institutional, industrial residential and other areas of gainful living, employment and investment. Investors in any of a multitude of options have easy access to the Greater Noida Industrial Development Authority and will find that the terms of business are most attractive. Thus, this fast-developing city with a pollution-free environment has become a magnet for those seeking better living, working and investment opportunities.

Greater Noida Industrial Development Authority

Plot No. 01, Knowledge Park-04, Greater Noida 201308, Dist. Gautam Budh Nagar., U.P.

Helpline Center No.: 0120-2336046, 2336047, 2336048, 2336049

Ph.: 0120-2336030-33, E-mail: authority@gnida.in, Website: www.greaternoidaauthority.in

Follow us on

/OfficialGNIDA